MLIS-02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

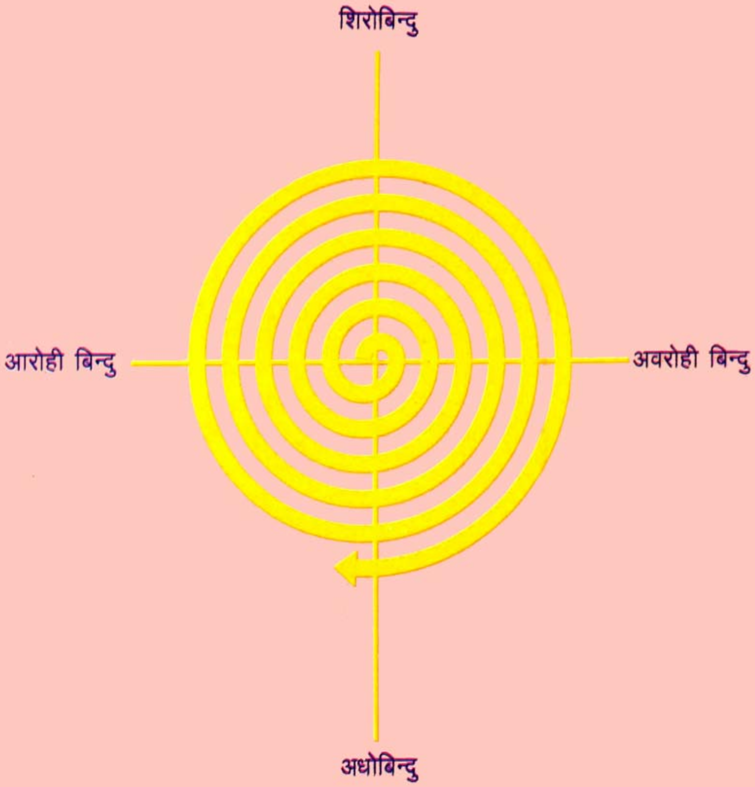

ज्ञान का संगठन एवं शोध पद्धति

MLIS-02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

ज्ञान का संगठन एवं शोध पद्धति

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक / समन्वयक एवं सदस्य

संयोजक एवं समन्वयक

डॉ. एच.बी. नन्दवाना

विभागाध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

1. **डॉ. एम. ईश्वर भट्ट, पुस्तकालयाध्यक्ष**
   बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एण्ड साइन्स,
   पिलानी, राजस्थान
2. **प्रो. जे.सी. बिनवाल, विभागाध्यक्ष (से.नि.),**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग
   नोर्थ-ईस्टर्न-हिल विश्वविद्यालय, शिलांग
3. **प्रो. एस.बी. घोष, विभागाध्यक्ष (से.नि.)**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
4. **डॉ. दिनेश कुमार गुप्ता, सहआचार्य**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
5. **प्रो. एम.पी. सतीजा, विभागाध्यक्ष**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग
   गुरुनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर, पंजाब
6. **डॉ. पाण्डेय एस.के. शर्मा**
   मुख्य पुस्तकालय एवं सूचना अधिकारी (से.नि.)
   विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली
7. **डॉ. जे.पी. सिंह, अपर निदेशक**
   योजना एवं समन्वय निदेशालय
   रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन, नई दिल्ली
8. **प्रो. सी.पी. वशिष्ठ विभागाध्यक्ष (से.नि.)**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सम्पादन एवं पाठ लेखन

सम्पादक

प्रो. जे.एन. गौतम, विभागाध्यक्ष

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला

जीवजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, मध्य प्रदेश

लेखक

1. **प्रो. एम.पी. सतीजा, विभागाध्यक्ष**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग
   गुरुनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर, पंजाब
2. **प्रो. एस. कुमार, विभागाध्यक्ष**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला
   विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मध्य प्रदेश
3. **डॉ. सोनल सिंह, सहआचार्य**
   पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला
   विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मध्य प्रदेश
4. **डॉ. अरविन्द शर्मा, सहायक प्राध्यापक**
   एम.एल.बी. कॉलेज ऑफ एक्सीलेन्स
   ग्वालियर, मध्यप्रदेश
5. **डॉ. अनिल शुक्ला, सहआचार्य**
   शिक्षा विभाग,लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

अनुवादक

डॉ. मनोज के. जोशी, वरिष्ठ व्याख्याता

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच	**प्रो. एम.के. घड़ोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी,

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : जनवरी 2008 पुनः मुद्रण जनवरी 2011 ISBN-13/978-81-8496-054-9

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

ज्ञान का संगठन एवं शोध पद्धति

:: विषय सूची ::

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई -1	ज्ञान जगत के उद्देश्य एवं विशेषताएँ	8–20
इकाई -2	विषय निर्माण की विधियाँ	21–36
इकाई -3	विषय-उनके प्रकार एवं वर्धन	37–54
इकाई -4	विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत का चित्रण	55–74
इकाई -5	चिंतन की विधियाँ	75–87
इकाई -6	अनुसंधान का अर्थ, अनुसंधान समस्या और अनुसंधान प्रक्रिया	88–105
इकाई -7	अनुसंधान विधियाँ	106–128
इकाई -8	शोध अभिकल्प	129–139
इकाई -9	उपकरण एवं प्रविधियाँ	140–161
इकाई -10	आकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन	162–174
इकाई -11	ग्रन्थमिति	175–190
इकाई -12	शोध प्रतिवेदन लेखन	191–204
इकाई -13	अनुसंधान मे सॉफ्टवेयर पैकेजों का अनुप्रयोग	205–221

पाठ्य परिचय

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान स्नातकोत्तर कार्यक्रम का दूसरा पाठ्यक्रम **"ज्ञान का संगठन एवं शोध पद्धति"** है। इस पाठ्यक्रम में कुल 13 इकाईयाँ है,जिनका परिचय निम्न प्रकार है।

इकाई-1 ज्ञान जगत के उद्देश्य एवं विशेषताएँ : इस इकाई में ज्ञान जगत के उद्देश्यों एवं विशेषताओं की विस्तार से चर्चा की गई है । ज्ञान जगत की अनन्त, गतिशील, निरन्तर, बहु-आयामी एवं स्वाधीनता आदि विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है।

इकाई-2 विषय निर्माण की विधियाँ : इस इकाई में विषय निर्माण की विधियों की जानकारी दी गई है। सरल, यौगिक एवं जटिल विषयों के निर्माण की विधियों से परिचय करवाया गया है।

इकाई-3 विषय - उनके प्रकार एवं वर्धन : इस इकाई में ज्ञान का विभाजन- अनुशासन,कोलन क्लासीफिकेशन में ज्ञान जगत का विभाजन,सामाजिक ज्ञान शास्त्र,ज्ञान निर्माण की तीन विधियाँ एवं प्रवृतियों की विस्तार से चर्चा की गई है।

इकाई-4 विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत का चित्रण : इस इकाई में ज्ञान की विशेषताएँ,पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु ज्ञान के अध्ययन का महत्व, ज्ञानवर्धन की विधियों पर प्रकाश डाला गया है साथ ही कुछ सामान्य पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत के चित्रण की भी विस्तार से चर्चा की गई है।

इकाई -5 चिन्तन की विधियाँ : इस इकाई में चिन्तन की परिभाषा, मस्तिष्क प्रकोष्ठ एवं चिन्तन की प्रमुख विधियाँ-प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि, प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि एवं योगदान पर भी प्रकाश डाला गया है।

इकाई-6 अनुसंधान का अर्थ, अनुसंधान समस्या और अनुसंधान प्रक्रिया : इस इकाई में अनुसंधान की परिभाषा, उद्देश्य, लाभ, प्रकार, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान की आवश्यकता, अनुसंधान समस्या एवं अनुसंधान प्रक्रिया के चरणों की विस्तार से जानकारी दी गई है।

इकाई -7 अनुसंधान विधियाँ : इस इकाई में एतिहासिक अनुसंधान विधि,वर्णात्मक अनुसंधान विधि एवं परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि पर प्रकाश डाला गया है।

इकाई-8 शोध अभिकल्प : इस इकाई में शोध अभिकल्प से आशय, परिभाषा, आवश्यकता, विशेषताएँ, उद्देश्य एवं शोध अभिकल्प के प्रकार की जानकारी दी गई है।

इकाई-9 उपकरण एवं प्रविधियाँ : इस इकाई में प्रश्नावली,अनुसूची,निर्धारण मापनी ,अवलोचन,साक्षात्कार एवं अभिलेखों के प्रकार एवं उपयोग पर प्रकाश डाला गया है।

इकाई-10 आँकड़ो का विश्लेषण एवं निर्वाचन : इस इकाई में आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वाचन हेतु अपेक्षित कार्य, विश्लेषण के प्रकार,सांख्यिकी विश्लेषण के अन्तर्गत मापों के प्रकार,आँकड़ों का बिन्दु रेखीय प्रदर्शन की विधियों की चर्चा की गई है साथ ही वर्णात्मक सांख्यिकी तथा अनुमानपरक सांख्यिकी द्वारा आँकड़ों के विश्लेषण पर भी प्रकाश डाला गया है।

इकाई-11 ग्रन्थमिति : इस इकाई में ग्रन्थमिति का अद्भव, परिभाषा, उद्देश्य, प्रकार, आवश्यकता, उपयोगिता, प्रयोग, समस्याओं एवं सीमाओं की चर्चा की गई है। ग्रंथमिति के सूत्र एवं उनके प्रयोग से अवगत करवाते हुए अन्य मितियों पर भी प्रकाश डाला गया है।

इकाई-12 शोध परिवेदन लेखन : इस इकाई में शोध प्रबंध के अवयव -प्रारम्भिक भाग, प्रतिवेदन का मूल भाग एवं सन्दर्भ भाग की जानकारी देते हुए शोध प्रबन्ध प्रस्तुति के तहत वैज्ञानिक लेखन की विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

इकाई-13 अनुसंधान में सॉफ्टवेयर पैकेजों का अनुप्रयोग : इस इकाई में सांख्यिकी क्या है? सांख्यिकीय डेटा के प्रकार,विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर पैकेजेस एवं सांख्यिकीय विश्लेषण के लिये अन्य सॉफ्टवेयर पैकेजेस की विस्तार से जानकारी दी गई है।

इकाई- 1

ज्ञान जगत के उद्देश्य एवं विशेषताएँ

Objectives and Attributes of Universe of Knowledge

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 ज्ञान जगत के उद्देश्य

1.3 ज्ञान जगत की विशेषताएँ

1.3.1 गतिशील

1.3.2 अनन्त

1.3.3 निरन्तर

1.3.4 बहु आयामी

1.3.5 सम्बद्धता (सुसंगतता)

1.3.6 स्वाधीनता

1.3.7 प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार एक

1.3.8 प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार दो

1.3.9 प्रगतिशील व्यवस्थापन

1.3.10 समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन

1.4 सारांश

1.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.6 प्रमुख शब्द

1.7 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रन्थसूची

1.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

1. ज्ञान जगत के विस्तृत स्वरूप की जानकारी से अवगत करवाना ।
2. ज्ञान जगत के उद्देश्यों से अवगत करवाना ।
3. ज्ञान जगत की विशेषताओं की चर्चा करना ।
4. ज्ञान' जगत के अनन्त और गतिशील स्वरूप को स्पष्ट करना ।
5. जगत की निरन्तर और बहु आयामी वृद्धि की जानकारी देना ।
6. ज्ञान जगत के विभिन्न अवयवों के सम्बद्ध व स्वाधीन स्वरूप को स्पष्ट करना ।
7. ज्ञान जगत के पृथक्करण और व्यवस्थापन का अध्ययन करवाना ।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

सृष्टि के सभी चराचरों में मानव सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि इसमें बुद्धि और चेतना का अद्भुत संगम है । मनुष्य की जिज्ञासु प्रवृत्ति और चिंतन क्षमता के कारण उसके मस्तिष्क में नित नए विचार उत्पन्न होते हैं । इन मानवीय विचारों का समग्र रूप ही ज्ञान है । उत्सुकता एवं जिज्ञासा के कारण मनुष्य के विचारों का निरन्तर विकास होता है और उसके साथ-साथ ज्ञान का विस्तार होता चला जाता है? मानव के विश्वास, आत्म विश्वास, समझ और बुद्धि तत्वों का सम्पूर्ण योग ही सुव्यवस्थित ज्ञान कहलाता है ।

वास्तव में पृथ्वी पर मनुष्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ही ज्ञान का इतिहास है । ज्ञान व मनुष्य एक दूसरे के पूरक हैं । मनुष्य के बगैर ज्ञान अर्थहीन है । मनुष्य ज्ञानार्जन करता है इसलिए वह जीवियों में सर्वश्रेष्ठ है । मनुष्य द्वारा प्राप्त किए गए समस्त मूलभूत सत्य, तथ्य, सिद्धांत व विश्वास एकत्रित रूप में ज्ञान कहलाते हैं । मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु है । वह सदैव नवीन विचारों व तथ्यों से अवगत होकर उन पर विवेकपूर्ण चिन्तन करता है । यह मानव विवेक का ही प्रतिफल है कि आज सम्पूर्ण एकत्रित सूचना, जान के रूप में ज्ञात है । मानव की चिन्तनशील जिज्ञासा, सीखने की प्रवृति ज्ञान का संग्रह एवं संगठन तथा प्रचार आदि गुण मनुष्य को अन्य जीवों से पृथक करते हैं । अनुभूमि, बोध, अनुभव, तर्क आदि के द्वारा ही मनुष्य में ज्ञान की उत्पत्ति होती है । जब मनुष्य अर्थात् जिज्ञासु, वस्तु एवं विचारों अर्थात् ज्ञातव्य से परिचित हो जाता है तो ज्ञान की उत्पत्ति होती है । जिज्ञासु के बगैर ज्ञान की कल्पना निरर्थक है अत: ज्ञान के व्यापक क्षेत्र में सभी ज्ञात तथ्यों, जिज्ञासाओं और जानने की सभी प्रक्रियाओं को रखा जाता है । जब मनुष्य किसी वस्तु अथवा विचार को स्वीकार कर लेता है तब यह कहा जाता है कि ज्ञान का सृजन हुआ है ।

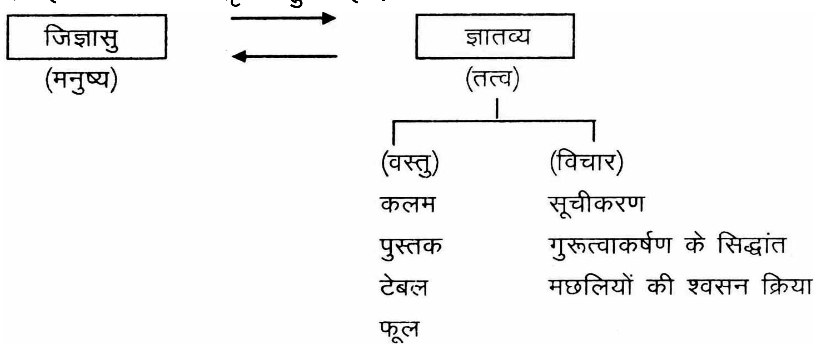

जानने की सबसे सरल प्रक्रिया है "प्राथमिक अनुभूति" अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ज्ञातव्य का परिचय । नित नवीन ज्ञातव्यों से परिचित होने पर मनुष्य के ज्ञान में वृद्धि होती जाती है ।

मनुष्य संवेदनात्मक अनुभवों के द्वारा ज्ञान प्राप्त. करता है । ये संवेदनात्मक अनुभव मनुष्य को ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त होते हैं । मनुष्य के पास पाँच ज्ञानेन्द्रियां हैं जिनकी सहायता से वह बाहरी दुनिया की जानकारी प्राप्त कर सकता है । मानव में देखने की शक्ति, सुनने की शक्ति, सूंघने की शक्ति, स्पर्श करने की शक्ति व स्वाद की क्षमता होती है । इन शक्तियों से सम्बन्धित अंग क्रमश: आँख, कान, नाक, त्वचा व जिव्हा होते हैं । इन अंगों के माध्यम से मनुष्य संवेदनात्मक अनुभव प्राप्त करता है, जो मस्तिष्क में संगृहीत होते चले जाते हैं । जबकि प्राथमिक अनुभूति में तर्क का समावेश

हो जाता है अर्थात् जब मनुष्य प्रयोगों एवं विश्लेषण के आधार पर किसी विचार का अध्ययन कर निष्कर्ष पर पहुँचता है, तब इसे सुव्यवस्थित शान कहते हैं ।

भविष्य के लिए एकत्रित एवं सुरक्षित सम्पूर्ण सूचना ही ज्ञान है । मनुष्य एक बुद्धिमान प्राणी है । मनुष्य में सोचने, समझने एवं तर्क करने की क्षमता होती है इसलिये ज्ञान मनुष्य की बौद्धिक प्राप्ति है । ज्ञान मानव मस्तिष्क की ही देन है । मस्तिष्क ज्ञान को सृजित करने का प्रमुख अंग है । यह संवेदनशील भी होता है और प्रेरक भी । मस्तिष्क मानव जीवन के समस्त अनुभवों को अंकित करता है तथा आवश्यकतानुसार उनका प्रति स्मरण भी करता है । मस्तिष्क जीवन के विभिन्न प्रभावों को निद्रित रूप से ग्रहण करने के साथ ही साथ उन नवीन तथ्यों को भी जन्म देता है जो पूर्व में कहीं भी विद्यमान नहीं हैं । मानव मस्तिष्क में कम्प्यूटर की भांति असंख्य सूचनाएं संगृहीत रहती हैं । दैनिक जीवन के अनुभव भी मस्तिष्क में सुरक्षित हो जाते हैं । इन समस्त सूचनाओं का स्वत: ही वर्गीकरण और अनुक्रमणीकरण हो जाता है । इस सूचना संग्रह से वांछित व आवश्यक सूचना की पुर्नप्राप्ति भी सम्भव है । मानव मस्तिष्क संदेशों का प्राप्तकर्ता और भण्डार ग्रह है ।

मनुष्य सदैव विचारशील रहकर नवीन विचारों को जन्म देता है जिससे ज्ञान भी द्रुतगति से वृद्धि करता जाता है । इस प्रकार बौद्धिक शक्ति पर आधारित ज्ञान की प्रतिक्षण वृद्धि के साथ-साथ विश्व भी प्रतिक्षण अधिक आधुनिक व अधिक सुविधापूर्ण होता जाता है । क्योंकि मनुष्य शान का सृजन, संग्रह व संरक्षण कर शान का अनुप्रयोग करता है ताकि आधुनिक सामाजिक जीवन को अधिक उन्नत व सुविधापूर्ण बनाया जा सके । इस इकाई में ज्ञान जगत के उद्देश्यों एवं विशेषताओं की विस्तार से चर्चा की गयी है ।

1.2 ज्ञान जगत के उद्देश्य (Objectives of Universe of Knowledge)

जगत में ज्ञात व अज्ञात दोनों का ही समावेश होता है । जगत का वह भाग जो मनुष्य को ज्ञात है "ज्ञान जगत" कहलाता है ।

एक निश्चित समय तक संग्रहीत समस्त विचारों का समग्र रूप ही जगत है । ज्ञान जगत मानवीय विचारों, मानवीय आवश्यकताओं और मानव उपलब्धियों का ही प्रतिफल है ।

मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं के समाधान की खोज अनुसंधान द्वारा की जाती है तथा ज्ञान जगत के द्वारा अनुसंधान कार्य हेतु आधारभूत सामग्री उपलब्ध हो जाती है । पूर्व ज्ञान अथवा भूतकाल के आधार पर मनुष्य वर्तमान परिस्थितियों का अध्ययन करता है एवं भविष्य में निर्मित होने वाली परिस्थितियों का अनुमान करता है ।

ज्ञान जगत का उद्देश्य ज्ञान के सृजन में सहायक होना तथा ज्ञान के अनुप्रयोग से आधुनिक सामाजिक जीवन को अधिक उत्तम बनाने के बेहतर विकल्पों की खोज में सहायता करना है । इस प्रकार ज्ञान राष्ट्रीय विकास का एक अनिवार्य स्रोत है । राष्ट्र की सामाजिक व आर्थिक प्रगति का प्राण बिन्दु भी ज्ञान ही है । अपनी जिज्ञासु प्रवर्तित के फलस्वरूप मानव अज्ञात तथ्यों को जानकर अपने ज्ञान-भण्डार की वृद्धि करता है जिससे उसके मानसिक स्तर में भी वृद्धि होती है । समूचा ज्ञान मानव की अनुभूति, बुद्धि व अन्तर ज्ञान की देन है जिसके आधार पर मनुष्य द्वारा फलदायी निर्णय लिए जा सकते हैं एवं उचित समाधानों की खोज की जा सकती है ।

ज्ञान जगत से मानव के इतिहास की जानकारी प्राप्त हो जाती है । मानव सभ्यता का विकास ही ज्ञान जगत का विकास है । ज्ञान जगत से ही विषय जगत की उत्पत्ति होती है जिसमें विचारों

को संगठित और सुव्यवस्थित रूप से संचित किया जाता है ताकि विचारधाराओं और अवधारणाओं को सुव्यवस्थित और क्रमबद्ध स्वरूप प्रदान किया जा सके ।

ज्ञान जगत को पुस्तकालयों में संगृहीत एवं संगठित कर उपयोगकर्ताओं को उपलब्ध करवाते हैं, ताकि ज्ञान प्राप्त करने वाला ज्ञान से वंचित न रह जाये । पुस्तकालय सेवाओं की सफलता हेतु पुस्तकालय व्यावसायियों को ज्ञान जगत की संरचना, स्वरूप, विशेषताओं आदि का बेहतर ज्ञान होना अति आवश्यक है ।

1.3 ज्ञान जगत की विशेषताएँ (Attributes of Universe Knowledge)

मनुष्य कुछ निश्चित दिशाओं में विचार कर ज्ञान की प्राप्ति करता है । मनुष्य प्रकृति, स्वयं व समाज का अध्ययन व परीक्षण करता है । मनुष्य द्वारा प्रकृति के अध्ययन से 'प्राकृतिक विज्ञान' स्वयं के अध्ययन से 'मानविकी' तथा समाज के अध्ययन से 'सामाजिक विज्ञान' विषय क्षेत्र विकसित हुये । सभी सुनिश्चित विचारों की सुव्यवस्थित इकाइयाँ अर्थात् विषय मिलकर ही विषय जगत का निर्माण करते

मनुष्य + प्रकृति = प्राकृतिक विज्ञान

मनुष्य + मनुष्य = मानविकी

मनुष्य + समाज = सामाजिक विज्ञान

जैसे-जैसे विचार जगत में वृद्धि होती है, विषय जगत में भी वृद्धि होती है । अर्थात् ज्ञान जगत एवं विषय जगत एक ही हैं । जब ज्ञान जगत को समान विचारों वाले अवयवों में विभाजित करते हैं तो इसे विषय जगत कहते हैं । सम्पूर्ण विषय जगत अपने समग्र स्वरूप में ज्ञान जगत कहलाता है । ज्ञान अर्थात् समस्त विचार और विषय अर्थात् सुनिश्चित विचारों की एक इकाई । सुनिश्चित विचारों की विभिन्न इकाईयाँ अर्थात् विषय जगत और विभिन्न इकाईयों का एकात्मक स्वरूप अर्थात् ज्ञान । मनुष्य द्वारा प्राप्त किए गए समस्त मूलभूत सत्य, तथ्य, सिद्धांत व विश्वास एकत्रित रूप में ज्ञान कहलाते हैं । मनुष्य अपने अनुभवों से सीख लेने वाला बौद्धिक प्राणी है । आज मनुष्य ज्ञानार्जन कर अपनी तर्कशक्ति से सर्वश्रेष्ठ बन गया है । आज मनुष्य ज्ञान को प्राप्त करता है, ज्ञान का संचार करता है तथा ज्ञान का प्रयोग करता है । मनुष्य द्वारा प्रतिपादित विचारों का योग ही ज्ञान है । मनुष्य में निम्नलिखित तीन प्रमुख विशेषताएँ होती है जिनके कारण मनुष्य सदैव अपने ज्ञान के क्षेत्र को विकसित करता रहता है ।

(अ) दीर्घायु जीवन,

(ब) समाज में एक परिवार में तीन पीढियों तक निवास करना, तथा

(स) तर्क एवं विश्लेषण की क्षमता ।

मानव मस्तिष्क, ज्ञान का प्रमुख यंत्र है, जहाँ निरन्तर चिंतन से विचार जन्म लेते हैं । ये विचार जगत ही ज्ञान है । ज्ञान जगत अर्थात् जगत का वह भाग जो मनुष्य को ज्ञात है जबकि जगत में ज्ञात व अज्ञात दोनों का ही समावेश हैं । भविष्य में मानव की विचारशीलता, कल्पनाशीलता और तर्क क्षमता के आधार पर अशांत जगत के विभिन्न तथ्य ज्ञात होकर ज्ञान जगत के क्षेत्र में वृद्धि करते रहेंगे । इस प्रकार ज्ञान जगत में ज्ञात व भविष्य में ज्ञात होने वाले समस्त विचारों को सम्मिलित माना जाता है । मानव मस्तिष्क में जन्म लेने वाले सूक्ष्म विचार पर चिन्तन-मनन, तर्क, प्रयोग के

द्वारा विश्लेषण कर निष्कर्षों की प्राप्ति की जाती है । इस प्रकार सूक्ष्म विचार का परिवर्तन वृहद् विचार में हो जाता है, समान विचारों के आधार पर विभिन्न विषयों का निर्माण होता है और ये सभी विषय मिलकर विषय जगत का निर्माण करते हैं । सम्पूर्ण विषय जगत का एकात्मक स्वरूप ही ज्ञान जगत है ।

सुनिश्चित विचारों की सुव्यवस्थित इकाईयों के आधार पर ज्ञान जगत इन प्रमुख विषय वर्गो अर्थात् विज्ञान, मानविकी और समाज विज्ञान में विभाजित है । समान विशेषताओं के आधार पर तीनों श्रेणियाँ पुन: अन्य विषयों में विभाजित हैं । इस प्रकार, विचार जगत से विषय जगत अर्थात् ज्ञान जगत की वृद्धि होती है । एक शिक्षक का संबंध मात्र अपने विशिष्ट क्षेत्र से ही होता है, जबकि एक) पुस्तकालयाध्यक्ष का सम्बन्ध सम्पूर्ण ज्ञान जगत से होता है । पुस्तकालयाध्यक्ष को ज्ञान जगत का ज्ञाता कहा जाता है । ज्ञान जगत की विशेषताओं से परिचित होकर पुस्तकालयाध्यक्ष ज्ञान जगत को समुचित व्यवस्थापन प्रदान करने में सक्षम हो पाते हैं तथा ज्ञान की अपार वृद्धि के बावजूद भी इसे एक रेखीय क्रम में व्यवस्थित कर पाते हैं । ज्ञान जगत कभी भी स्थिर नहीं होता है । इसके विकास की गति एवं रूप हमेशा परिर्वतनशील होते हैं । पुस्तकालयाध्यक्ष का कार्य ज्ञान जगत को अधिकाधिक उपयोगी बनाना है । इस प्रकार, यह पुस्तकालयाध्यक्ष का शैक्षणिक दायित्व भी हो जाता है कि वह ज्ञान जगत की विशेषताओं को जाने व समझे । ज्ञान जगत की अनेक विशेषताएँ हैं । इन विशेषताओं को भलीभांति समझ लेने पर अज्ञात ज्ञान के सहायक क्रम में उचित व्यवस्थापन को लेकर आने वाली समस्याओं को दूर किया जा सकता है । अत: ज्ञान जगत की विशेषताओं का अध्ययन पुस्तकालयाध्यक्ष के लिए अत्यंत उपयोगी है । ज्ञान जगत के सुव्यवस्थित व्यवस्थापन से पुस्तकालय विज्ञान के पांच सूत्रों की संतुष्टि होती है; ग्रंथालय के उपयोगकर्ताओं में निरन्तर वृद्धि होती है तथा पुस्तकालय को समाज का बौद्धिक उन्नयन करने वाली जीवन्त संस्था का दर्जा प्राप्त होता है । ज्ञान जगत की अनेक विशेषताएँ हैं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं :

1. ज्ञान जगत गतिशील है ।
2. ज्ञान जगत अनन्त है ।
3. ज्ञान जगत निरन्तर है ।
4. ज्ञान जगत बहु आयामी है ।
5. ज्ञान जगत अन्तर्सम्बन्धित है ।
6. ज्ञान जगत स्वाधीन है ।
7. ज्ञान जगत प्रगतिशील पृथक्करण - 1 होता है ।
8. ज्ञान जगत प्रगतिशील पृथक्करण - 2 होता है ।
9. ज्ञान जगत में प्रगतिशील व्यवस्थापन होता है ।
10. ज्ञान जगत में समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन होता है ।

उपरोक्त विशेषताओं के गहन अध्ययन से अपार ज्ञान का उचित व्यवस्थापन कर उपयोगकर्ताओं को समुचित ज्ञान सेवायें यथासमय प्रदान की जा सकती हैं । विषय -जगत में निरन्तर परिवर्तनों के कारण अज्ञात तथ्यों का समावेश भी निरन्तर होता रहता है । पुस्तकालयाध्यक्ष ज्ञात, ज्ञान का व्यवस्थापन तो करता ही है साथ ही भविष्य में ज्ञात होने वाले ज्ञान के कारण उत्पन्न होने वाली समस्याओं का भी सामना करता है । बहु पक्षीय और जटिल ज्ञान जगत के लिए एक उत्तम

वर्गीकरण पद्वति की अनिवार्यता सतत् बनी रहती है जिसकी सहायता से ज्ञान जगत का समुचित व सहायक क्रम में व्यवस्थापन कर अधिकांश पाठकों को संतुष्टि प्रदान की जा सके । ज्ञान जगत की विशेषताओं से परिचित होना पुस्तकालयाध्यक्ष और वर्गाकार के लिए सामान्य रूप से और वर्गाकार्य के लिए विशेष रूप से आवश्यक है । ज्ञान जगत की विशेषताओं के आधार पर वर्गाकार द्वारा एक सही व परिशुद्ध वर्गीकरण पद्धति का निर्माण तथा पूर्व से ही विद्यमान वर्गीकरण पद्वति का सुधार किया जा सकता है । इसी प्रकार, वर्गाकार भी ज्ञान जगत की विशेषताओं से परिचित होने पर एक उत्तम वर्गीकरण पद्धति का चयन कर सकता है तथा आवश्यकतानुसार वर्तमान पद्धति में भी रूपान्तरण करने में सक्षमता प्राप्त कर सकता है । हम इन विशेषताओं का विस्तारपूर्वक अध्ययन निम्नानुसार करेंगे ।

1.3.1 गतिशील (Dynamic)

मनुष्य की चिन्तनशील से विचार जन्म लेते हैं । चिन्तन एक असीमित व निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो निरंतर विचारों को जन्म देती है । इन विचारों का विकसित स्वरूप विषय है और समस्त विषयों को समग्र रूप में ज्ञान कहते हैं । अर्थात् ज्ञान को 'विचार जगत' भी कहा जा सकता है । ज्ञान विचारों का गुणनफल है । विषय, ज्ञान का ही एक भाग है । जिसमें समान सुव्यवस्थित विचार रखे जाते हैं जिनकी सीमा, क्षेत्र, विस्तार व गहनता भी सुनिश्चित होती है । विषय जगत के निरन्तर विकास व गतिशीलता के फलस्वरूप सूक्ष्म एवं नवीन विचार उत्पन्न होते रहते हैं । ये सूक्ष्म विचार बाद में वृहद् विचारों का रूप ले लेते हैं । अत: सूक्ष्म व वृहद् विचारों से मिलकर विषय जगत तथा प्रायोगिक और सैद्धांतिक विषयों से मिलकर ज्ञान जगत की रचना होती है ।

प्रत्येक मौलिक विचार एक नए विचार को जन्म देता है । मानव जीवन की समस्याओं के समाधान की खोज हेतु किए जाने वाले अनुसंधान कार्यो का परिणाम भी नवीन विचारों में वृद्धि करता है । नवीन विचारों के विकास की गति अत्यंत तीव्र होने के कारण ज्ञान का विकास भी तीव्र गति से हो रहा है । जनसंख्या दबाव के फलस्वरूप प्राकृतिक स्रोतों का विकल्प शोध कार्य से खोजा जा रहा है । नित नई सामाजिक समस्याएं शोध कार्य को गति प्रदान कर रही हैं । इस प्रकार, सम्पूर्ण ज्ञान जगत अत्यंत गतिशील होकर निरन्तर वृद्धि कर रहा है । मानव जीवन को आरामदायक बनाने के उद्देश्य से नवीन आविष्कारों में भी तीव्र गति से वृद्धि हो रही है ।

शोधकार्य में वृद्धि के साथ-साथ शोधकर्ताओं की भी बाढ़ सी आ गई है । आज विश्व के अधिकांश देशों में लाखों व्यक्ति शोधकार्य में व्यस्त हैं । तीव्र गति से चल रहे अनुसंधानों के परिणाम प्रकाशित होने के साथ-साथ प्रकाशित साहित्य में भी तीव्र गति से वृद्धि हो रही है । साहित्य का विस्फोट हो गया है । साहित्य विभिन्न भाषाओं, विभिन्न विषयों और विभिन्न स्वरूपों में तीव्र गति से प्रकाशित हो रहा है । आज किसी भी उपयोगकर्ता के लिए यह असम्भव है कि वह अपने विषय क्षेत्र में प्रकाशित साहित्य का ही पूर्ण अध्ययन कर ले । ऐसे में उसके पास इस ज्ञान के अनुप्रयोग के लिए तो समय ही नहीं होगा ।

इन सभी तथ्यों से यह स्पष्ट है कि ज्ञान अत्यन्त गतिशील है, शक्तिमान है, विलुप्तकारी है, और ज्ञान के नवीन तथ्यों का तेजी से उत्पादन करने में सक्षम है । विचारों की तीव्र गति के कारण आज ज्ञान का विस्फोट हो गया है । ज्ञान की निरन्तर वृद्धि के कारण प्रकाशित साहित्य की भी बाढ़

सी आ गई है । सामाजिक दबाव व जनसंख्या दबाव के कारण शोधकार्य भी आत्मनिष्ठ व व्यक्ति सापेक्ष नहीं रह गया है । आज मौलिक शोध की अपेक्षा व्यावहारिक शोध अधिक हो रही है एवं शीघ्र परिणामों की प्राप्ति हेतु तीन-चार शोधकर्ता मिलकर दलीय शोध (Team Research) कर रहे हैं । समस्याओं के त्वरित समाधान हेतु आविष्कारों में भी वृद्धि हुई है । आज की शोध बुद्धिमान, प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा की जाने वाली मौलिक शोध न होकर विकासात्मक शोध का रूप ले चुकी है । आज साहित्य विभिन्न विषयों, विभिन्न भाषाओं और विभिन्न स्वरूपों में प्रकाशित हो रहा है । आज किसी शोधकर्ता द्वारा मात्र अपने ही विषय में प्रकाशित सामग्री का अवलोकन कर पाना भी कठिन हो गया है । अर्थात् जगत की गतिशीलता के फलस्वरूप ज्ञान जगत अत्यंत शक्तिमान हो गया है।

1.3.2 अनन्त (Infinite)

ज्ञान वास्तव में ज्ञान और अज्ञात का एकात्मक स्वरूप है । मनुष्य सदैव ही नवीन विचारों के सम्पर्क में रहता है । इन नवीन विचारों के विकास के साथ-साथ ज्ञान भी विकसित होता चला जाता है । मनुष्य की चिन्तन क्षमता, विचारशीलता, कल्पनाशीलता अनन्त है जो सृष्टि में छिपे अनन्त तथ्यों की खोज करती रहती है । विचारों का कोई अन्त नहीं है इसलिए इतने का भी कोई अन्त नहीं है अर्थात ज्ञान अनन्त है । जो कुछ आज अज्ञात है वह शनै: शनै: भविष्य में ज्ञात हो जायेगा । आज ज्ञात एक सूक्ष्म विचार भविष्य में एक वृहद् विषय के रूप में स्थापित हो सकता है । विशेषताओं के आधार पर कोई भी श्रृंखला अनन्त तक पहुँच सकती है ।

उदाहरणार्थ:-

ज्ञान जगत
↓
भौतिकी
↓
विद्युत
↓
धारा विद्युत

उपरोक्त शृंखला के समान प्रत्येक श्रृंखला अंतहीन है । श्रृंखला के प्रत्येक अगले चरण में विषय का विस्तार कम होकर उसकी गहनता बढ़ जाती है । विषय सूक्ष्म, विशिष्ट और गहन होता चला जाता है । इस प्रकार मनुष्य की आवश्यकता, चिन्तन क्षमता, जिज्ञासु प्रवृत्ति, शोध आदि के द्वारा नवीन विचार हमेशा उदित होते रहेंगे और ज्ञान जगत विस्तारित होता रहेगा ।

यह भी निश्चित नहीं है कि मनुष्य किस दिशा में विचार करेगा । मनुष्य प्रतिक्षण विचारशील रहकर किसी भी विचार पर जिज्ञासा वश चिंतन मनन करने लगता है अर्थात् किसी भी क्षण कोई नवीन विचार या विषय जन्म ले सकते हैं अथवा पूर्व स्थापित विचार, सिद्धान्त, नियम में कोई परिवर्तन हो सकता है । ज्ञान की किसी भी शाखा के किसी भी सूक्ष्म विचार को स्वतंत्र अस्तित्व व पृथक विषय के रूप में मान्यता प्राप्त हो सकती है अथवा वो विषय अपना मूल अस्तित्व खोकर एकात्मक स्वरूप में नवीन विषय की रचना कर सकते हैं अर्थात् ज्ञान जगत के किसी भी क्षेत्र की वृद्धि अनन्त तक जा सकती है । इसके लिए अनन्त व अनगिनत वर्गो वाली वर्गीकरण पद्वति की आवश्यकता अनुभव की

जाती है जिसमें आवश्यकतानुसार कितने ही नवीन वर्गों का सृजन किया जा सके तथा उनका समावेश करने पर पूर्व क्रम भी यथावत् रहे तथा सहायक क्रम के उपसूत्र की भी सन्तुष्टि हो सके ।

सामाजिक दबाव व जनसंख्या दबाव के कारण कृत्रिम स्रोतों के द्‌वारा मनुष्य अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के विकल्प शोध के माध्यम से खोजता है । पूर्व में की जाने वाली शोध, मौलिक, आकस्मिक व व्यक्ति सापेक्ष होती थी किन्तु आज की शोध त्वरित परिणाम प्राप्ति के उद्देश्य से की जाने वाली विकासात्मक शोध है जिसके द्‌वारा उच्च स्तरीय व आरामदायक जीवनयापन के लिए बेहतर विकल्प खोजे जाते हैं । आज भोजन, वस्त्र और आवास की मूलभूत समस्याओं के समाधान हेतु अनेक शोधकार्य किए जा रहे हैं । आविष्कार और अनुप्रयोग का अन्तराल कम करने हेतु विभिन्न विशेषज्ञ दलीय शोध कर रहे हैं । समस्याएं अंतहीन हैं, इसलिए शोध भी अंतहीन है । इस अंतहीन चक्र के फलस्वरूप ज्ञान जगत भी अंतहीन है । ब्रह्माण्ड की कोख में छुपे असंख्य तथ्य, जिज्ञासु मनुष्य द्‌वारा, खोजे जाते रहेंगे और ज्ञान जगत का वर्धन होता रहेगा ।

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. ज्ञान जगत के उद्देश्य बताइये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

2. 'ज्ञान जगत गतिशील' होता है, स्पष्ट कीजिये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

3. 'ज्ञान जगत उन्नत है' उदाहरण दीजिये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

4. ज्ञान जगत की विशेषताएँ बताइये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

1.3.3 निरन्तर (Continuum)

ज्ञान जगत में कुछ क्षेत्र अशोधित रह जाते हैं । इन क्षेत्रों अथवा रिक्तियों को शोध के द्‌वारा भरा जाता है । कहने का तात्पर्य यह है कि विषय की सृष्टि अविराम पूर्ण है । भविष्य में विषयों के मध्य पारस्परिक अन्तःक्रिया से अखोजित नवीन विषयों का निर्माण होता रहता है ।

नीचे दिये गये उदाहरण में दो विषयों के मध्य हुई अंतःक्रिया से अनेक नवीन विषयों का निर्माण हो रहा है, उदाहरणार्थ ।

जैविकी + रसायन शास्त्र = जीव रसायन

शिक्षा + मनोविज्ञान = शिक्षा मनोविज्ञान

आज इस प्रकार के अन्तर्विषयी अनुसंधान का प्रचलन बढने से ज्ञान जगत की निरन्तरता बढ़ती जा रही है । सामाजिक समस्याएं निरन्तर उदित हो रही हैं तथा उनके समाधान की खोज हेतु अनुसंधान कार्य भी सतत् प्रगतिशील है । अनुसंधानों के परिणामों की प्राप्ति से ज्ञान जगत की निरन्तरता, गतिशीलता और विकास भी सतत् है । एक विषय को आधार मान कर दूसरे विषय का अध्ययन किया जा रहा है और नवीन सूक्ष्म विषयों के निरंतर विकास से ज्ञान जगत भी निरन्तर बन गया है ।

जब कोई नवीन उत्पादन होता है तो समाज द्वारा उसका उपयोग किया जाता है । उपयोग के पश्चात् किसी समस्या के ज्ञान होने पर उसका समाधान खोजने हेतु मौलिक शोध, प्रायोगिक शोध तथा विकासात्मक शोध आदि की जाती है एवं उस उत्पादन को और अधिक उन्नत बनाया जाता है । इस प्रकार, समस्याओं का कोई अन्त नहीं । समस्या के निरन्तर उत्पन्न होने पर शोधकार्य भी निरन्तर चलता जाता है और नवीन सूक्ष्म विषयों का निर्माण भी निरन्तर होता जाता है । एक विषय दूसरे विषय के लिए प्रेरक रूप में कार्य करता है । अन्तर्विषयी अनुसंधान से तथा दो विषयों की अन्तरक्रिया से ज्ञान जगत एक निरन्तर संरचना के रूप में स्थापित होता चला जा रहा है ।

1.3.4 बहु आयामी (Multidimensional)

ज्ञान जगत का एक और गुण यह है कि वह बहु आयामी, अनेक रूप व आकार का होता है अर्थात् इसकी वृद्धि विभिन्न व अनेक दिशाओं में होती है । ज्ञान जगत की वर्धनशीलता निरन्तरता और गतिशीलता के कारण लगातार उदित हो रहे नवीन विषय एक आयामी, दो आयामी तीन आयामी, चार आयामी अर्थात् बहु आयामी हो सकते हैं । पुस्तकालयाध्यक्ष को इन बहु आयामी विषयों को एक आयाम देना पड़ता है । ताकि संबंधित विषय एक रेखीय क्रम में सामीप्य सम्बन्धों के अनुसार व्यवस्थित हो सकें । इस हेतु सही वर्गाक प्रदान करना आवश्यक है । एक पक्षीय अथवा एक आयामी विषय सरल होते हैं एवं इनके व्यवस्थापन में कठिनाई नहीं आती किन्तु द्विआयामी, त्रिआयामी, चार आयामी अर्थात् बहु आयामी विषयों को एक आयामी विषयों में रूपान्तरित करना होता है । रंगनाथन महोदय ने बहु आयामी विषयों के लिए पक्ष सूत्र (P) (M) (E)(S)(T) का प्रयोग किया है । इन पाँच मूलभूत श्रेणियों का क्रम अपनाने से किसी भी वर्गाक में पक्षों का क्रम ज्ञात करने में आसानी होती

1.3.5 सम्बद्धता अथवा सुसंगतता (Coherence)

नीलमेघन के अनुसार सम्पूर्ण ज्ञान जगत को एक तंत्र के समान माना गया है । यह तंत्र अनेक भागों में विभाजित है तथा इन सभी भागों में अन्तर-सम्बन्ध है । इस कारण, यदि ज्ञान जगत के किसी एक भाग में कोई परिवर्तन होता है तो उसका प्रभाव अन्य भागों पर तथा सम्पूर्ण ज्ञान जगत पर पड़ता है, अर्थात् सम्पूर्ण ज्ञान जगत परिवर्तित हो जाता है । ज्ञान जगत के पृथक भाग होते हुए भी यह संयुक्त है, इसलिए मूल विषय परिवर्तित होने पर सम्पूर्ण विषय में भी परिवर्तन आ जाता है।

उदाहरणार्थ - बाल शिक्षा

इस संयुक्त विषय में यदि मूल विषय 'शिक्षा' का परिवर्तन औषधि अथवा मनोविज्ञान से कर दिया जाये तो विषय पूर्णतया निम्न प्रकार परिवर्तित हो जाता है ।

बाल औषधि

1.3.8 स्वाधीनता (Independence)

जब ज्ञान जगत के किसी एक भाग में परिवर्तन होने पर केवल वही भाग प्रभावित हो, अर्थात एक अवयव में परिवर्तन का प्रभाव अन्य भागों पर न पड़े तो इसे ज्ञान जगत की स्वाधीनता कहा जाता है । उदाहरणार्थ, 'समुद्र विज्ञान' विषय के अध्ययन हेतु कई विषयों के सामूहिक अध्ययन द्वारा जानकारी एकत्रित की जाती है, किन्तु 'समुद्र विज्ञान' विषय में हुए परिवर्तनों का प्रभाव सामूहिक अध्ययन में सहायक अन्य विषयों पर नहीं पड़ता है ।

1.3.7 प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार एक (Progressive Segregation-Kind I)

जब ज्ञान जगत के संबंधित भाग इस प्रकार पृथक होते हैं कि पृथक भाग में हुए परिवर्तन का प्रभाव अन्य भागों पर नहीं पड़ता है, तो इसे प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार एक कहते हैं । अर्थात जब ज्ञान जगत के भागों में होने वाला परिवर्तन, संबंध से स्वाधीनता की ओर हो तो इसे प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार एक कहते हैं । उदाहरण स्वरूप 'दर्शन शास्त्र' से पृथक होकर 'मनोविज्ञान विषय' निर्मित होना संबंध से स्वाधीनता की विशेषता को दर्शाता है अत: इसे प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार एक कहेंगे ।

1.3.8 प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार दो (Progressive Segregation - Kind II)

यदि ज्ञान जगत का एक भाग विभाजित हो, और फिर इस विभाजन के भी पुन: विभाजन हो तो इसे प्रगतिशील पृथक्करण - प्रकार दो कहते हैं । उदाहरण के लिए-भौतिकी का पहले परम्परागत 200 विभाजन (Canonical Division) किया गया है ।

Fundamental	C1
Properties of Matter	C2
Sound	C3
Heat	C4
Light, Radiation	C5
Electricity	C6
Magnetism	C7
Cosmic Hypothes	C8

1.3.9 प्रगतिशील व्यवस्थापन (Progressive Systematization)

जब ज्ञान जगत में होने वाला परिवर्तन, स्वाधीनता से सम्बद्धता अथवा सुसंगतता की ओर हो, तो इसे प्रगतिशील व्यवस्थापन कहते हैं । इस विशेषता के फलस्वरूप नवीन विषयों की रचना होती है ।

उदाहरण स्वरूप, शिक्षा व मनोविज्ञान दो पृथक अर्थात् स्वाधीन विषय हैं । इनमें सम्बद्धता स्थापित होने पर 'शिक्षा मनोविज्ञान' विषय निर्मित होता है । स्वाधीनता से सम्बद्धता की ओर परिवर्तन

होने के कारण यह विशेषता प्रगतिशील व्यवस्थापन कहलाएगी । धीरे-धीरे यह विषय एक स्वतंत्र विषय के रूप में स्थापित हो जाते है । जैसे 'जीव विज्ञान' और 'रसायन शास्त्र ' में अंतरसंबंध स्थापित होने पर नवीन विषय 'जीव रसायन' की रचना हुई । पहले इस विषय को पार्श्व सम्बद्धता के द्वारा दर्शाया जाता था, फिर इसे एकल के रूप में रखा गया । कोलन क्लासीफिकेशन के छठवें संस्करण में इसे विशिष्ट के रूप में रखा गया । सातवें संस्करण में 'जीव रसायन' एक पृथक मुख्य वर्ग के रूप में स्थापित हो गया है ।

1.3.10 समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन (Concurrent Segregation and Systematization)

जब ज्ञान जगत के किसी अवयव में पहले पृथक्करण हो ,फिर व्यवस्थापन द्वारा सम्बद्धता स्थापित हो तो इसे समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन कहते हैं ।

उदाहरण स्वरूप 'शोध प्रविधि', 'प्रबंधन विज्ञान' जैसे विषयों को पृथक कर एक स्थान पर व्यवस्थित कर दिया गया । सभी विषयों की शोध प्रविधि पृथक कर एक स्थान पर एकत्रित कर दी गई और इस प्रकार एक नया विषय 'शोध प्रविधि' बन गया ।

अर्थात् जब विषयों में सम्बद्धता स्थापित होने की प्रवृत्ति के साथ-साथ पृथक्करण भी हो, तो इस विशेषता को समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन कहते हैं । इस विशेषता के फलस्वरूप अनेक नवीन विषयों की रचना हो रही है । 'पत्रकारिता', 'मूल्यांकन तकनीक', 'सम्मेलन तकनीक' जैसे विषयों में पृथक्करण और व्यवस्थापन दोनों ही देखने को मिलते हैं ।

बोध प्रश्न

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. 'ज्ञान निरन्तर है', स्पष्ट कीजिये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

2. प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार-एक को समझाइये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

3. ज्ञान जगत के समवर्ती पृथक्करण एवं व्यवस्थापन से आप क्या समझते हैं?

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

4. ज्ञान जगत बहुआयामी क्यों है?

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

1.4 सारांश (Summary)

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जनसंख्या दबाव व सामाजिक आवश्यकता के दबाव के फलस्वरूप, समस्याएं तेजी से वृद्धि कर रही हैं तथा इन समस्याओं के समाधान हेतु दलीय अनुसंधान भी निरंतर जारी है । निष्कर्ष रूप में ज्ञान जगत निरंतर प्रगतिशील होकर बहुआयामी वृद्धि कर रहा है । इस अनन्त वर्धनशील ज्ञान जगत का सामना करने के लिए प्रभावशील वर्गीकरण पद्धति की आवश्यकता है जिससे, अनन्त व असंख्य वर्गो का समावेश किया जा सके, आवश्यकतानुसार कितने ही नए वर्गो का सृजन किया जा सके तथा नवीन विषयों का सहायक क्रम में व्यवस्थापन करते समय पूर्वक्रम भी यथावत् रहे ।

ज्ञान जगत की विशेषताओं के अध्ययन द्वारा पुस्तकालयाध्यक्ष ज्ञान जगत का यथोचित व्यवस्थापन कर पाते हैं । सहायक क्रम में व्यवस्थापन से पुस्तकालय के उद्देश्यों की भी पूर्ति हो जाती है । ज्ञान के अधिकतम् उपयोग से पुस्तकालय विज्ञान के पांच सूत्र भी संतुष्ट होते हैं तथा सूचना प्रधान बौद्धिक समाज की संरचना से राष्ट्र विकसित होता है ।

1.5 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question)

1. ज्ञान जगत की प्रमुख विशेषताएँ कौन सी हैं?
2. ज्ञान जगत के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिये?
3. ज्ञान जगत की 'अनन्त और गतिशील विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये?
4. ज्ञान जगत की निरंतर व बहुआयामी वृद्धि को स्पष्ट कीजिये?
5. ज्ञान जगत की संबंध व स्वाधीनता की विशेषता को स्पष्ट कीजिये ?
6. ज्ञान जगत के समवर्ती पृथक्करण व व्यवथापन से आप क्या समझते हैं ?

1.6 प्रमुख शब्द (Key Words)

जगत (Universe)	:	किसी दिये गये संदर्भ, विचाराधीन सत्ताओं का समुच्चय ।
विचार (Idea)	:	तर्क शक्ति तथा बुद्धि के प्रयोग से परिमार्जित चिंतन, मनन एवं कल्पना आदि का प्रतिफल अथवा सीधा अंत प्रेरणा द्वारा प्राप्त और स्मृति में संचालित कोई बोध ।
अनन्त (Infinite)	:	जिसमें भूत, वर्तमान एवं भविष्य का ज्ञान समाहित हो ।
सत्ता (Entity)	:	कोई मूर्त या अमूर्त वस्तु, विचार, भाव ।
गतिशील	–	Dynamic
अनन्त	–	Infinite
निरन्तर	–	Continuum

बहु आयामी	–	Multidimensional
सम्बद्धता अथवा सुसंगतता	–	Coherence
स्वाधीनता	–	Independence
प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार एक	–	Progressive Segregation - Kind I
प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार दो	–	Progressive Segregation - Kind II
प्रगतिशील व्यवस्थापन	–	Progressive Systematization
समवर्ती प्रथक्करण व व्यवस्थापन	–	Concurrent Segregation and Systematization

1.7 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Readings)

1. Agrawal, D.S., Lectures on universe of Knowledge, New-Delhi : Academic publications, 1985.
2. Khanna, J.K., Communicating Knowledge, Kurukshetra : Research publication.
3. Khanna and Vashistha, K.K., Knowledge : Evolution, Structure and research methodology, New Delhi : Ess Ess publication,1985.
4. Sonal singh, Universe of Knowledge: Structure and Development, Jaipur.
5. सोनल सिंह : ज्ञान जगत स्वरूप, संरचना एवं विकास, भोपाल : हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1981

इकाई-2

विषय निर्माण की विधियाँ

Modes of Formation of Subjects

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 विषय निर्माण की विधियाँ

- 2.2.1 विखण्डन
- 2.2.2 विच्छेदन
- 2.2.3 अनाच्छादन
- 2.2.4 पटलीकरण - 1
- 2.2.5 पटलीकरण- 2
- 2.2.6 शिथिल संग्रहण - 1
- 2.2.7 शिथिल संग्रहण - 2
- 2.2.8 संग्रहण - 3
- 2.2.9 विलयीकरण
- 2.2.10 आसवन
- 2.2.11 संचययन

2.3 सारांश

2.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.5 प्रमुख शब्द

2.6 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

2.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

1. ज्ञान जगत और विषय जगत के अन्तर को स्पष्ट करना ।
2. विषय निर्माण की विभिन्न विधियों से अवगत करवाना ।
3. सरल, यौगिक व जटिल विषयों के निर्माण की विधियों से परिचित करवाना ।
4. विभिन्न विषय निर्माण विधियों के अध्ययन द्वारा ज्ञान के समुचित व्यवस्थापन के उद्देश्य से अवगत करवाना ।
5. अन्तरविषयीन शोध के परिणाम स्वरूप निर्मित विषयों की जानकारी प्रदान करना ।
6. उचित वर्गीकरण पद्धति का निर्माण करने में सक्षम बनाना ।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानवीय चिन्तन के फलस्वरूप नवीन विचार जन्म लेते हैं । इन विचारों का एकत्रित स्वरूप ही ज्ञान कहलाता है । क्योंकि चिन्तन प्रक्रिया निरन्तर है । इसलिए इतन भी निरन्तर वर्द्धनशील है । विचारों की समानता के आधार पर ज्ञान जगत को विभिन्न अवयवों में बांटा गया है जिन्हें विषय कहते हैं । ज्ञान अत्यन्त व्यापक और अपार विषयों, उपविषयों व उनकी शाखाओं का सामूहिक स्वरूप है । ज्ञान जगत के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न विचारधाराओं और दृष्टिकोण के आधार पर हो रहे अनुसंधानों के फलस्वरूप जो परिणाम प्राप्त होते हैं, उन्हें किसी विचार समूह में सुव्यवस्थित व एकत्रित कर एक विषय का रूप प्रदान कर दिया जाता है । जिस प्रकार, ज्ञान विचारों का गुणनफल है उसी प्रकार, विषय ज्ञान का गुणनफल है । ज्ञान एक निरन्तर संरचना है, जिसका कोई अंत नहीं है और विषय, ज्ञान का ही एक भाग है, जिसका सीमा क्षेत्र परिभाषित, और विस्तार व गहनता सुनिश्चित होती है । ज्ञान के विभाजन से बने इन विषयों को समग्र रूप में विषय जगत कहते हैं । हर विषय, ज्ञान का ही एक भाग है, अत: सम्पूर्ण विषय जगत को ज्ञान जगत कहते है ।

चिन्तन प्रकृति के फलस्वरूप, मनुष्य द्‌वारा प्रकृति, स्वयं अथवा समाज के बारे में विचार किया जाता है । जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक विज्ञान, मानविकी, और समाज विज्ञान जैसे विषय समूह निर्मित होते हैं । समानता और असमानता के आधार पर ये समूह पुन: अनेक विषयों में विभक्त हैं । इस प्रकार विशेषता के आधार पर कोई भी विषय अनन्त तक विभाजित होता जाता है ।

मनुष्य	+	प्रकृति	=	प्राकृतिक विज्ञान
मनुष्य	+	मनुष्य	=	मानविकी
मनुष्य	+	समाज	=	समाज शास्त्र

इस प्रकार विषय जगत के विकास के साथ-साथ ज्ञान जगत भी वृद्धि करता जाता है । ज्ञान जगत की वृद्धि के फलस्वरूप प्रकाशित साहित्य की भी निरन्तर वृद्धि होती है । पुस्तकालयाध्यक्ष का कर्तव्य है कि वह बहुआयामी विषयों को सहायक व एक रेखीय क्रम प्रदान करे ताकि योग्य उपयोगकर्त्ता को उपयुक्त पाठ्य सामग्री यथाशीघ्र उपलब्ध करवायी जा सके । ज्ञान जगत के विकास के साथ-साथ अनेक नवीन विषय विकसित हो रहे हैं जो अन्य संबंधित विषयों के साथ ही व्यवस्थापन की मांग करते हैं । अत: एक पुस्तकालयाध्यक्ष, वर्गाकार (Classifier) और वर्गाचार्य (Classificationist) के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि उन्हें विषय निर्माण की विधियों का बेहतर ज्ञान हो ताकि नवोदित विषय को सम्बन्धित विषयों के साथ व्यवस्थित किया जा सके एवं पूर्ण क्रम भी यथावत बना रहे । इस इकाई में आपको विषय निर्माण की विभिन्न विधियों जैसे-विखण्डन, विच्छेदन, विलयीकरण आदि की जानकारी दी गई है ।

2.2 विषय निर्माण की विधियाँ (Modes of Formation of Subjects)

ज्ञान के किसी अंश का समान व असमान श्रेणियों में क्रमबद्ध एवं तर्कसंगत व्यवस्थापन विषय कहलाता है । ज्ञान के विभक्ति करण से प्राप्त समस्त विषयों को एकात्मक स्वरूप में विषय जगत की संज्ञा दी जाती है । मानवीय चिन्तन से विचार, विचार से विषय और विषयों से ज्ञान वृद्धि करता है । विषय जगत की निरन्तर और बहु आयामी वृद्धि के बावजूद भी पुस्तकालयाध्यक्ष, द्‌वारा सर्वाधिक

उपयोगी वर्गीकरण पद्धति की सहायता से विषयों का क्रमबद्ध विश्लेषण कर उचित व्यवस्थापन क्रम प्रदान किया जाता है । नवोदित विषयों को उनके संबंधित विषयों के साथ इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है जिससे पूर्व क्रम भी यथावत् बना रहे । विषय साधारण, यौगिक अथवा जटिल हो सकते हैं । इनके बारे में संक्षिप्त में जानकारी निम्नानुसार है

1. **साधारण विषय :** जिन विषयों में केवल मूलभूत विषय ही रहता है उन्हें साधारण विषय कहते हैं । मूलभूत विषय अर्थात् वह विषय जिसके अवयव के रूप में कोई भी एकल विचार न हो, जैसे-समाज शास्त्र, शिक्षा, मनोविज्ञान आदि मूलभूत विषय हैं ।
2. **यौगिक विषय :** जिन विषयों में मूलभूत विषय के साथ-साथ एक अथवा एक से अधिक एकल विचार भी होते हैं, उन्हें यौगिक विषय कहते हैं । उदाहरण दृष्टव्य हैं:

मूलभूत +	एकल विचार	=	यौगिक विषय
शिक्षा +	प्रौढ़	=	प्रौढ़ शिक्षा
साहित्य +	अंग्रेजी	=	अंग्रेजी साहित्य
मनोविज्ञान +	बाल	=	बाल मनोविज्ञान

3. **जटिल विषय:** जो विषय दो अथवा दो से अधिक विषयों के अन्तर्सम्बन्ध से निर्मित हो अथवा उनके मध्य किसी सम्बन्ध पर आधारित हो तो उसे जटिल विषय कहते हैं । उदाहरणार्थ जैसे

1. 'पुस्तकालय विज्ञान पर सूचना प्रौद्योगिकी का प्रभाव
2. समाज शास्त्र व धर्म में अन्तर्सम्बन्ध
3. 'शिक्षा और मनोविज्ञान में अंतर'

विषयों का निर्माण निरन्तर है तथा इनका निर्माण विभिन्न विषय निर्माण विधियों के द्वारा होता है । विभिन्न विषय निर्माण विधियों के द्वारा सरल, यौगिक अथवा जटिल विषयों का निर्माण होता है । अन्तरविषयीन शोध के परिणाम स्वरूप भी नवीन विषयों की रचना होती है । रंगनाथन ने ज्ञान जगत का गहन अध्ययन कर वर्गीकरण के सिद्धान्तों और तकनीकों का प्रतिपादन किया । वर्गीकरण प्रणाली के सामान्य सिद्धान्त, नियामक सिद्धान्त, अवधारणाएं, उपसूत्र आदि का प्रतिपादन किया । इन्होंने भूत और वर्तमान विषय क्षेत्रों के साथ-साथ भविष्य में निर्मित होने वाले विषयों की संरचना को भी ध्यान में रखा तथा किसी भी विषय के अंतर्गत एकल पक्षों को व्यवस्थित करने के दृष्टिकोण से निम्नलिखित पाँच मूलभूत श्रेणियों का प्रतिपादन किया :

1. व्यक्तित्व (Personality)
2. पदार्थ (Matter)
3. ऊर्जा (Energy)
4. स्थान (Space)
5. काल (Time)

ये पाँच मूलभूत श्रेणियाँ, अन्य विषय वर्गीकरण प्रणालियों के लिये आदर्श बन गई ।

रंगनाथन ने गहन अध्ययन और अनुसंधान के द्वारा 1950 में अपने एक आलेख में चार प्रकार की विषय निर्माण विधियों का प्रतिपादन किया । जिनका उल्लेख उनकी पुस्तक ' प्रोलिगोमिना दु लाईब्रेरी

क्लासिफिकेशन" (Prolegomena Library Classification) में मिलता है । ये चार विधियाँ निम्नलिखित हैं :

1. शिथिल संग्रहण (Loose Assemblage)
2. पटलीकरण (Lamination)
3. विच्छेदन (Dissection)
4. अनाच्छादन (Denudation)

उन्होनें 1960 में दो अन्य विधियों का प्रतिपादन किया -

1. आसवन (Distillation)
2. विलयन (Fusion)

1973 में डाक्यूमेन्टेशन रिसर्च एवं ट्रेनिंग सेन्टर (Documentation Research and Traning Centre)

DRTC, बंगलौर में कार्यरत ए. नीलमेघन ने इन विषय निर्माण विधियों में संशोधन कर इन्हें समयानुकूल अद्यतन बनाया तथा इन्हें वैज्ञानिक आधार पर परिवर्तित कर इनका पुनर्गठन किया । वर्तमान में विषय निर्माण की बारह विधियाँ मानी जाती है । नवीन विषय चाहे किसी भी विधि के फलस्वरूप निर्मित हो, उसका समायोजन वर्गीकरण पद्वति में सहायक क्रम में होना चाहिए । ज्ञान जगत के विकास का सर्वाधिक प्रभाव वर्गीकरण पर पड़ता है । अत: वर्गीकरण पद्धति इस प्रकार की होनी चाहिये जिसमें निम्न विशेषताएँ हों

i. अनन्त व असंख्य वर्गो का समावेश किया जा सके ।

ii. आवश्यकतानुसार कितने ही नए वर्गो का सृजन किया जा सके ।

iii. सहायक क्रम के उपसूत्र को ध्यान में रखते हुए वर्गीकरण पद्धति में नवीन वर्गो का इस प्रकार समावेश हो जिसमें पूर्वक्रम भी यथावत् रहे ।

वर्तमान में निम्नलिखित बारह विधियों से विषयों का निर्माण होता है:

1.	विखण्डन	सरल विषय
2.	विच्छेदन	
3.	अनाच्छादन	
4.	पटलीकरण – 1	यौगिक विषय
5.	पटलीकरण – 2	
6.	शिथिल संग्रहण – 1	जटिल विषय
7.	शिथिल संग्रहण – 2	
8.	शिथिल संग्रहण – 3	
9.	विलयीकरण	जटिल विषय
10.	आसवन	
11.	संचय	
12.	समूह	

इस प्रकार उपरोक्त विधियों में से शिथिल संग्रहण 1,2,3 के द्वारा जटिल विषय लेमीनेशन 1,2 के द्वारा यौगिक सरल विषय तथा शेष विधियों द्वारा सरल विषयों का निर्माण होता है ।

2.2.1 विखण्डन (Fission)

इस प्रक्रिया में पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धति में ज्ञान जगत का प्राथमिक एवं गौण मुख्य विषयों में विभाजन होता है । प्रथम चरण पर हुए विखण्डन से प्राथमिक मुख्य विषयों तथा द्वितीय चरण पर गौण मुख्य विषयों की संरचना होती है ।

विखण्डन का तात्पर्य है - खण्डों में विभाजन अर्थात् विषय का विभिन्न अंशों में विभाजन । रंगनाथन के अनुसार "जब कोई एकल अथवा मूलभूत विषय, जब वह उपविभागों में विखण्डित हो जाता है तो इसे विखण्डन कहते हैं । विखण्डन के द्वारा विषयों की गहनता बढ़ जाती है और विस्तार कम हो जाता है । यह विभाजन की एक आन्तरिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा नये-नये विशिष्टीकरण जन्म लेते हैं । उदाहरणार्थ मुख्य विषय दर्शनशास्त्र का विखण्डन, तर्कशास्त्र, ज्ञान मीमांसा, तत्व मीमांसा, नीतिशास्त्र एवं सौन्दर्य शास्त्र में हो सकता है । मूल रूप से विखंडन की प्रक्रिया तीन प्रकार की होती है

विखण्डन- 1 : परम्परागत विखण्डन

विखण्डन एक के द्वारा परम्परागत प्रमुख विषय निर्मित होते हैं, जिन्हें मुख्य विषयों का संचय कहते हैं । प्रामाणिक मूलभूत विषय जो मुख्य विषय के साथ ही गमन करते हैं, की रचना भी विखण्डन-1 द्वारा ही हुई है ।

परम्परागत विखण्डन, मुख्य मूलभूत विषय - जैसे गणित व भौतिकी ।

प्रामाणिक मूलभूत विषय जैसे गणित में अंकगणित व बीजगणित ।

विखण्डन -2: निकाय विखण्डन

कुछ मुख्य विषय जैसे-चिकित्साशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान आदि का विकास विभिन्न विचाराधाराओं के अनुसार हुआ है, ऐसे विषय विखण्डन - 2 अथवा निकाय विखण्डन के परिणाम हैं।

निकाय विखण्डन के द्वारा मुख्य विषयों के निकाय मूलभूत विषय उत्पन्न होते हैं । निकाय मूलभूत विषय अर्थात् वह मुख्य विषय जो एक सुनिश्चित विचारधारा के अनुसार विकसित हुआ हो जैसे-व्यावहारिक मनोविज्ञान ।

विखण्डन-3: विशिष्ट विखण्डन

समान मुख्य विषय जैसे चिकित्सा शास्त्र के प्रतिपादन को मानव शरीर की कुछ विशेषताओं तक सीमित किया जा सकता है जैसे - बाल्यावस्था और वृद्धावस्था । इन्हें 'विशेष' के नाम से पुकारा जाता है तथा ये विखण्डन - 3 या विशिष्ट विखण्डन के परिणाम हैं । इनकी पारिभाषा प्रत्येक पक्ष में या तो तदर्थ रूप से होती है या इनकी रचना विशिष्ट वातावरण के आधार पर होती है जिसमें अध्ययन के विषयों को निर्मित करने वाले तथ्य नियोजित किए जाते हैं ।

विशिष्ट विखण्डन से मुख्य विषयों के मूलभूत विषय उत्पन्न होते हैं, जैसे-बाल चिकित्सा, स्त्री चिकित्सा, उष्ण कटिबन्धी चिकित्सा आदि ।

विखण्डन प्रक्रिया द्वारा एक विषय दो या दो से अधिक विषयों में विभाजित होकर नवीन विषयों को जन्म देता है । विभाजन द्वारा समविभाग या उपविभाग प्राप्त होते हैं जिसके आधार पर विखण्डन की प्रक्रिया दो प्रकार की हो सकती है- (i) विच्छेदन (ii) अनाच्छादन ।

2.2.2 विच्छेदन (Dissection)

रंगनाथन महोदय ने प्रोलीगोमीना में विच्छेदन को परिभाषित करते हुए लिखा है कि' 'समकक्ष प्रतिष्ठा वाले भागों में तत्व जगत का कर्तन; अर्थात् जब किसी मूलभूत विषय अथवा एकल के विखण्डन से पंक्तिगत् भाग प्राप्त हों तो इसे विच्छेदन कहते हैं । " इसके द्वारा निर्मित समस्त भागों को समान श्रेणी में रखा जाता है । जिस प्रकार एक डबल रोटी को समान भागों में बांटा जाता है, उसी प्रकार विषय के विभाजन से समकक्ष वर्गों का निर्माण विच्छेदन कहलाता है । यह ज्ञान जगत के निर्माण की आरम्भिक व सरलतम विधि है जिसके द्वारा एकल अथवा मूलभूत विषय चाहे वह मुख्य हो अथवा इतर मुख्य, समकक्ष प्रतिष्ठा वाले भागों में विखण्डित हो जाता है ।

ज्ञान जगत के विच्छेदन से विभिन्न विषय जैसे-रसायन शास्त्र, समाज विज्ञान, राजनीति विज्ञान, इतिहास आदि प्राप्त हुए हैं । ये सभी समकक्ष भाग हैं तथा इन सभी वर्गो को समान श्रेणी में -रखा जाता है ।

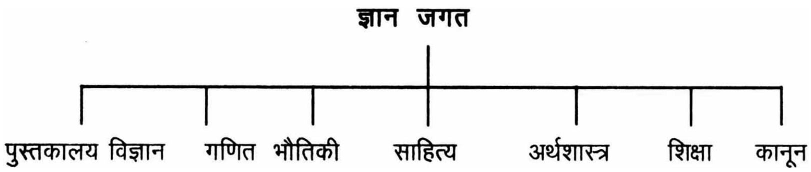

ये सभी पंक्तिबद्ध भाग हैं और इनका अस्तित्व स्वतंत्र है । यह प्रत्येक खण्ड पुन: विशेषताओं के आधार पर विच्छेदित हो सकते हैं । विच्छेदन की प्रक्रिया बारम्बारता होती रहती है और ज्ञान जगत भी पंक्तिबद्ध भागों में बंटता चला जाता है ।

वैदिक काल में ज्ञान जगत चार वर्गो में अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में विच्छेदित था । ड्यूई की दशमलव वर्गीकरण पद्धति में ज्ञान जगत को दस वर्गो में विभाजित किया गया है जो तर्क आधारित नहीं है । रंगनाथन महोदय की द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में ज्ञान जगत को 26 वर्गो में विभाजित किया गया है जिनकी संख्या सातवें संस्करण में 105 हो गई है । पुस्तकालयाध्यक्ष द्वारा ये नवोदित विषय उचित और सहायक क्रम में व्यवस्थित किए जाते हैं ताकि उनका अधिकाधिक उपयोग संभव हो सके ।

विच्छेदन के द्वारा विशेषताओं के आधार पर ज्ञान जगत का कोई भी विषय अथवा एकल अनेक विषयों या सूक्ष्म विस्तारण के एकलों में विच्छेदित हो जाता है । विच्छेदन की प्रक्रिया को रेखाचित्र 2.1 के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है:

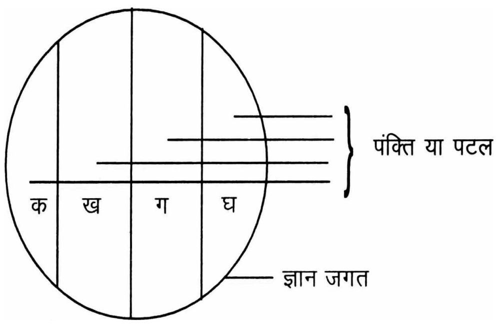

रेखाचित्र : 2.2

विच्छेदन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक विषय दो अथवा दो से अधिक भागों में विभाजित हो जाता है । ये भाग अपने जनक विषय से सम्बद्ध भी हो सकते हैं और स्वतंत्र भी । अर्थात् विच्छेदन से निर्मित प्रत्येक भाग अपने आप में एक जगत है । इस विच्छेदित भाग को पटल अथवा पंक्ति कहते है । उपरोक्त रेखाचित्र से ज्ञान जगत के विच्छेदन से निर्मित क,ख,ग,घ भाग पंक्ति अथवा पटल कहलायेंगे । इनमें से कोई भी पंक्ति अथवा पटल पुन: विच्छेदित हो सकती है ।

यदि भौगोलिक जगत को विच्छेदित करें तो एशिया, यूरोप, अमेरिका आदि पटल प्राप्त होते हैं । एशिया जगत पर पुन: प्रक्रिया को दोहराने पर रूस, चीन, भारत आदि पटल प्राप्त होते हैं । भारत जगत को पुन: विच्छेदित करने पर मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात आदि पटल प्राप्त होते हैं । इसे रेखाचित्र 2 .2 में दर्शाया गया है ।

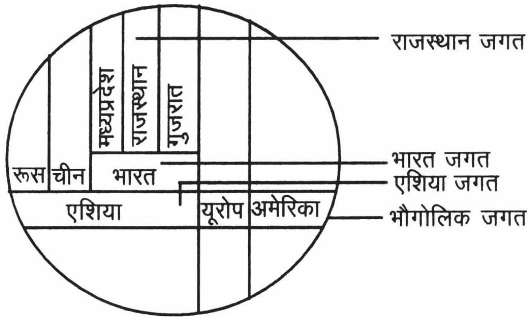

रेखाचित्र : 22

2.2.3 अनाच्छादन (Denudation)

विषय संरचना एवं निर्माण के परिप्रेक्ष्य में अनाच्छादन किसी मुख्य विषय के एक वर्ग अथवा एकल को विभाजित करने की प्रक्रिया है । इस प्रक्रिया में विशिष्ट विशेषताओं के आधार पर व्यापकता की दृष्टि से विषय का विस्तार कम और गहनता की क्रमश: वृद्धि की जाती है । इस प्रक्रिया द्वारा नवीन एकल विचारों की एक श्रृंखला का सृजन होता है । जे.एच. शेरा महोदय ने इसे ज्ञान के नवीन विषयों की खोज प्रक्रिया कहा है ।

जब किसी मूलभूत विषय अथवा एकल के विखण्डन से उपविभागों प्राप्त हों, अर्थात् जब एक विषय, श्रृंखला वर्गों में विखण्डित हो, तो इस विषय निर्माण विधि को अनाच्छादन कहते हैं । इस विधि का उपविभाजन होता है, विषयों की सूक्ष्मता और गहनता बढ़ जाती है तथा विस्तार कम हो जाता है। प्रत्येक वर्ग अपने पहले वर्ग का उपविभाग होता है । उदाहरणार्थ:

पुस्तकालय
↓
शैक्षणिक पुस्तकालय
↓
विद्यालय पुस्तकालय
↓
प्राथमिक विद्यालय पुस्तकालय

अनाच्छादन की प्रक्रिया को रेखाचित्र 23 के माध्यम से समझा जा सकता है ।

रेखाचित्र. 2.3

अनाच्छादन की प्रक्रिया से अधीनस्थ या पंक्तिबद्ध वर्गों की रचना होती है । विषयों के विभाजन से नवीन विषयों की रचना होती चली जाती है और ज्ञान जगत के क्षेत्र में ज्ञात तथ्य एकत्रित होते चले जाते हैं । निरन्तर चिन्तन से सतत् उदित हो रहे नवीन विचारों के कारण विषय जगत में द्रुतगति से वृद्धि होती जाती है, अर्थात् विखण्डन प्रक्रिया से ज्ञान जगत का विभाजन हो रहा है । जब विभाजन से समकक्ष वर्ग प्राप्त हों तो इसे विच्छेदन तथा जब अधीनस्थ वर्ग प्राप्त हों तो इसे अनाच्छादन कहते हैं ।

2.2.4 पटलीकरण- 1 (Lamination-I)

पटलीकरण का तात्पर्य है कि एक पर्त पर दूसरी पर्त अर्थात् एक विषय की एक से अधिक दिशाएँ या पक्ष हों । ये पक्ष एक दूसरे पर पटलित होते हैं जब दो या दो से अधिक एकल पक्ष, मूल पक्ष पर पटलित होते है तो इसे पटलीकरण- 1 कहते हैं इस विधि द्वारा यौगिक विषयों का निर्माण होता है ।

उदाहरण - हृदय के रोगों के उपचार ।

यह एक यौगिक विषय है जिसमें चिकित्सा शास्त्र मूलभूत विषय तथा हृदय, रोग व उपचार एकल पक्ष हैं । मूलभूत विषय चिकित्सा शास्त्र पर हृदय, रोग व उपचार के पटलित होने से इस यौगिक विषय का निर्माण हुआ है ।

पटलीकरण- 1 की प्रक्रिया को रेखाचित्र 2.4 के माध्यम से समझा जा सकता है ।

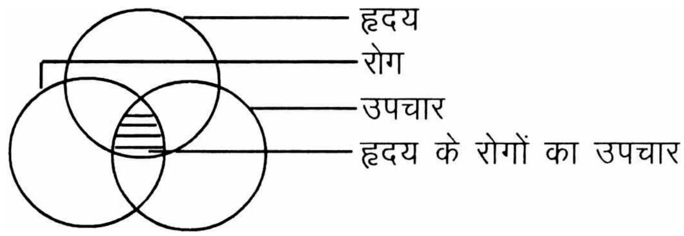

रेखाचित्र 2 .4

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में पक्ष विश्लेषण तथा आवर्तन और स्तर के द्वारा इस विधि से निर्मित विषयों को दर्शाया जाता है । सार्वभौम वर्गीकरण पद्धति में कोलन का उपयोग किया जाता है। दशमलव वर्गीकरण पद्वति में इसका कोई प्रावधान नहीं है ।

2.2.5 पटलीकरण-2 (Lamination-II)

जब किसी एक पक्ष के दो या दो से अधिक एकल एक दूसरे पर पटलित रहते हैं तो इस विधि को पटलीकरण-2 कहते हैं । इसे कल्प पटलीकरण भी कहते हैं क्योंकि अधिकांशत: ऐसे विषय सम्पूर्ण

विचार का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं । द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में इस विधि से निर्मित विषयों को अध्यारोपण विधि के द्वारा दर्शाया जाता है । इसके लिये हाईफन (Hyphen) "–" चिन्ह का प्रयोग किया जाता है । दो एकलों में से प्रमुख एकल को पहले तथा गौण एकल को बाद में लिखा जाता है

उदाहरण, अभियांत्रिकी महाविद्यालय पुस्तकालय

234-4(D)

पटलीकरण- 1 में एक पक्ष पर दूसरा पक्ष पटलित रहता है जबकि पटलीकरण-2 में एक ही पक्ष का एकल विचार दूसरे पक्ष पर पटलित रहता है ।

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. यौगिक विषय किसे कहते हैं? उदाहरण दीजिये ।

   ....

   ....

2. जटिल विषय किसे कहते हैं ? उदाहरण दीजिये ।

   ....

   ....

3. ज्ञान जगत के विकास का प्रभाव वर्गीकरण पर पड़ता है, स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

4. रंगनाथन ने विषय निर्माण की कितनी विधियां बताई हैं?

   ....

   ....

2.2.6 शिथिल संग्रहण - 1 (Loose Assemblage-I)

जब एक विषय का दूसरे विषय अथवा उसके उपविभागों से सम्बन्ध दर्शाया जाता है तो इसे शिथिल संग्रहण कहते हैं । इस विधि में दो या दो से अधिक विषयों का उनके पारस्परिक सम्बन्ध के रूप में अध्ययन किया जाता है । शिथिल संग्रहण पटलीकरण से भिन्न है । पटलीकरण में मूल विषय पर दो अथवा दो से अधिक पक्ष पटलित रहते हैं, जबकि शिथिल संग्रहण में दो या दो से अधिक विषयों का उनके पारस्परिक सम्बन्ध के रूप में अध्ययन किया जाता है ।

जब दो या दो से अधिक विषयों का अध्ययन उनके परस्पर सम्बन्धों के रूप में किया जाता तो इसे शिथिल संग्रहण - 1 कहते हैं । इस विधि में दो पृथक विषय अस्थाई रूप से एक दूसरे संयोजन में आते हैं तथा एक विषय के उपयोग द्वारा दूसरे विषय का अध्ययन किया जाता है । अन्तरविषयीन शोध का परिणाम है ।

इस विधि से दो या दो से अधिक साधारण अथवा जटिल विषयों के पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन के आधार पर विषयों की संरचना होती है । वर्गीकरण शब्दावली में इन पारस्परिक सम्बन्धो को अर्न्तविषयीन दशा सम्बन्ध (Inter Subject Phase Relation) कहते है । इसके द्वारा जटिल विषय का निर्माण होता है ।

इस विषय निर्माण विधि में निम्न प्रकार के दशा सम्बन्ध हो सकते हैं,

i. सामान्य सम्बन्ध (General Relation)
ii. उन्मुखी सम्बन्ध (Bias Relation)
iii. तुलनात्मक सम्बन्ध (Comparison Relation)
iv. भिन्नात्मक सम्बन्ध (Difference Relation)
v. प्रभावात्मक सम्बन्ध (Influence Relation)
vi. उपकरण सूचक सम्बन्ध (Tool Relation) (द्विबिन्दु वर्गीकरण के 7वें संस्करण के अनुसार)

उदाहरण

i. कृषि और अर्थशास्त्र
ii. बैंक अधिकारियों के लिए गणित
iii. धर्म और राजनीति : तुलनात्मक अध्ययन
iv. समाज शास्त्र व मानवशास्त्र में विभेद
v. राजनीति पर अर्थशास्त्र का प्रभाव

2.2.7 शिथिल संग्रहण-2 (Loose Assemblage -II)

जब किसी मुख्य वर्ग के एक ही पक्ष के दो एकलों के बीच परस्पर सम्बन्ध दर्शाया जाता है तो इसे शिथिल संग्रहण दो कहते हैं । इस प्रकार के विषयों का निर्माण एक ही मुख्य विषय के दो या अधिक समवर्गी /एकलों के पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर होता है । वर्गीकरण शब्दावली में इसे अन्तर पक्ष दशा सम्बन्ध (Intra Facet Phase Relation) कहते हैं ।

इस विधि में निम्न प्रकार के दशा सम्बन्ध हो सकते हैं

i. सामान्य सम्बन्ध
ii. उशृखी सम्बन्ध
iii. तुलनात्मक सम्बन्ध
iv. प्रभावात्मक सम्बन्ध
v. प्रभावात्मक सम्बंध
vi. उपकरण सूचक सम्बन्ध (द्विबिन्दु वर्गीकरण के 7वे संस्करण के अनुसार)

उदाहरणार्थ.

i. सन्दर्भ सेवा और सूचीकरण
ii. निराला और सुमन. तुलनात्मक अध्ययन
iii. जैनधर्म और बौद्ध धर्म का प्रभाव

2.2.8 शिथिल संग्रहण-3 (Loose Assemblage)

इस विधि के अन्तर्गत एक पक्ष के पंक्तिबद्ध एकलों के परस्पर सम्बन्ध को दर्शाया जाता है, तो इसे शिथिल संग्रहण - 3 कहते हैं । उदाहरणार्थ :

i. वर्गीकरण व सूचीकरण

ii. ग्रामीण तथा नागरिक जनता की संस्कृति

iii. ग्रामीण जीवन पर शहरी जीवन का प्रभाव

iv. ग्रामीण एवं शहरी जीवन में अंतर

यह सम्बन्ध एक पंक्ति के दो उप एकलों के मध्य दिखाया जाता है । वर्गीकरण शब्दावली में इसे अन्तर पंक्ति विषय सम्बन्ध (Intra Array Phase Retation) कहते हैं । यह सम्बन्ध भी सामान्य, उन्मुखी, तुलनात्मक, भिन्नात्मक, प्रभावात्मक, उपकरण सूचक प्रकार का हो सकता हैं । द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में प्रत्येक सम्बन्ध हेतु अलग-अलग योजक चिन्हों का प्रयोग किया जाता है ।

शिथिल संग्रहण की प्रक्रिया को निम्न रेखाचित्र 2.5 के माध्यम से समझा जा सकता है ।

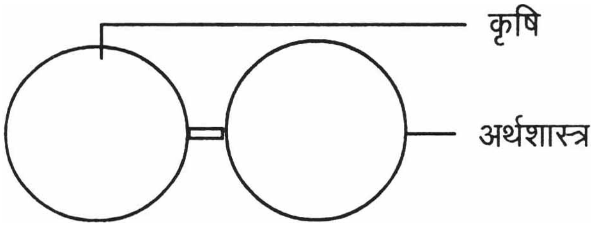

रेखाचित्र : 2.5

2.2.9 विलयीकरण (Fusion)

जब दो या दो से अधिक मुख्य विषयों का विलयीकरण एक साथ इस प्रकार से हो जाये कि प्रत्येक अपनी पृथकता खो दें, तो इस विधि को विलयीकरण कहते हैं । इस प्रकार के विषय अन्तरविषयीन शोध का परिणाम हैं ।

उदाहरणार्थ: बायोलॉजी + कैमिस्ट्री = बायोकैमिस्ट्री

खगोल + भौतिक शास्त्र = खगोल भौतिकी

इस विधि के द्वारा नवीन विचार जन्म लेते हैं एवं इससे नवीन विषयों का निर्माण होता है। इन विषयों का निर्माण शिथिल संग्रहण से होता है अर्थात् पहले दो विषयों के बीच शिथिल संग्रहण होता है एवं उनका अध्ययन उनके परस्पर सम्बन्धों के रूप में किया जाता है फिर इनमें विलयीकरण हो जाता है । इस प्रकार के विषय मानविकी, समाज विज्ञान एवं विज्ञान में निर्मित हो रहे हैं । विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विभिन्न शोध कार्यो के परिणाम स्वरूप प्राथमिक विषयों के विलयीकरण से कई नए प्राथमिक विषयों का निर्माण हो रहा है । उदाहरण स्वरूप Biophysics, Geophysics Astrochemistry, Econometrics आदि विषयों का निर्माण विलयन की प्रक्रिया से ही हुआ है ।

इस विधि के द्वारा निर्मित नवीन विषयों का व्यवस्थापन संबंधित विषयों के मध्य सहायक क्रम में किया जाना चाहिए।

विलयीकरण की प्रक्रिया को रेखाचित्र 26 के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है ।

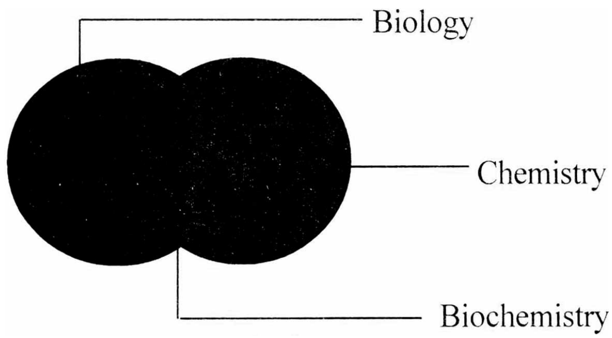

रेखाचित्र : 2.6

2.2.10 आसवन (Distillation)

आसवन अर्थात् किसी मिश्रण का शुद्धिकरण । इस प्रक्रिया से एक शुद्ध पदार्था / विषय को प्राप्त किया जाता है । ज्ञान जगत भी विभिन्न विचारों, तथ्यों और विषयों का सम्मिश्रण है । जब ज्ञान जगत का आसवन किया जाये और इस मिश्रण से कुछ अवशेष प्राप्त हो तो इसे आसवित मुख्य विषय कहते है।

उदाहरण - प्रबन्धन विज्ञान, शोध प्रविधि, सांख्यिकी विश्लेषण आदि ।

यह विषय निर्माण विधि अन्तरविषयीन शोध का परिणाम है । सम्पूर्ण ज्ञान जगत के आसवन से अवशेष स्वरूप जो नवीन विचार प्राप्त होता है उसका अपना अस्तित्व होता है । यह विचार पूर्व में भी विद्‌यमान था किन्तु इसका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था । विषय जगत के आसवन से यह एक पृथक विषय बन गया । आज इस विषय निर्माण पद्धति के फलस्वरूप नये-नये विशिष्टीकरण निर्मित हो रहे हैं ।

आसवन की प्रक्रिया को रेखाचित्र स2.7 के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है:

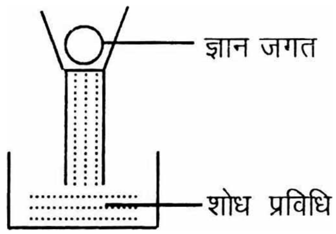

रेखाचित्र : 27

2.2.11 संचयन (Agglomeration)

पूर्व में भी इस विधि को आशिक समावेश (Partial Comprehension) के नाम से जाना जाता था । इरा प्रकार के विषय के निर्माण की प्रकृति नई नहीं है । ये कई वर्गो का सम्मिलित स्वरूप है । जब किसी वर्ग में कई वर्गो का समावेश हो तथा कुछ अनिवार्य विशेषताएँ सामान्य रूप से हो तो इसे संचय कहते है । इस विधि में दो अथवा दो से अधिक मुख्य वर्ग मिलकर एक सामान्य मुख्य वर्ग का निर्माण करते हैं ।

उदाहरण प्राकृतिक विज्ञान, समाज विज्ञान आदि को संचायित वर्ग कहा जाता है । इनमें अनेक विषय सम्मिलित हैं । पूर्व में ये मुख्य विषय थे जो विखण्डन द्वारा अनेक विषयों में विभाजित हो गए । संचय विधि द्वारा इनका सम्मिलित स्वरूप भी दिखाई पडता है ।

द्विबिन्दु वर्गीकरण प्रणाली में संचायित वर्ग 'A' सभी विज्ञानों का प्रतिनिधित्व करता है । इसी प्रकार MZZ मानविकी और SZ सामाजिक विज्ञान का संचयित वर्ग है ।

संचयन की प्रक्रिया को रेखाचित्र 2.8 के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है:

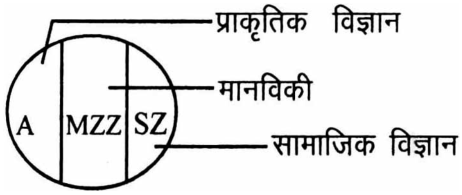

रेखाचित्र : 28

2.2.12 समूह(Cluster)

पूर्व में भी इस विधि को 'विषयों का पुलिंदा' (Subject Bundle) के नाम से जाना जाता था । जब किसी एक प्रक्रिया अथवा तत्व के अध्ययन हेतु विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ एक साथ मिलजुल कर कार्य करते हैं तो इस विधि को समूह कहते हैं । समूह में विभिन्न विषयों का स्वतंत्र अस्तित्व है उनका सम्बन्ध मात्र एक विशिष्ट क्रिया के अध्ययन हेतु ही होता है ।

उदाहरणार्थ : समुद्र विज्ञान, भू विज्ञान, जापानी विद्या, चीनी विद्या, भारतीय संगीत आदि।

जब विभिन्न विषय एक व समान श्रेणी के होते हैं तो यह विधि संचयन कहलाती है तथा जब विभिन्न विषय एक ही श्रेणी के नहीं होते, तो इसे समूह कहते हैं । विषय निर्माण की यह विधि दल शोध का परिणाम है । समूह के विभिन्न विषयों का स्वतंत्र अस्तित्व होता है किन्तु एक विशिष्ट क्रिया के अध्ययन में वे सम्बन्धित रहते हैं । इस विषय में इस विशिष्ट क्रिया के विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया जाता है ।

उदाहरण के लिए यदि एक शोध दल, भूमि की उर्वरा शक्ति का अध्ययन करने के लिए गठित किया जाये तो इस दल में रसायन विज्ञान, कृषि विज्ञान और वनस्पति विज्ञान से एक-एक शोध वैज्ञानिक नियुक्त किया जावेगा तथा ये मिलकर जल विज्ञान (Hydro Science) का अध्ययन करेंगे ।

समूह की प्रक्रिया को रेखाचित्र 2.9 के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है ।

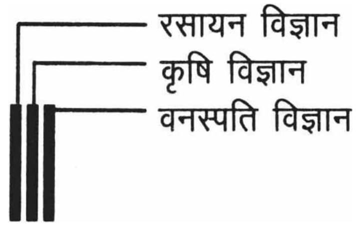

रेखाचित्र. 2.9

द्विबिन्दु वर्गीकरण प्रणाली में समूह के प्रतिनिधित्व हेतु 'अन्तर्वेशण विधि' का प्रयोग करते हैं । सार्वभौम दशमलव पद्धति में इस हेतु कोई प्रावधान नहीं है ।

संचयन और समूह में मुख्य अंतर यह है कि संचयन एक व समान श्रेणीबद्व पदों के विभिन्न विषयों का समूह है, जबकि समूह के विभिन्न विषय एक ही श्रेणी के नहीं होते । दूसरा अंतर यह है कि संचयन का अस्तित्व पहले से ही विद्यमान रहता है तथा इसका विखण्डन होने पर विभिन्न विषय निर्मित हो जाते हैं । 'समूह विषय निर्माण पद्धति नई है और दलशोध के फलस्वरूप निर्मित हुई है ।

बोध प्रश्न-2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. शिथिल संग्रहण- 1 विधि को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

2. विलयीकारण उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

3. संचयन की प्रक्रिया का रेखाचित्र बनाइये ।

   ....

   ....

4. विषय निर्माण की समूह विधि उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

2.3 सारांश (Summary)

ज्ञान जगत अत्यन्त विस्तृत और गतिशील है । विषय निर्माण की विभिन्न विधियों द्वारा अनेक नवीन विषय निर्मित हो रहे हैं जिन्हें नियत स्थान पर सहायक क्रम में व्यवस्थित होना चाहिये । अत. वर्गीकरण प्रणाली में असंख्य मुख्य वर्गो के निर्माण का प्रावधान होना चाहिये, ताकि किसी भी विधि द्वारा निर्मित विषय का समावेश हो जाये एवं पूर्व क्रम भी यथावत् रहे । पुस्तकालयाध्यक्ष को विषय निर्माण की विभिन्न विधियों का बेहतर ज्ञान होना चाहिए, ताकि विषय की मूल प्रकृति को समझ कर उसका समुचित व्यवस्थापन किया जा सके । वर्गीकार को विभिन्न विषय निर्माण विधियों का ज्ञान होने से ज्ञान को एक रेखीय क्रम प्रदान करने में सुविधा होती है । वर्गाकार्य के लिए भी विषय निर्माण विधियों का अध्ययन एक बेहतर वर्गीकरण प्रणाली के निर्माण में सहायक सिद्ध होता है । नवनिर्मित विषय सरल यौगिक अथवा जटिल प्रकृति के होते हैं तथा नियत स्थान पर व्यवस्थापन से ज्ञान का समुचित उपयोग किया जा सकता है ।

2.4 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. विषय निर्माण की प्रमुख विधियाँ कौन-कौन सी हैं?
2. किन विषय निर्माण विधियों द्वारा सरल विषयों का निर्माण होता है?
3. यौगिक विषयों के निर्माण की विधियाँ कौन-कौन सी है?
4. जटिल विषयों के निर्माण की विधियों के नाम लिखिये?

5. शिथिल संग्रहण विधि को समझाईये?
6. पटलीकरण और शिथिल संग्रहण के अन्तर को स्पष्ट कीजिए?
7. विलयीकरण और शिथिल संग्रहण में सम्बन्ध स्थापित कीजिये?
8. संचयन व समूह के अंतर को स्पष्ट कीजिए?
9. कौन-कौन सी विषय निर्माण विधियाँ अन्तरविषयीन शोध का परिणाम है?

2.5 प्रमुख शब्द (Key Words)

एकल (Isolate)	:	वह एकल विचार जो किसी मूल विषय के साथ मेल खा सकता है ।
वर्गीकार (Classifier)	:	वह व्यक्ति जो किसी वर्गीकरण पद्धति से पुस्तकों को वर्ग संख्या प्रदान करता है ।
वर्गाचार्य (Classificationist)	:	वह व्यक्ति जो किसी वर्गीकरण प्रणाली का निर्माण करता है।
व्यक्तित्व	–	Personality
पदार्थ	–	Matter
ऊर्जा	–	Energy
स्थान	–	Space
समय	–	Time
शिथिल संग्रहण	–	Loose Assamblage
विच्छेदन	–	Dissection
अनाच्छादन	–	Denudation
आसवन	–	Distillation
विलयन	–	Fussion
डी.आर.टी.सी.	–	Documentation Research and Training Center (D.R.T.C)
विखण्डन	–	Fission
अन्तरविषयीन दशा सम्बन्ध	–	Inter Subject Phase Relation
संचयन	–	Agglomeration
आशिक समावेश	–	Partial

समूह – Cluster

2.6 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (Refences and Further Readings)

1. Agrawal, D.S., Lectures on universe of Knowledge, New Delhi, : Academic Publication, 1985.
2. Khanna, J.K., Communicating Knowledge, Kurushetra research Publication.
3. Khanna, J.K., and vashisth, K.K., Knowledge : Evolution, structure and research methodology, New Delhi : Ess Ess Publication,1985.
4. Sonal Singh, Universe of Knowledge : Structure and development,Jaipur.
5. सोनल सिंह, ज्ञान जगत : स्वरूप, संरचना एवं विकास, भोपाल : हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
6. ध्यानी, पुष्पा, पुष्तकालय वर्गिकरण, दिल्ली : एस. एस. पब्लिकेशन्स, 2000 ।

इकाई - 3

विषय-उनके प्रकार एवं वर्धन

Subjects-Their Kinds and Growth

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 ज्ञान वर्धन
3.3 ज्ञान का विभाजन : अनुशासन
3.4 कोलन क्लासीफिकेशन में ज्ञान का विभाजन
3.5 सामाजिक ज्ञान शास्त्र
3.6 ज्ञान निर्माण की तीन विधियाँ
3.6.1 विशिष्टीकरण प्रवृतियॉ
3.6.2 अन्तर-अनुशासनात्मक वृद्धि
3.6.3 बहु-अनुशासनात्मक वृद्धि
3.7 प्रवृत्तियाँ
3.8 सारांश
3.9 अभ्यासार्थ प्रश्न
3.10 प्रमुख शब्द
3.11 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

3.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

1. ज्ञान की परिभाषा, परिधि तथा वृद्धि से अवगत करवाना ।
2. ज्ञान का विभाजन तथा विस्तार की जानकारी देना ।
3. विषयों का स्वभाव, उनके प्रकार तथा उत्पत्ति की विधियों का अध्ययन करवाना ।

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

ज्ञान को दार्शनिक तथा अत्यन्त तकनीकी दृष्टि से, विशेषकर उसके स्वभाव, मूल तत्व, उत्पति -तथा वैघता के सम्बन्ध में परिभाषित कियाफ्ता सकता है । परन्तु यदि सीधे व सरल शब्दों में कहा जाये तो जो कुछ भी मनुष्य जाति को ज्ञात है, वह शान है । रंगनाथन ने ज्ञान को पुस्तकालयध्यक्ष के दृष्टिकोण से परिभाषित किया है । उनके अनुसार ज्ञान "मानव द्वारा संरक्षित विचारों का कुल योग है ।" (प्रोलीगेमिना सी.आर. 2, पृष्ठ 81)

स्पष्ट शब्दों में यह कहा जा सकता है कि ज्ञान मनुष्य जाति के पास सामूहिक रूप से उपलब्ध समरस विचारों, तथ्यों, कल्पनाओं, मिथकों, मूल्यों, प्रतीकों व अभिलिखित भावनाओं का कुल योग है । ज्ञान किसी भी समाज की गर्वपूर्ण तथा शक्तिशाली सम्पत्ति होती है । अंग्रेज दार्शनिक फ्रांसिस बेकन (सन् 1561-1626) ने बहुत पहले ही कहा था-'ज्ञान शक्ति है ।' यह उक्ति आज के संदर्भ में सर्वथा उचित प्रतीत होती है । आज ज्ञान आर्थिक, प्रौद्योगिक तथा सैन्य शक्ति का रूप धारण कर चुका है ।

ज्ञान के बिना कोई भी समाज जीवित नहीं रह सकता । मानव समाज का आश्चर्यजनक विकास उसके शैक्षणिक एवं शोध केन्द्रों तथा व्यक्तिगत प्रयत्नों से ज्ञान के निरन्तर संवर्धन एवं वृद्धि का परिणाम है । ये वे शक्तियां हैं जो हमारी प्रणालियों तथा मूल्यों को एक आकार प्रदान करती हैं तथा हमारे उपलब्ध ज्ञान में वृद्धि करती हैं ।

समाज में होने वाले समस्त भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक विकास का आधार लाखों व्यक्तियों द्वारा धैर्यपूर्वक किये गये चिंतन व शोध से उत्पन्न ज्ञान होता है । नई उपलब्धियाँ नवीन या पूर्व में विकसित शान का परिणाम होती हैं । ज्ञान ने ही मानव सभ्यता को अन्धकार से प्रकाश तक पहुंचाया है । ज्ञान ही व्यक्ति को उसका व्यक्तित्व तथा उद्देश्यपूर्णता प्रदान कर बुद्धिमान बनाता है । ज्ञान हमें भौतिक व सामाजिक संसार की समझ तथा उसमें हमारी स्थिति के बारे में बताता है । ज्ञान समाज में फैली हुई गरीबी, बीमारियों व अंधविश्वासों को दूर कर जीवन स्तर में सुधार लाता है । यह मानव सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण तत्व है । ज्ञान की अनभिज्ञाता पाप है । हमारी सभ्यता का अस्तित्व ही ज्ञान तथा उसके व्यवस्थापन पर निर्भर करता है । संक्षेप में कहा जा सकता है कि ज्ञान ने ही गुफा मानव को पर्यावरण तथा सम्पूर्ण ब्रहमाण्ड में नियंत्रण के अभिलाषी जेट विमानों में उड़ान भरने वाले शक्तिशाली प्राणी में बदल दिया है । इस इकाई में विषय, उनके प्रकार एवं वर्धन की विस्तार से चर्चा की गई है ।

3.2 ज्ञान वर्धन (Knowledge)

ज्ञान में निरन्तर प्राकृतिक वृद्धि होती है । हर प्रकार की परिस्थिति में भी यह वृद्धि बनी रहती है । ज्ञानवर्धन की निम्नलिखित तीन विधियाँ मानी जा सकती हैं:

3.2.1 प्राकृतिक (Natural)

ज्ञान स्वयं वर्धनशील है, यह गतिशील स्वभाव के साथ-साथ निरन्तर वर्धनशील होता है । मानव की जिज्ञासा तथा उसका स्वाभिमान संसार के बारे में अधिक से अधिक जानने तथा बताने के लिये उत्तरदायी प्रमुख प्रेरक तत्व हैं ।

3.2.2 संवर्धित (Cultivated)

समस्याओं का समाधान करने के लिये शोध द्वारा अर्जित ज्ञान का प्रयोग होता है । आधुनिक राज्यों तथा नियोजित अर्थ व्यवस्था में यह प्रमुख तथा अत्यन्त लोकप्रिय विधि है । शोध एवं विकास पर पूँजी निवेश औद्योगिक विकास की गारंटी है ।

3.2.3 अभिप्रेरित (Induced)

शान प्रतिस्पर्धा तथा प्रेरणा से भी उत्पन्न किया जा सकता है । यह विधि उपरोक्त दोनों के मध्य की मानी जा सकती है ।

यह तो सर्वविदित है कि पर्यावरण ज्ञान का अन्तिम स्रोत तथा मनुष्य उसके उत्पादन का एकमात्र एजेन्ट है । हमारे चारों ओर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ज्ञान-वस्तु (Knowee) है । जब ज्ञाता ज्ञान-वस्तु के सम्पर्क में आता है तब ज्ञान की उत्पत्ति होती है ।

ज्ञाता ⇔ ज्ञान-वस्तु = ज्ञान

Knower Knowee Knowledge

ज्ञाता मनुष्य होता है जबकि ज्ञान-वस्तु कोई भी मूर्त या अमूर्त तत्व हो सकता है ।

बोध प्रश्न - 1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. ज्ञान को परिभाषित कीजिये ।

   ………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………

2. ज्ञान का महत्व बताइये ।

   ………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………

3. ज्ञानवर्धन की तीन प्रमुख विधियों के नाम बताइये ।

   ………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………

4. विषयों के प्रकार बताइये ।

   ………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………

3.3 ज्ञान का विभाजन : अनुशासन (Division of Knowledge : Disciplines)

ज्ञान अपनी पूर्णता में एक प्रणाली व एकत्व का प्रतीक है । यह विषयों तथा अवधारणाओं का एक जटिल व उलझा हुआ जाल है । इसकी उत्पत्ति एवं विकास जानने के लिये इसको सर्वप्रथम अनुशासनानुसार विभक्त किया जाता है । यह विभाजन ज्ञान को समझने तथा उसे आगे संवर्धित करने के लिये भी आवश्यक है । अनुशासन ज्ञान का एक वृहद् भाग या प्रथम विभाजन से उत्पन्न पंक्ति को माना जा सकता है । परम्परागत रूप से तीन प्रमुख अनुशासनों को उनकी उत्पत्ति तथा विकास के निम्नलिखित क्रम में रखा जा सकता है:

अनुशासन	अध्ययन की विषयवस्तु-	शोध विधि
विज्ञान	भौतिक पर्यावरण का अध्ययन	प्रयोगात्मक

मानविकी	व्यक्ति के भीतरी व्यक्तित्व)Inner self) का अध्ययन	विमर्शक)Reflective) तथा चिन्तनशील)Speculative)
सामाजिक विज्ञान	समाज तथा उसकी संस्थाओं का अध्ययन	सर्वे

उपरोक्त अनुशासनों की प्रमुख विशेषता उनके एकत्र विचारों की सम्बद्धता तथा विषय-वस्तु की समानता अथवा इन अनुशासनों के संवर्धन तथा विकास में प्रयुका शोध विधियों की समानता मानी जा सकती है । अनुशासनों को पुन: उप-अनुशासन तथा विषयों में विभक्त किया जाता है ।

3.3.1 विषय (Subjects)

अनुशासन विषयों से मिलकर बनता है । विषय, एक सामान्य व्यक्ति की समझ में आ सकने वाले विचारों की सुसंगत संरचना को कहा जाता है । रंगनाथन के अनुसार "विषय विचारों का एक संगठित व सुव्यवस्थित समूह है"(प्रोलीगेमिना, सी.आर. 3) । किसी विषय की संरचना उसकी धारणा एवं समझ में सहायता प्रदान करती है । यही ज्ञान जगत में उसकी स्थिति तथा स्तर का निर्धारण करती है । किसी विषय का निरूपण एक पत्रिका (Journal) के छोटे से लेख या सम्पूर्ण पुस्तक के रूप में अथवा बहु खण्डीय विश्वकोश तक में किया जा सकता है । उदाहरणार्थ हिन्दू धर्म विषय पर एक छोटे लेख से लेकर बहु खण्डीय पुस्तक तक मिल जायेगी । विषयों को कुछ विशिष्ट विचार या अवधारणाओं के आधार पर या किसी केन्द्रीय प्रश्न को लेकर अथवा किसी वस्तु या प्रसंगानुसार अभिकल्पित किया जा सकता है ।

रंगनाथन की विचारधारा (School) के अनुसार तीन प्रकार के विषय होते हैं । यद्धपि यह शब्दावली इस विचारधारा के प्रभाव क्षेत्र के बाहर स्वीकार्य नहीं है:

1. मूल विषय (Basic Subjects)
2. यौगिक विषय (Compound Subjects)
3. जटिल विषय (Complex Subjects)

यह शब्दावली मूलतः रसायन विज्ञान विषय से ली गई है ।

एक मूल विषय, यद्‌यपि एकलों से मिलकर बना होता है, तो भी एक इकाई की भांति अविभाज्य होता है । एकल ज्ञान की सूक्ष्मतम इकाई होती है ।

3.4 कोलन क्लासीफिकेशन में ज्ञान का विभाजन (Division of Knowledge in Colon Classification)

कोलन क्लासीफिकेशन इस विचारधारा पर आधारित है कि सम्पूर्ण ज्ञान आपस में एक प्रणाली के रूप में जुड़ा है । दूसरे शब्दों में इसमें एकात्मकता का भाव होता है । सम्पूर्ण ज्ञान एक है, यह तथ्य रंगनाथन ने वेदों (1500 ई.पू) से लिया है । कोलन क्लासीफिकेशन के अन्तर्गत विचार जगत के चित्रण में ज्ञान की जो रूपरेखा अन्त में उभर कर आती है । वह पारम्परिक होने के साथ साथ आधुनिक भी है । (सी.सी.-7, अध्याय डी.बी., पृ० 51-52) यह तथ्य, कि रंगनाथन ने परम्परागत मुख्य तथा प्रमाणिक वर्गो के अस्तित्व को पहचानकर उन्हें मान्यता दी, जो उनकी अत्यन्त परिवर्तनवादी वर्गीकरण

पद्धति को परम्परागत मूल की पद्धति का स्वरूप प्रदान करता है । यह परम्परा की जड़ों से प्रस्फुटित आधुनिकता थी । इसमें ज्ञान जगत का विभाजन सर्वप्रथम अनुशासनानुसार तदुपरान्त मूल विषयों में किया गया है । इस प्रकार विभाजन करते हुए प्रत्येक विषय के केन्द्र तक पहुंचा जा सकता है और कोई भी विषय इस प्रक्रिया से बाहर नहीं होगा । (सी.सी.-7, 1987, खण्ड-सी.सी.2, पृ0 39)

3.4.1 मूल विषय (Basic Subjects)

एक मूल विषय जिसको मुख्य वर्ग भी कहते हैं, अपने सामाजिक परिवेश में परिभाषित होता है तथा इसकी सीमाएं व संख्या, स्थान व समय के अनुसार बदलती जाती हैं । सन् 1876 में मेलविल ड्यूई ने सम्पूर्ण ज्ञान जगत को दस वर्गों में विभाजित किया था । यह मुख्य वर्ग मूलतः तत्कालीन अमेरिकी विश्वविद्यालय परिसरों में पढ़ाये जा रहे अनुशासन ही थे । कोलन के छठवें संस्करण में मुख्य वर्गों की संख्या 60 थी, जो सातवें संस्करण में बढ़कर 750 से भी अधिक हो गई । इस प्रकार, मूल विषयों का नाम तथा उनकी संख्या सदैव अभिगृहीत (Postulated) की जाती है जो कि एक पद्धति से दूसरी पद्धति में तथा समान्तर पर बदलती रहती है । मूल विषय, समकालीन ज्ञान के बारे में इतिहासकारों, दार्शनिकों, शिक्षाशास्त्रियों तथा वैज्ञानिकों की सर्वसम्मति पर निर्भर करते हैं । अतः विषय निरन्तर परिवर्तनशील होते हैं ।

3.4.2 मूल विषयों के प्रकार (Kinds of basic Subjects)

सी.सी.-7 (सी.सी.-7, नियम-डी.ई.ओ., पृ0 66) में दो प्रकार के मूल विषय प्रदर्शित किये गये हैं

1. मुख्य मूल विषय (Main basic Subjects)
2. गैर मुख्य मूल विषय (Non-Main Basic Subjects)

3.4.2.1 मुख्य मूल विषय (Main basic Subjects)

मुख्य विषयों को पुनः निम्नलिखित प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है

1. परम्परागत (Traditional) - मुख्य विषय जैसे गणित, भौतिक विज्ञान, चिकित्सा शास्त्र, शिक्षा शास्त्र, विधि शास्त्र ।
2. अपरम्परागत (Non-Traditional) - मुख्य विषय जो नव उत्पन्न विषय हैं जैसे पुस्तकालय विज्ञान, पशु चिकित्सा शास्त्र, गृह विज्ञान एवं पुस्तक विज्ञान ।

   विलयित (Fused) मुख्य विषय, ऐसे मुख्य विषय सामान्यतः दो परम्परागत विषयों के अनुत्क्रमणीय मेल से उत्पन्न होते हैं । जैसे जैव भौतिकी, भू-रसायन विज्ञान, भू राजनीति विज्ञान, जैव भूगोल, जैव अभियांत्रिकी ।
3. आसवित (Distilled) - मुख्य विषय, यह अनुप्रयुक्त विषय है तथा सामान्यतः प्रणालीकरण (Methodologies) से सम्बन्धित है । जैसे प्रबन्ध विज्ञान, शोध विधि विज्ञान, सम्मेलन तकनीक ।

4. आशिक समावेशन (Partial Comprehension) - यह विषय क्रमिक मुख्य वर्गो के एक ही नाम वाले संचयन है । यह व्यापक (Generic) स्वभाव के होते हैं । पादप विज्ञान, भौतिकीय विज्ञान (Physical Sciences), गणितीय विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि आशिक समावेशित मुख्य वर्गो -के उदाहरण हैं । मूल विषयों की सूची में आशिक समावेशित मुख्य वर्गो को पहले मूल वर्ग के साथ *Z लगाकर प्रदर्शित किया जाता है । जैसे N*Z - ललित कला एवं साहित्य,O*Z-भाषा एवं साहित्य, Q*Z -धर्मशास्त्र एवं दर्शन शास्त्र, T*Z - सामाजिक विज्ञान ।

5. विषय समूह (Subjects Bundles) - यह ऐसे विषय हैं जिन्होंने अपनी विषय-वस्तु विभिन्न विशेषज्ञों के समूहों द्वारा एक ही समय में विकसित अलग-अलग अनुशासनों से ली है । यह आपस में शिथिल बंधनों से जुड़े रहते हैं । यह सामान्यत: अनुपयुक्त स्वभाव वाले मिशन अभिमुख अध्ययन होते हैं जो प्रचलित शब्दों में वृहद् विज्ञान (Big Science) की श्रेणी में आते हैं । रंगनाथन (सी.सी.-7, अध्याय-डी.एफ., पृ0 68) ने कुछ विषय समूहों की परिकल्पना की थी । जो अपने अंकन के साथ-साथ नीचे दिये गये हैं

AD	मृदा विज्ञान	(Soil Science)
AE	द्रव्य विज्ञान	(Material Science)
AM	भूविज्ञान-	(Earth Science)
AP	समुद्र विज्ञान	(Ocean Science)
AR	वायुमण्डलीय विज्ञान	(Atmospheric Science)
AS	अंतरिक्ष विज्ञान	(Space Science)
AV	रक्षा विज्ञान	(Defense Science)

वर्तमान में इनमें से किसी भी विषय की अनुसूची नहीं है । भविष्य में इनके एकलों की अनुसूचियाँ भी हो सकती हैं ।

3.4.2.2 गैर मुख्य मूल विषय (Non-Main Basic Subjects)

यह निम्नलिखित चार प्रकार के होते हैं

1. प्रमाणिक वर्ग (Canonical Classes)

यह परम्परागत किन्तु मुख्य विषय के सीधे विभाजन के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं । जैसे-गणित मुख्य वर्ग में अंक गणित, बीज गणित; रसायन विज्ञान में कार्बनिक तथा अकार्बनिक रसायन; भौतिक विज्ञान में ध्वनि, ऊष्मा, विद्युत आदि ।

2. विशिष्ट घटक (Special Constituents)

सीमित विस्तार अथवा विशिष्टीकृत अनुप्रयोग वाला मुख्य विषय विशिष्ट गैर मुख्य मूल विषय कहलाता है । जैसे निर्जल कृषि (Dry Farming), बाल-चिकित्सा शास्त्र, स्त्री रोग विज्ञान, लघु स्तर अर्थ व्यवस्था (Small Scale Economy)।

3. प्रणाली घटक (System Contituents)

जब एक विषय का किसी विचारधारा या प्रणाली से अध्ययन किया जाता है । जब उसे प्रणाली गैर मुख्य मूल विषय कहते हैं । जैसे होम्योपेथिक चिकित्सा विज्ञान, मनोविश्लेषण, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, मार्क्सवादी अर्थव्यवस्था, सापेक्षता का सिद्धांत आदि ।

4. पर्यावरणिक मूल विषय (Environmental Basic Subjects)

किसी विषय का सामान्येतर (Extra Normal) पर्यावरण में अध्ययन जैसा कि सी.सी.-7 के अध्याय डी.ओ. में पृ0 54-56 तक दर्शाया गया है । यह एक नवीन अवधारणा है । कुछ पर्यावरणिक मूल विषय इस प्रकार हैं- रेगिस्तानी वनस्पति विज्ञान, समुद्री वनस्पति विज्ञान, ऊष्ण कटिबन्धीय चिकित्सा शास्त्र, भू मध्यवर्ती जीव विज्ञान, उच्च स्थानिक (High Attitude) अभियांत्रिकी आदि ।

3.5 सामाजिक ज्ञान शास्त्र (Social Epistemology)

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि ज्ञान मूलत: सामाजिक स्वभाव का होता है । तथ्यत: ज्ञान वही है जो समाज के लिये उपलब्ध हो या सार्वजनिक ज्ञान हो । ज्ञान की उत्पत्ति के कारक व साधन अनेक व भिन्न प्रकार के होते हैं । प्रकृति ज्ञान की उत्पत्ति का प्रमुख स्रोत तथा मानव उसका एक मात्र एजेन्ट होता है जो उसके पास उपलब्ध प्रयोगात्मक, अनुभवसिद्ध तथा ऐतिहासिक विधियों द्वारा शोध करके ज्ञान के भंडार में वृद्धि करता है । सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ज्ञान के स्वभाव का अध्ययन एक नई विधा को जन्म देता है । जिसे जैसी हॉक शेरा (1903-1982) के शब्दों में सामाजिक ज्ञान शास्त्र कहते हैं ।

हाल के वर्षो में दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, तत्वमीमांसा (Metaphysics), समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, आनुवांशिकी, भाषा विज्ञान, शोध विधि विज्ञान, साइबरनेटिक्स (Cybernetics), कृत्रिम प्रबुद्धता (Artificial Intelligence), तथा पुस्तकालय एव सूचना विज्ञान विषयों में ज्ञानशास्त्रीय अध्ययनों का बढ़ता हुआ महत्व स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है । यद्यपि विषय वृद्धि की विधियों पर बहुत कम अध्ययन किये गये हैं । इनसे ज्ञान में संरचनात्मक (Anatomical) तथा क्रियात्मक (Physiological) वृद्धि का पता चल सकता है । इनसे ज्ञान के संवर्धन व प्रवर्धन के लिये उत्तरदायी कारकों का भी पता चल सकता है ।

ज्ञान ही पुस्तकालयाध्यक्षों का मुख्य साजोसामान (Stock in Trade) होता है । अत: इसका अध्ययन हमारे लिये उतना ही महत्वपूर्ण हैं जितना कि एक सर्जन के लिये शरीर रचना विज्ञान का अध्ययन । इसके अध्ययन के निहितार्थ पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के संदर्भ में अनेक व व्यापक स्तर पर प्रभावी हैं । डी. एस.आर.रंगनाथन (1892-1972) ज्ञान वृद्धि की विधियों के अध्ययन में अत्यन्त महत्वपूर्ण पथ प्रदर्शक थे । उन्होंने 1948 में दिल्ली विश्वविद्यालय के एम.लिब.एस.सी. के पाठ्क्रम में 'विषय जगत की संरचना तथा विकास' नाम से एक पेपर आरम्भ किया । उन्होंने इस विषय पर एक पुस्तक की भी घोषणा की थी । यद्यपि वह पुस्तक कभी प्रकाशित नहीं हो सकी । तब भी इस विषय में उनकी रूचि हमेशा बनी रही और उनके प्रयासों के कारण नये-नये परिणाम मिलते रहे । यह कार्य उनकी विचारधारा से प्रभावित व्यक्तियों द्वारा डॉक्यूमेन्टेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग सेन्टर, बैंगलोर तथा अन्य स्थानों पर जारी रखा गया है । जैसी एच.शैरा (1903-1982) ने इसकी "पुस्तकालय विज्ञान के मूल दर्शन में"(रंगनाथन के चिरस्थायी) बौद्धिक योगदान के रूप में प्रशंसा की है ।

3.6 ज्ञान निर्माण की तीन विधियाँ (Three Modes of Formation of Knowledge)

आप इकाई द्‌वितीय में सरल, यौगिक एवं जटिल विषयों के निर्माण की विधियों से परिचित हो चुके है । यहां पर रंगनाथन तथा उनके सहयोगियों द्‌वारा कोलन क्लासीफिकेशन के सात वें संस्करण में ज्ञान वृद्धि की समस्त विधियों को निम्नलिखित तीन सामान्य विधियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है

(अ) विशिष्टीकरण द्‌वारा वृद्धि

(ब) अन्तर-अनुशासनात्मक; तथा

(स) बहु-अनुशासनात्मक वृद्धि

3.8.1 विशिष्टीकरण प्रवृत्तियाँ (Specialization Trands)

जब अत्यधिक वृद्धि व विस्तार के कारण किसी विषय का आकार बेडोल हो जाता है तो उसके अध्ययन के अस्तित्व को बचाने के लिये विखण्डन या संघर्षण की प्रक्रिया ही एकमात्र रास्ता बच जाता है । समाज के कार्य विभाजन इस प्रकार के विस्तार का सीधा परिणाम माने जा सकते हैं । जब एक समुदाय काफी बड़ा हो जाता है तो उसमें अलग-अलग कार्यो के लिये विशेषज्ञ स्वत: ही उत्पन्न हो जाते हैं । उसी प्रकार शैक्षणिक क्षेत्र में किसी सूक्ष्म विषय को अधिक बेहतर समझने के लिये उसका तीक्ष्ण एवं गहन अध्ययन किया जाता है । विशेषज्ञता किसी विषय को गुणवत्ता तथा विकास के पथ पर ले जाती है । आजकल वैज्ञानिक केवल सामान्य वैज्ञानिक नहीं होते हैं, वे भौतिकवाद, रसायनज्ञ, जीव विज्ञानी आदि होते हैं । यह प्रवृत्ति यहीं समाप्त नहीं होती । सूक्ष्मतर क्षेत्रों में विशेषज्ञता, जिसे अति विशिष्टीकरण कहा जा सकता है, आज की मुख्य प्रवृत्ति बन गयी है । अब तो शायद ही कोई सामान्य भौतिकवाद होता है । भौतिकी में नाभिकीय भौतिकवादी, सैद्धांतिक भौतिकवादी, निम्नताप भौतिकवादी, या प्लाज्मा भौतिकविद्‌ जैसे विशेषज्ञ ही मिलते हैं । प्रत्येक अनुशासन में परिलक्षित यह विखण्डन प्रवृत्तियाँ एक विकृत स्वरूप धारण कर चुकी हैं । ऐसी अति विशेषज्ञता यद्‌यपि संतुलित विकास के दृष्टिकोण से उपयुक्त नहीं है, किन्तु इससे अत्यधिक मात्रा में नवीन ज्ञान उत्पन्न हो रहा है । इस जटिल समाज में विशेषज्ञता का ही बोलबाला है हमें इसकी आवश्यकता है और यह हमें मिल भी रही है । विशेषज्ञता, विखण्डन तथा पटलीकरण की निम्नलिखित विधियों द्‌वारा ही संभव होती है:

3.6.1.1 विखंडन(Fission)

जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है इसमें नाभिकीय शृंखला प्रतिक्रिया की भांति एक विषय क्रमानुसार छोटे-छोटे हिस्सों में विखण्डित होता जाता है । विखण्डन की क्रमिक प्रक्रिया में हम ज्ञान के विस्तृत क्षेत्र से सूक्ष्म क्षेत्रों की ओर बढ़ते जाते हैं । इस प्रक्रिया में लगे समय तथा खण्डों के आकार के आधार पर इसे निम्नलिखित दो स्वरूपों में विभाजित किया जा सकता है ।

3.6.1.1.1 विच्छेदन (Dissection)

यह शब्द शरीर रचना विज्ञान से लिया गया है । किसी विषय को समान स्तर के अधीनस्थ हिस्सों की एक पंक्ति में बांटना ही विच्छेदन कहलाता है । एक पूरी बडे को (कमोबेश समान मोटाई

की) फांकों में काटना विच्छेदन है । भौतिक विज्ञान का उसकी परम्परागत शाखाओं जैसे द्रव्य गुणधर्म (Properties of Matter), ऊष्मा. प्रकाश, ध्वनि तथा विद्युत में विभाजन विच्छेदन का एक अच्छा उदाहरण है । पृथ्वी का सात घटक महाद्वीपों में विभाजन भी विच्छेदन का ही उदाहरण है । इस प्रकार उत्पन्न हुये प्रभाग समान जाति (genus) के, पारस्परिक अनन्य तथा समान स्तर के होते हैं । सरल शब्दों में, इस प्रकार उत्पन्न सभी भाग वर्गो / तत्वों की एक पंक्ति बनाते हैं । इसी तरह भारत का उसके घटक राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों में विभाजन विच्छेदन का ही उदाहरण है । विच्छेदन की प्रक्रिया क्रियात्मक रूप में तत्क्षणिक तथा क्षैतिजिक होती है । रंगनाथन ने कभी-कभी विच्छेदन के लिये विखण्डन शब्द का ही प्रयोग किया है । किन्तु विच्छेदन एक बार में सम्पन्न होने वाली क्रिया (One Time Action) है ।

3.6.1.1.2 अनाच्छादन (Denudation)

किसी एक वर्ग या तत्व (Entity) का लम्बे समय तक तथा बारम्बार विच्छेदन अनाच्दादन कहलाता है । इसमें किसी विषय की क्रमिक परतों को इस प्रकार उतारते हैं जैसे किसी अतल (bottomless) गहराई के तल तक पहुंचने का प्रयत्न किया जाये । यह बारम्बार विच्छेदन या संघर्षण (Attrition) का परिणाम हो सकता है । निम्नलिखित विषय श्रृंखला अनाच्दादन की प्रक्रिया को प्रदर्शित करती है जैसे-विज्ञान, भौतिकीय विज्ञान, रसायन विज्ञान, कार्बनिक रसायन, सुगंधित मिश्रण (Aromatic Compounds), बेन्तीनॉय्डस (Benzenoids), बेन्जीन आदि । यह पदानुक्रम में ऊपर से नीचे की ओर कार्य करते हुए क्रमिक अधीनस्थता में तत्वों की एक शृंखला उत्पन्न करता है । विश्व → एशिया → भारत → राजस्थान → कोटा यह विभाजन अनाच्छादन है । जैसा पहले भी बताया जा चुका है । यह प्रक्रिया लम्बी तथा लगातार चलने वाली होती है ।

यहां यह उल्लेखनीय है कि विच्छेदन तथा अनाच्दादन दोनों ही सापेक्ष शब्द हैं, जो केवल मात्रानुसार भिन्न होते हैं । अनाच्दादन किसी वस्तु का बारम्बार विच्छेदन है । अत: विच्छेदन अनाच्दादन में समाहित है ।

3.6.1.2 पटलीकरण (Lamination)

मुख्य वर्ग हमेशा विस्तृत, अस्पष्ट तथा विसरित होते हैं । जब किसी मुख्य वर्ग के अध्ययन क्षेत्र को एकानेक शीर्षकों के उल्लेख द्वारा सीमित किया जाता है तो वह मूल विषय से यौगिक विषय बन जाता है । किसी पैतृक मूल विषय के साथ एक अथवा अधिक एकलों को जोड़ने की प्रक्रिया को पटलीकरण कहते हैं । अंग्रेजी भाषा, भाषा मूलक व्याकरण तथा अंग्रेजी व्याकरण, यह तीनों उदाहरण मुख्य वर्ग भाषा विज्ञान के पटलीकृत विषयों के हैं । इन विषयों को मूल विषय भाषा विज्ञान पर 'अंग्रेजी', 'व्याकरण' तथा 'अंग्रेजी व्याकरण' की परत चढाकर प्राप्त किया जाता है । रंगनाथन की शब्दावली में इनको यौगिक विषय कहा जाता है । अत: एक मूल विषय के साथ एक या अधिक एकलों को जोड़कर यौगिक विषय बन जाता है । किसी विषय के साथ जुडने वाली परतों की अधिकतम संख्या उस विषय के सम्भाव्य एकलों जितनी हो सकती है । किसी विषय में इन परतों की संख्या उसके विशिष्टीकरण के अनुपात में होती है । इस विषय जगत में सबसे बडी संख्या में पटलीकृत या यौगिक विषय ही होते हैं । यह वस्तुतः असंख्य होते हैं । सी.सी., यू.डी.सी या बी.सी. जैसे पक्षात्मक वर्गीकरणों में इन यौगिक

विषयों की संरचना अत्यन्त स्पष्ट होती है । वस्तुत: यह दूसरी तरह का विशिष्टीकरण है । जिससे विखंडित विषयों के एक या अधिक पक्षों को पुन: एकीकृत किया जाता है । यह किसी मूल विषय में एक नवीन आयाम जोड़ते है ।

3.6.2 अन्तर-अनुशासनात्मक वृद्धि (Inter-disciplinary growth)

अन्तर-अनुशासनात्मक विषयों को ऐसे विषयों के रूप में भी परिभाषित किया जाता है । जो या तो भिन्न-भिन्न अनुशासनों के विद्वानों की रूचि के हो अथवा इनके विपरीत तथ्य भी सत्य हो (Or vice-varsa) । विभिन्न विषयों में विशिष्टीकरण की प्रवृति इतनी अधिक हो गई थी कि विभिन्न विद्वान एक दूसरे से अलग अपने ढर्रे पर चलने लगे थे । यहां तक की एक ही क्षेत्र के विद्वान एक दूसरे के शोध कार्य के क्षेत्र को नहीं समझ पा रहे थे । विषयों में इतनी विशिष्ट शब्दावली (Too jargon ridden) प्रयुक्त होने वाली थी कि विद्वानों का आपस में सम्प्रेषण मुश्किल हो गया । इस प्रवृति के अभावों को एक नई प्रवृति अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययन, जिसने विशेषकर पिछले विश्व युद्ध के बाद जोर पकड़ा, के द्वारा सन्तुलित किया जा रहा है । इस कारण विषयों की आडी-तिरछी सीमाऐं हो गयी हैं तथा पूर्व में प्रचलित स्पष्ट सीमांकन का विचार ही समाप्त हो गया है । टीम तथा रिले रिसर्च, विशेषज्ञों तथा संस्थानों के मध्य निकट सहयोग तथा विषय परामर्शदाताओं की उपलब्धता के कारण विद्वानों के लिये अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययनों हेतु मिलकर काम करना संभव हो सका है। अब तो इंटरनेट ने दूरियों के विचार को ही निरर्थक बना दिया है । सूचना के निर्बाध प्रवाह से अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययनों पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा है । विषयों के सानिध्य (Juxtaposition) में ज्ञान का विकास होता है । महान फ्रांसिसी दार्शनिक डेनिस डिडरोट (Denis Diderot) ने ही कहा है कि वस्तुऐं अपने से भिन्न वस्तुओं द्वारा पोषित होती हैं । (Things are nourished by things unlike themeselves) डॉ. रंगनाथन ने इन विषयों के निर्माण की निम्नलिखित दो विधियों की पहचान की हैं:

3.6.2.1 शिथिल समुच्चय (Loose Assemblage)

दो या अधिक विषयों या उनके हिस्सों का थोड़ा अस्थायी, आकस्मिक या संयोगवश किन्ही सम्बन्धों, जैसे प्रभाव तुलनात्मक, झुकाव, उपकरण या फिर अन्य अपरिभाषित सम्बन्धों द्वारा संयोजन शिथिल समुच्चय कहलाता है । यह सुयोग्य विषय भिन्न अनुशासनों से होते हैं । उदाहरणार्थ पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु सांख्यिकी, नसों हेतु मनोविज्ञान, 'पुस्तकालय संचालन में कम्प्यूटर का प्रभाव, प्रसूचीकरण व वर्गीकरण के मध्य सम्बन्ध तथा व्यापारिक अंग्रेजी ऐसे ही कुछ विषय हैं । यह पारस्परिक क्रियाशील विषय एक ही मुख्य वर्ग से या दो भिन्न-भिन्न मुख्य वर्गो से हो सकते हैं । ऐसे उदाहरणों में एक विषय का अध्ययन दूसरे विषय के प्रकाश में किया जाता है तथा यहां उनका मिलना या इकट्ठा होना तदर्थ या शिथिल कहा जा सकता है । ऐसे विषय अनिवार्यत: बहु पक्षीय तथा अन्तर्-अनुशासनात्मक रूचि के होते हैं । इस प्रक्रिया द्वारा असीमित संख्या में विषयों का निर्माण किया जा सकता है । रंगनाथन ने शिथिल समुच्चय की प्रक्रिया द्वारा बनने वाले विषयों को जटिल विषय नाम दिया है । मिश्रित विषय का प्रत्येक घटक एक दशा (Phase) कहलाता है । विषयों के मध्य कुल तीन-अन्तर-विषय, अंत: पक्ष, तथा अन्त: पंक्ति स्तरों पर छ: प्रकार के सम्बन्ध जैसे- सामान्य, झुकने वाले, तुलनात्मक, विभिन्नता

वाले, उपकरण तथा प्रभाव वाले सम्बन्ध हो सकते हैं । इस प्रकार रंगनाथन ने सी.सी.-7 में कुल 6x3=18 प्रकार के जटिल विषयों की पहचान की है ।

3.6.2.2 विलयन (Fusion)

विलयन, शिथिल समुच्चय की उन्नत अवस्था है । जब शिथिल समुच्चय के सम्बन्ध दृढ़ होकर स्थायी सम्बन्धों में बदल जाते हैं तथा उनके विभिन्न घटक अनुत्क्रमणीय रूप में एक दूसरे में विलीन होकर, एक नितान्त नये विषय को जन्म देते हैं । जिसके अपने विशिष्ट एकल तथा लिटरेरी वारंट होते हैं तो ऐसे विषयों को विलयित विषय कहा जाता है । विलयित विषय जटिल वर्गो से बढ़कर मूल विषय बन जाते हैं । जैव भौतिकी, जैव रसायन, चिकित्सकीय भूगोल, जैव अभियांत्रिकी, भू राजनीति विज्ञान, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी ऐसे ही कुछ समरूप तथा अनुत्क्रमणीय सम्बन्धों से उत्पन्न विलयित मुख्य विषयों के उदाहरण हैं । यह विषय जटिल विषय से विलयित होकर मूल विषय बन गये हैं ।

3.6.2.2.1 जन्मजात विलयित विषय (born Fused Subjects)

कुछ विषय शुरू से ही पक्ष विलीन (Melded) होते हैं तथा उनके लिये प्रयुक्त शब्दावली से उनके एकाकी होने का ज्ञान होता है । जैसे भाषा विज्ञान का जन्म भाषा शास्त्र (Philology), तथा दर्शनशास्त्र, दोनों के विलयन से हुआ था । अतः भाषा विज्ञान एक विलयित विषय है । जिसने आगे चलकर अन्य विलयित विषयों जैसे मनो भाषा विज्ञान तथा सामाजिक भाषा विज्ञान को जन्म दिया।

यद्यपि विलयन एक तथ्य (Phenomenon) के रूप में अत्यन्त प्राचीन विचार है किन्तु विषयों की उत्पत्ति की विधि के रूप में इसकी पहचान 1968 में की गई थी । दरसल, पूर्व में कोलन क्लासीफिकेशन में विलयन को शिथिल समुच्चय के अन्तर्गत रखा गया था ।

3.6.3 बहु-अनुशासनात्मक वृद्धि (Multidisciplinary growth)

अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में डॉ. रंगनाथन ने डॉक्यूमेन्टेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग सेन्टर, बैंगलोर (स्थापित 1962) के सहयोगियों के साथ विषय निर्माण की तीन अतिरिक्त विधियों की पहचान की थी । यह तीनों विधियाँ नवीनतम शोध प्रवृतियों के अनुसार बहु-अनुशासनात्मक स्वभाव की हैं । ऐसे विषय जिनमें विभिन्न अनुशासनों के विशेषज्ञों की विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है, बहु-अनुशासनात्मक विषय कहलाते हैं । शोध के क्षेत्र में 'नवीनतम फैशन-क्षेत्र-अध्ययन' अथवा 'मिशिन अभिमुख अध्ययन', ऐसे मुख्यतः अनुप्रयुक्त स्वभाव के विषयों के प्रादुर्भाव के लिये उत्तरदायी हैं । वृहद् टीम कार्य, बडी शोध परियोजनाओं हेतु आर्थिक अनुदान, सैद्धान्तिक तथा अनुप्रयुक्त शोध की पारस्परिक क्रिया (Interaction) के कारण भी ऐसे विषय उत्पन्न होते हैं । बहु-अनुशासनात्मक विषय निर्माण की यह तीनों विधियां निम्न प्रकार हैं:

3.6.3.1 आसवन (Distilation)

जब अपेक्षाकृत अपूर्ण रूप से विकसित तकनीक विभिन्न अनुशासनों में प्रयुक्त होने के कारण विकसित होने लगती है । तब इसका अपना साहित्य विभिन्न अनुप्रयोगों से आसवित होता है । इस

प्रक्रिया के परिणामस्वरूप, जब यह साहित्य पर्याप्त मात्रा में इकट्ठा हो जाता है तो यह एक मुख्य वर्ग का स्थान (Status) प्राप्त कर लेता है । ऐसे मुख्य वर्ग को आसवित मुख्य वर्ग कहते है । इन मुख्य वर्गों के निर्माण की प्रक्रिया अत्यन्त धीमी होती है । संग्रहालय विज्ञान, प्रबन्ध विज्ञान, जीवनवृत्ति विज्ञान (Careerology), पुरातत्व विज्ञान, सेमीनार तकनीक, शोध पद्धति विज्ञान, कोलन क्लासीफिकेशन में शामिल किये गये आसवित मुख्य वर्गों के कुछ उदाहरण हैं । इनको मुख्य वर्गों की पंक्ति की नवीन प्रविष्टियां कहा जा सकता है । यह स्वाभाविक रूप से बहु-अनुशासनात्मक होते हैं क्योंकि इन्हें विभिन्न अनुशासनों के अनुभवों द्वारा पोषित किया जाता है । यद्यपि विलयित विषयों के विपरीत इनके नाम एकाकी प्रतीत होते हैं । इनका बहु-अनुशासनात्मक स्वभाव भीतर की विषय-वस्तु से परिलक्षित होता है बाहरी नाम से नहीं ।

3.6.3.2 संचयन (Agglomeration)

परम्परागत रूप से तथा कई बार आवश्यकतानुसार कुछ समान स्तर के मूल विषय एक समूह के रूप में साथ प्रतीत होते हैं । यह विषय न तो शिथिल समुच्चय में और न ही विलयित अवस्था में होते हैं । अपने अन्त: सम्बन्धों में यह नितान्त अक्रिय होते हैं । कजन (Consin) की तरह यह सम्बन्धित होते हैं । किन्तु अन्तस-प्रजनन नहीं करते । परम्परागत निकटता इनमें एक दूसरे के प्रति अवहेलना का भाव लाती है यद्यपि यह शत्रुता तक नहीं पहुंचता । पादप विज्ञान (Plant Science), (वनस्पति विज्ञान, कृषि विज्ञान, उद्यान विज्ञान, वानिकी), गणितीय तथा भौतिकीय विज्ञान, मानविकी, धर्मशास्त्र तथा दर्शनशास्त्र, भूगोल तथा इतिहास, जैव तथा चिकित्सकीय विज्ञान, संचयन अथवा आशिक समावेशन के कुछ उदाहरण हैं । सामान्यत: एक आशिक समावेशित वर्ग के घटक क्रमिक मुख्य वर्ग होते हैं । यह समान जातिगत (Generic) स्वभाव के भी होते हैं जैसे सामाजिक विज्ञान, जीवन विज्ञान । कोलन क्लासीफिकेशन में ऐरने अनेक विषय अनेक स्तरों पर दिये गये हैं. संचयित विषयों को विखंडित विषयों के पुन: एकीकरण के रूप में भी देखा जा सकता है । रंगनाथन का मानना है कि "आज जो आशिक समावेशन है वह बहुत पहले, विखंडन की प्रक्रिया के समुचित रूप से विकसित होने से पहले, एक मुख्य विषय रहा होगा" । ऐसे विषय सामान्यत: पत्रिकाओं के शीर्षक तथा विश्वकोशों में ही दिखाई देते हैं । आशिक समावेशित विषयों को नई शब्दावली में संग्रहित विषय भी कहा जाता है । संचयित विषयों के अपने स्वयं के एकल नहीं होते, यद्यपि इनकों मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है ।

3.6.3.3 विषय समूह (Subject Bundies)

रंगनाथन एवं गोपीनाथ के अनुसार, "विषय समूह के अन्तर्गत अलग-अलग विशेषज्ञों द्वारा विकसित अलग-अलग अनुशासनों से लिये गये विषय आते है" । ऐसे विषय एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं और या तो दूसरे विषयों में इनका अनुप्रयोग होता है या फिर यह दूसरें विषयों के साथ मिलकर समान उद्देश्य के लिये कार्य करते हैं । यह एक दूसरे के सम्बन्ध में अक्रिय नहीं होते । यह एक नाम के अन्दर अनेक विषयों का शिथिल समुच्चय है । यह सामान्यत: अनुप्रयुक्त स्वभाव के क्षेत्र अध्ययन अथवा मिशन अभिमुख अध्ययन होते हैं । यह एक व्यापक आधार वाली शोध टीम द्वारा शुरू की गई मंहगी शोध परियोजना के रूप में भी हो सकते हैं । ऐसे परियोजनाएं "वृहद् विज्ञान" (Big Science)

के क्षेत्र में आती है । आरम्भिक अवस्था में प्रत्येक विशेषज्ञ या उनके ग्रुप का एक निर्धारित कार्य क्षेत्र होता है । सी.सी.-7 में प्रदर्शित कुछ विषय समूह इस प्रकार हैं जैसे भूतल विज्ञान (Surface Science), सामाजिक विज्ञान, द्रव्य विज्ञान (Material Science), भू विज्ञान जल विज्ञान, समुद्र विज्ञान, गहन समुद्र विज्ञान, वायुमण्डलीय विज्ञान, रक्षा विज्ञान । टेनिसी वैली (Tennessee Valley) परियोजना, अन्टार्कटिक अभियान, अपोलो मिशन, गांधी अध्ययन, भारतीय विद्या, चीन विद्या, पर्यावरण अध्ययन, ऊर्जा विज्ञान, महिला अध्ययन, क्षेत्र अध्ययन आदि यह विषय समूह के कुछ प्रयोगात्मक उदाहरण हैं । इनको विषय झुण्ड (Subject Science) भी कहा जाता है । अब इन विषयों की लिटरेरी वारंट भी होने लगी है । इसी संदर्भ में डॉ. रंगनाथन एवं गोपानाथ द्वारा उद्धरित दो उदाहरण हैं

1. मिशन सार्स नॉर्थ एटलांटिक डीप सी एक्सपीडिशन (1910) : रिपोर्ट ऑन द साइन्टिफिक रिजल्ट्स, 1932.
2. इंडियन ओसन एक्सपीडिशन रीसेन्ट प्रोग्रेस इन सर्फेस साइन्सेज. 1964.

3.7 प्रवृत्तियाँ (Trends)

विषय निर्माण की तुलना जीव वैज्ञानिक विकास से करते हुए केविन मैकगेरी ने ज्ञान के निर्माण की दो अन्य विधियों की पहचान की है- बहु-अनुशासनात्मक विषयों के निर्माण की यह विधियां संयोजन तथा मशीन आधारित विषय है ।

3.7.1 संयोजन (Annexation)

कुछ कम विषयवस्तु (Not so dense) वाले विषय अपनी विषय वस्तु को बढाने के लिये दूसरे क्षेत्रों से शीर्षकों को जोड या संयोजित कर लेते हैं । यह शुरू में बहुरंगी से लगने वाले शीर्षक शिथिल किन्तु अनुत्क्रमणीय तरीके से विषय से जुड जाते हैं । भूगोल इसका स्पष्ट उदाहरण है । आरंभ में वर्णन तथा यात्रा तक सीमित इस विषय ने सामाजिक, मानविकी तथा जैव विज्ञानों से अनेक व भिन्न-भिन्न शीर्षक अपने विषय क्षेत्र में मिला लिये हैं । इसकी विषय वस्तु में इतनी अनेकता है कि उसका स्पष्ट वर्गीकरण करना असंभव प्रतीत होता है लेकिन एक मुख्य वर्ग के रूप में अनेक शीर्षक स्थाई रूप से मिलकर इसकी विषय वस्तु बनाते हैं ।

3.7.2 मशीन आधारित विषय (Machine Based Subjects)

कुछ विषय एक उपकरण या मशीन के आधार पर विकसित होते हैं जैसे सूक्ष्मदर्शी (Microscope), के आधार पर विकसित विषय सूक्ष्मदर्शिकी (Microscopy) अब एक अत्यन्त प्रतिष्ठित, परिष्कृत तथा भली-भांति संगठित विषय है । इसी प्रकार, कम्प्यूटर विज्ञान जो कि कम्प्यूटर पर आधारित है, को संज्ञानात्मक विज्ञानों (Cognitive Sciences) में हुये विकास से गहन व विस्तृत लाभ पहुंचा है । यह बहु पक्षीय विषय प्रौद्योगिकी, समाज तथा हमारे समक्ष उपस्थित व्यापक क्षेत्रों के अनेक पक्षों से सम्बन्धित है । इसके द्वारा उत्पन्न ज्ञान हमें अपने अस्तित्व के दूसरे धरातल पर ले जा रहा है तथा मानव-मशीन सम्बन्धों की बेहतर समझ पैदा कर रहा है ।

सामाजिक विज्ञानों में आ रही व्यावसायिकता ने ऐसे अध्ययनों को प्रोत्साहित करने का काम किया है । रंगनाथन का यह मानना हैं कि आशिक समावेशन तथा विशेष समूह पुस्तक उत्पादन के

क्षेत्र में हो रहे नवीन विकास का परिणाम है । दूसरे शब्दों में, ऐसे विषय प्रकाशकों द्वारा उत्पन्न किये गये हैं न कि शोधकर्ताओं व शिक्षाशास्त्रियों द्वारा । लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है । ज्ञान की जटिलता हमेशा उसका सामना करने के लिये बनाये गये सामाजिक साधनों से आगे रहती है । यह तो शोध प्रवृतियां अथवा सामाजिक आवश्यकताएं हैं जो कि प्रकाशन उद्योग पर रचनात्मक प्रभाव डालते हैं, जबकि इसके विपरित स्थिति सत्य नहीं हो सकती । शोध प्रवृतियां सामाजिक आवश्यकताओं द्वारा प्रक्षेपित होती हैं । उदाहरणार्थ, विषय समूह सामाजिक आवश्यकता तथा भारी वित्तीय उपलब्धता के कारण अस्तित्व में आये । प्रकाशक तो केवल लेखकों, सम्पादकों तथा शोधकर्ताओं के मार्गदर्शन में चलते हैं ।

बोध प्रश्न - 2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. विषय किसे कहते हैं?

....

....

2. सीसी. के सातवें संस्करण मे ज्ञान का विभाजन बताइये ।

....

....

3. ज्ञान निर्माण की तीन विधियां कौन-कौनसी हैं?

....

....

4. विखंडन क्या है ?

....

....

3.8 सारांश (Summary)

रंगनाथन ने उपरोक्त विधियों की खोज प्रकाशित साहित्य के अनुभवसिद्ध अध्ययनों (Empirical Studies) द्वारा अपनी वर्गीकरण पद्धति में इन विषयों के समायोजन की आवश्यकता के कारण की थी । स्पष्टत: ऐसे परिणाम कभी अन्तिम नहीं होते । विषय तो लगातार विकसित होंगें, बटेंगें जुड़ेंगे, एक दूसरे के सानिध्य में आयेंगे तथा अलग-अलग तरीकों से पुन: संयोजित होगें । जितना ही हम शान के स्वभाव तथा प्रकाशन प्रवृतियों के बारे में जानेंगे उतना भविष्य में विषयों की उत्पत्ति की नई विधियों की कल्पना कर पायेंगे । यह इतना भिन्न, इतना खूबसूरत, इतना नवीन, किन्तु सदैव परिवर्तनशील ज्ञान जगत भविष्य में भी अब तक अंजानी विधियों से उत्पन्न विषयों की रचना करता रहेगा । पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धतियों की ग्राह्यता बढ़ाने के लिये ऐसे अध्ययनों की उपयोगिता अत्यन्त स्पष्ट है । इन नये अध्ययनों के फलस्वरूप विकसित हो रहे विषयों को समायोजित करने के लिये यदि नई वर्गीकरण पद्धतियों का निर्माण संभव नहीं, हो तो कम से कम वर्तमान पद्धतियों में नये प्रावधानों की तो निश्चित आवश्यकता है ही ।

3.9 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. ज्ञान की परिभाषा दीजिये तथा इनकी वृद्धि की तीन विधियों का वर्णन कीजिये ।
2. विषय क्या होता है? यह किस प्रकार मूल विषय से भिन्न होता है? विभिन्न मूल विषयों के नाम बताइये ।
3. अन्तर-अनुशासनात्मक विषयों की उत्पत्ति की विधियों के नाम बताइये ।

3.10 प्रमुख शब्द (Key Words)

मूल विषय (Basic Subject)	:	एक मुख्य वर्ग बिना किसी एकल विचार के । उदाहरण-गणित, बीज गणित, होम्योपैथी आदि ।
जटिल विषय (complex Subjects)	:	कम से कम दो दशाओं (Phases) से बना झा विषय। उदाहरण -चित्रकारों हेतु रेखागणित, प्रसूचीकरण एवं वर्गीकरण के मध्य सम्बन्ध । कुल 18 प्रकार के जटिल विषय होते हैं ।
यौगिक विषय (Compound Subjects)	:	एक या अधिक एकलों के साथ एक मूल विषय । उदाहरण-गेंहूँ की कृषि, भारत में कृषि ।
डेटा (Data)	:	यह अपरिष्कृत तथ्य, आकृति तथा इन्द्रिय बोध से उत्पन्न प्रभाव होते हैं । यह हमारे आस पास के वातावरण से प्राप्त अपरिष्कृत संकेतों से बनते हैं । बुद्धि (इन्द्रिय बोध से प्राप्त) संकेतों को डेटा में संसाधित करती है ।
अनुशासन (discipline)	:	ज्ञान का प्राथमिक विभाजन या एक बड़ा भाग । एक अनुशासन की प्रमुख विशेषता इसकी शोध प्रणाली या विषयवस्तु की समानता होती है । परम्परागत रूप से ज्ञान जगत तीन अनुशासनों में विभक्त किया जाता है - विज्ञान, मानविकी तथा सामाजिक विज्ञान । अब अनेक उप-अनुशासन भी उत्पन्न हो गये हैं जैसे जैव विज्ञान, व्यवहारवादी विज्ञान, भू विज्ञान आदि ।
सूचना (Information)	:	यह संधित डेटा है । सूचना वह है जिरश्ए संप्रेषित किया जाता है तथा अध्ययन एवं पारस्परिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है ।
अन्तर-अनुशासनात्मक विषय (Inter-disciplinary Subjects)	:	ज्ञान का वह क्षेत्र जो दो मुख्य वर्गो में समान रूचिकर हो तथा जिसके अध्ययन हेतु दो भिन्न विषयों के विशेषज्ञों की विशेषता आवश्यक हो । उदाहरण जैव भौतिकी, भू रसायन, चित्रकारों हेतु रेखा गणित, सामाजिक मनोविज्ञान आदि ।

एकल (Isolate)	:	ज्ञान का सूक्ष्मतम विभाजन। यह केवल एक मूल विषय के संदर्भ में ही अर्थपूर्ण होता है ।
ज्ञान (Knowledge)	:	मानव समाज द्‌वारा संरक्षित विचार, तथ्य, कथा, कल्पना, मिथ, अभिलिखित भावना, घटना, खोज, आविष्कार, सिद्धांत, संस्मरण एवं अनुभवों का योग।
मुख्य वर्ग (Main Class)	:	किसी केन्द्रीय किन्तु वृहद्‌ प्रश्न या विषयवस्तु पर आधारित विषयों का एक सुव्यवस्थित तथा सुसंगत समूह जो लम्बे समयान्तराल में बनता है । किसी वर्गीकरण पद्धति में मुख्य वर्गो को उसके रचियता द्‌वारा अभिधारित (Postulate) किया जाता है । उसकी विषय वस्तु अलग-अलग पद्धतियों में तथा अलग-अलग समय पर अलग-अलग होती है ।
बहु-अनुशासनात्मक विषय (Multi Disciplinary Subjects)	:	ज्ञान का वह क्षेत्र जिसके घटक विभिन्न अनुशासनों एवं विषयों से लिये जाने के बावजूद बिल्कुल एकीकृत प्रतीत होते हे । उदाहरण व्यवहारवादी विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, प्रबन्ध विज्ञान आदि ।

3.11 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रन्थसूची (Reference and Futher Readings)

1. jyothirmayi, S., Humayoon Kabir, S., basic subjects in colon classification from edition on to seven : A critical study, Libray Science with a slant to Documentation, 33(1) March,1996,pp. 1-128.
2. Rajan Pillai, C.V., theb universe of knowledge : Nature and discussion, Trivandru velicham Publication, 1983,64p.
3. Satija, M.p., Colon classification, Ed.7: A practical Introduction, new Delhi : Ess Ess, 1989.pp5-7.
4. Palmer, B.I., Inself and education : Six lecturers on classification, London, Librsry edition, 1962,pp16-35.
5. Satija, M.p., Anatomy of the evolution and growth of knowledge, Lucknow librarian, 24(2), 1992,pp49-57.
6. McGarry, K., changing context of knowledge, Ed.2, London : Library Association,1993, pp141-147.
7. Ranganathan, S.R., Prolegomena to library classification, Ed.3,Mumbai : Asia Publishing House, 1967,

8. Ranganathan, S.R., and M.A. gopinath, Colon classification, Ed,7, Bangalore: Sharda Ranganathan Endowment,1987.

9. Kemp, D.A., The nature of knowledge, London: Clive Bindley,1976,p11.

Appendix-I

Kinds of Subjects

Ideas(Cerebral Products)

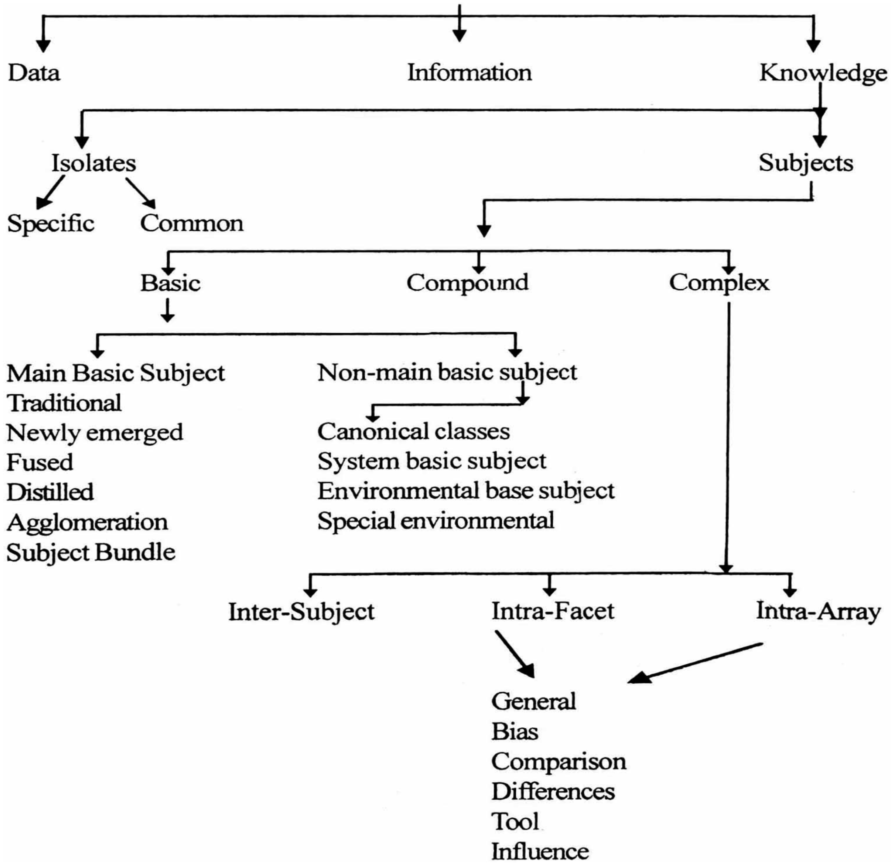

Appendix-II

Knowledge Growth

by

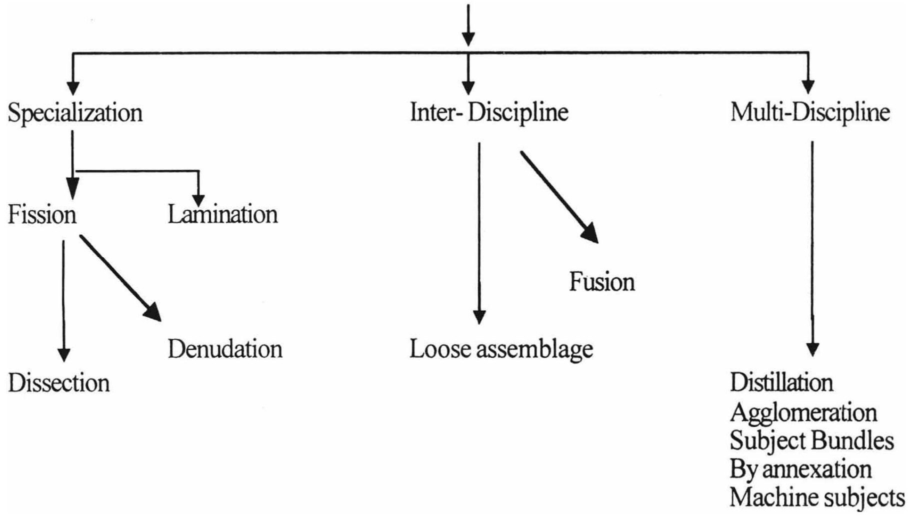

Appendix-III

Division of the Universe of Knowledge (UK)

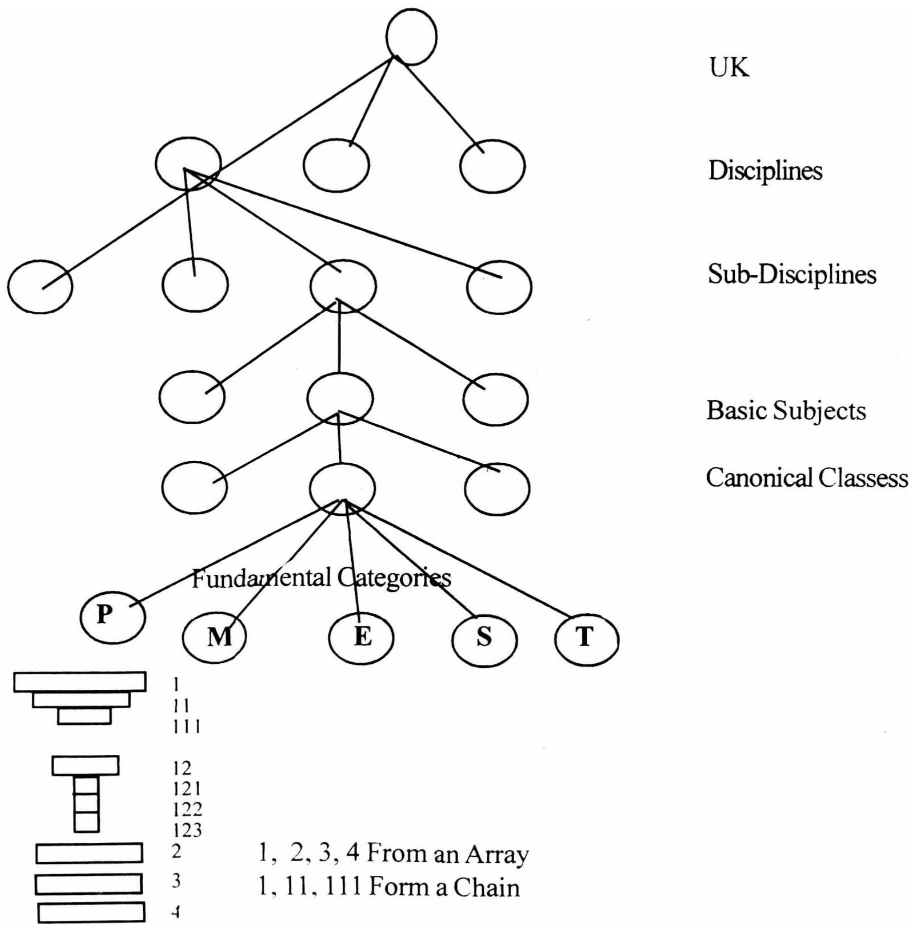

इकाई - 4

विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत का चित्रण

Mapping of the Universe of Knowledge in Different Classification Schemes

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 ज्ञान की विशेषताएँ

4.3 पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु ज्ञान के अध्ययन का महत्व,

4.4 ज्ञानवर्धन की विधियाँ

4.5 ज्ञान जगत का चित्रण

4.6 कुछ सामान्य पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत का चित्रण

4.7 सारांश

4.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.9 प्रमुख शब्द

4.10 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

4.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

1. विद्यार्थियों को पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु ज्ञान के अध्ययन के महत्व से अवगत कराना ।
2. ज्ञान की विशेषताओं को स्पष्ट करना ।
3. ज्ञानवर्धन की विभिन्न विधियों की जानकारी देना ।
4. ज्ञान जगत के चित्रण के विभिन्न सिद्धान्तों को सोदाहरण स्पष्ट करना ।
5. कुछ सामान्य पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत के चित्रण का अध्ययन करवाना।

4.1 प्रस्तावना (Intriduction)

ज्ञान को समाज द्वारा संरक्षित विचारों, तथ्यों, कल्पना, मिथक (Myths), अनुभव तथा अभिव्यक्त भावनाओं के योग के रूप में परिभाषित किया गया है । सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि समाज में जो कुछ ज्ञात है तथा जो उसकी सामूहिक स्मृति में उपस्थित है, वही ज्ञान है । ज्ञान तत्वत: सार्वजनिक होता है । निजी ज्ञान अपने आप में ज्ञान नहीं कहा जा सकता है । दूसरे शब्दों में, समाज ज्ञान का संरक्षक होता है । शान ज्ञाता, अर्थात व्यक्ति आधारित होता है । व्यक्ति ही ज्ञान का उत्पादक (सर्जक) तथा उपभोक्ता दोनों है । ज्ञान का उत्पादन मानव जाति की समस्याओं के समाधान

के लिये होता है तथा इससे नए उत्पाद, सेवाएं मूल्य तथा प्रणालिया जन्म लेती हैं । इस इकाई में आपको ज्ञान की विशेषताएँ, ज्ञानवर्धन की विधियों, ज्ञान जगत का चित्रण एवं सामान्य वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत के चित्रण की विस्तार से जानकारी दी गई है ।

4.2 ज्ञान की विशेषताएँ (Characteristics of Knowledge)

ज्ञान के समस्त विखंडित भागों को जोडकर एक वृहद समग्रता प्राप्त की जा सकती है । जे.एच. शेरा(1903-1981) का मानना है कि ज्ञान में एकत्व (Unity) का भाव होता है । दूसरे शब्दों में, ज्ञान का सम्पूर्ण विस्तार एकतंत्र की भांति होता है जिसकी अपनी निश्चित विशेषताएँ निम्नानुसार होती है:

1. ज्ञान स्वतंत्र नहीं होता, यह ज्ञाता अर्थात व्यक्ति आधारित होता है । यह व्यक्ति सापेक्ष है तथा उसकी बुद्धि (Mind) में रहता है ।
2. यह मानव समाज द्वारा संरक्षित होता है । अत: यह स्वभावत: सामाजिक होता है ।
3. ज्ञान कभी पूर्ण नहीं होता, यह आशिक होता है । यह गतिशील, बहुआयामी तथा परिवर्तनशील होता है । यह समय तथा समाज के साथ परिवर्तित होता रहता है ।
4. इस प्रकार यह अक्षय (अर्थात कभी समाप्त नहीं) होता है । दूसरे शब्दों में यह अनन्त होता है ।
5. प्रौद्योगिकी, सामाजिक उन्नति तथा ज्ञान की खोज, आपस में एक दूसरे पर निर्भर होते हैं। शान अपने भौतिक तथा सामाजिक, दोनों परिवेश में उत्पन्न होता है । व्यक्ति ज्ञाता हैं तथा प्रकृति (समाज सहित) ज्ञान का -मूल स्रोत है, हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञान की अनुभूति करने वाले अपरिष्कृत उपकरण कहे जा सकते है ।
6. जब ज्ञाता अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रकृति के सम्पर्क में आता है तो सूचना उत्पन्न होती है। इस प्रकार प्राप्त सूजना उसके मस्तिष्क में पहले से संरक्षित ज्ञान के साथ, उपयोग तथा प्रमाणिकता (Validation) के लिये एकीकृत होती है । इस तरह, ज्ञान का रचभाव सामाजिक-जैविक होता है । समाज ज्ञान का उत्पादक तथा उपभोक्ता दोनों है जबकि ज्ञान सभी सामाजिक गतिविधियों का मुख्य नियन्ता (Prime Mover)ए होता है । अत: समाज तथा ज्ञान दोनों आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं । इनके सम्बन्ध में एक तरफा प्रभाव की पहचान कर पाना संभव नहीं है, जैसे-जैसे समाज विकसित होता है, साथ ही ज्ञान भी विकसित होता है जबकि नव उत्पादित ज्ञान से समाज में परिवर्तन होते हैं तथा उसका विकास होता है । यह निर्णय तो समाज करता है कि उसे किस प्रकार का, किस दिशा में, तथा कितना ज्ञान चाहिए तथा वही विभिन्न श्रेणियों के ज्ञान के लिये मूल्यों के मापदण्ड निर्धारित करता है । इस प्रकार, ज्ञान के विकास के प्रमुख क्षेत्र सामाजिक मूल्यों तथा प्राथमिकताओं पर निर्भर करते हैं ।

4.3 पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु ज्ञान के अध्ययन का महत्व (Importance of Knowledge Studies for Librarians)

ज्ञान लिखित एवं मौखिक दोनों प्रकार का होता है (जनजातीय समाज आज भी मौखिक रूप में ही अपने ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं) । पुस्तकालयाध्यक्ष केवल लिखित ज्ञान अर्थात प्रलेखों से ही

सम्बन्ध रखते हैं । पुस्तकालयाध्यक्षों एवं सूचना पेशेवरों के लिये तो ज्ञान ही उनके पेशे का मुख्य साजोसामान (Stock in trade) है । इसलिये हम पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु शान एवं उसकी विशेषताओं व संरचना का अध्ययन निश्चय ही महत्वपूर्ण है । प्रो. जैसी. शेरा (1903-1981) का कहना है कि पुस्तकालय एवं सूचना पेशेवरों हेतु ज्ञान की प्रकृति का अध्ययन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि एक सर्जन के लिये शरीर-रचना विज्ञान (Anatomy) का अध्ययन । अत: एक पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में हमें ज्ञान की प्रकृति उसकी संरचना तथा स्रोतों के बारे में जानना जरूरी है । केवल तभी हम इसका प्रभावी रूप से संग्रह, व्यवस्थापन तथा प्रसार कर सकेंगें । इसके महत्व को जानते हु एडॉ. एस.आर. रंगनाथन ने 1940 के दशक में ही ज्ञान जगत के अध्ययन को एक पूर्ण पेपर के रूप में पुरतकालय एवं सूचना विज्ञान की स्नातकोत्तर उपाधि के पाठ्यक्रम में स्थान दिया था ।

4.4 ज्ञानवर्धन की विधियां (Modes of growth of knowledge)

ज्ञान में निरन्तर वृद्धि हो रही है । नए विषय जन्म ले रहे हैं । डॉ. रंगनाथन ने विभिन्न प्रकार के विषयों के निर्माण की अनेक विधियों की पहचान की थी, जो इस प्रकार हैं:

1. विशिष्टीकरण (Specialization) द्‌वारा
   (अ) अनाच्छादन (Denudation) द्‌वारा
   (ब) विच्छेदन (Dissection) द्‌वारा
   (स) पटलीकरण (Lamination) द्‌वारा
2. अन्तर अनुशासनात्मक विधि (Interdisciplinary Mode)
   (अ) शिथिल समुच्चय (Loose assemblage) द्‌वारा
   (ब) विलयन (Fusion) द्‌वारा
3. बहु अनुशासनात्मक विधि (Multidisciplinary Mode)
   (अ) आसवन (Distillation) द्‌वारा
   (ब) संचयन (Agglomeration) द्‌वारा
   (स) विषय समूह(Subject bundles) द्‌वारा

विषय निर्माण की विधियों का विषयों की संरचना पर काफी प्रभाव पड़ता है । विषय निर्माण की इन विधियों की व्याख्या इस इकाई में दी गई है ।

बोध प्रश्न-1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. ज्ञान की विशेषताएँ बताइये ।

   ....

   ....

2. पुस्तकालयाध्यक्षों के लिये ज्ञान के अध्ययन का क्या महत्व है?

   ....

   ....

3. ज्ञान को परिभाषित कीजिये ।

....

....

4. ज्ञानवर्धन की विधियाँ बताइये ।

....

....

4.5 ज्ञान जगत का चित्रण (Mapping of Universe of knowledge)

जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है ज्ञान सदैव वर्धनशील, परिवर्तनशील तथा नवीन बना रहता है । नए विषय लगातार उत्पन्न होते रहते हैं और पुराने विषयों की स्थिति एवं संरचना बदलती रहती है । सम्पूर्ण ज्ञान का कोई ऐसा सार्वभौमिक स्वरूप (Univresal Pattern) नहीं होता जिसमें सभी चीजें सभी उपभोक्ताओं के लिये हों । पदानुक्रम (Hierachy) तो संरचना का मात्र एक स्वरूप है । इसलिये प्रत्येक विषय अपनी संरचना में परिवर्तन करता रहता है तथा विषयों के मध्य सम्बन्ध भी भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से देखे जा सकते हैं । किसी समाज में प्रचलित विचारधारा, भौतिक संस्कृति, आर्थिक एवं प्रौद्योगिकी सम्बन्धी आवश्यकताएं, विश्व दृष्टि (Comic vision) इतिहास की समझ तथा सामाजिक मूल्यों द्वारा उस समाज में उपलब्ध ज्ञान की स्थिति तथा संरचना प्रभावित होती है। प्रत्येक युग तथा समाज का ज्ञान के प्रति एक पृथक दृष्टिकोण होता है । उदाहरणार्थ मध्यकाल में धर्मशास्त्र (Theology) को सभी विज्ञानों की रानी माना जाता था तथा अन्य विषयों का मूल्यांकन उनकी इस सामर्थ्य पर निर्भर करता था कि वह धर्मशास्त्र के विकास में कितना योगदान कर सकते थे । प्राकृतिक विज्ञानों को समय की बर्बादी करने वाला माना जाता था तथा उनको अधिक महत्व नहीं दिया जाता था यहां तक मेलविल ड्यूई (1851-1931) के समय 19वी शताब्दी के उत्तरार्ध में भी दर्शनशास्त्र तथा धर्मशास्त्र को अत्यन्त प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था । यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि ड्यूई द्वारा मापिए ज्ञान जगत में इन दोनों वर्गो को मिलाकर कुल वर्गो का 1 / 5वां हिस्सा प्रदान किया गया था । इसके विपरीत आज प्राकृतिक विज्ञानों तथा उनके आर्थिक एवं तकनीकी निहितार्थ के अध्ययन को अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है । आज तो विज्ञान का ही महत्व हैं तथा कुछ धर्मनिरपेक्ष देशों में तो कहा जा सकता है कि उन्हें राष्ट्रीय धर्म का दर्जा प्राप्त है । शोध समस्याओं के समाधान तथा नवीन ज्ञान की खोज के लिये अन्वेषण की अनुभव सिद्ध (Empirical) तथा प्रयोगात्मक (एक्सपेरिमेंटल) विधियों को विश्वसनीय माना जाता है । आजकल ज्ञान के स्रोत के रूप में प्राधिकार(Authority), विश्वास तथा अन्तर ज्ञान (Intuition) को संदेह की नजरों से देखा जाता है । अत: कहा जा सकता है कि किसी भी विषय का समाज में हमेशा एक सा स्थान नहीं रहता कुछ विषय जो एक समय ज्ञान के केन्द्र बिन्दु हुआ करते थे, अब हाँसिए पर चले गये हैं । एक समय औद्योगिक उत्पादन अत्यन्त महत्वपूर्ण था किन्तु आज पर्यावरण अध्ययन,प्रबन्धन, जैव प्रौद्योगिकी तथा ऊर्जा के अपरम्परागत (Non-conventional) स्रोतों पर शोध जैसे विषय महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं । आज के सूचना समाज में मानव संसाधन, मानवापशु अधिकार सूचना, अर्थव्यवस्था तथा सूचना

एवं संचार प्रौद्योगिकी जैसे विषयों को व्यापक स्वीकर्ता मिल रही है । ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धांत निम्न प्रकार है :

4.5.1 वर्गीकरण पद्धतियों का अस्थायी स्वभाव (Classification Systems are Impermanent)

जैसा पहले बताया जा चुका है नवीन ज्ञान की उत्पत्ति के साथ-साथ तत्कालीन विषयों की स्थिति तथा उनके महत्व में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहता है । विषयों के मध्य समीकरण सदैव परिवर्तनशील होते हैं । उदाहरणार्थ ऐसे अनेकों विषय जैसे सार्वजनिक स्वास्थ्य, अन्तर्राष्ट्रीय विधि भू-राजनीतिशास्त्र, जनसांख्यिकी (Demography) जिन्हें कोलन क्लासीफिकेशन के छठवें संस्करण (1960) में यौगिक या मिश्रित विषयों का दर्जा प्राप्त था, इसी वर्गीकरण पद्धति के सातवें संस्करण (1987) में मूल विषय (Basic Subject) के स्तर पर पहुंच गये हैं । डीडी.सी.में भी ऐसे अनेकों उदाहरण दिये गये हैं । अत: यह कहा जा सकता है कि ज्ञान की संरचना सदैव परिवर्तनशील होती है ।

वर्गीकरण पद्धति निश्चय ही ज्ञान का चित्रण करती है तथा उसका मानचित्र है । यह ज्ञान के विश्लेषण एवं चित्रण का एक उपकरण है । इसलिये जैसे-जैसे ज्ञान जगत में खाली स्थानों को भरते हुए ज्ञान में वृद्धि होती है हमें नई वर्गीकरण पद्धतियों की या उपलब्ध प्रणालियों में समायोजन (Adjustment) तथा बदलाव की आवश्यकता पड़ने लगती है । ऐसे में हमें न केवल वर्गीकरण पद्धति में संशोधन करने पड़ते हैं बल्कि नवीन ज्ञान को व्यवस्थित करने में सक्षम नई वर्गीकरण तकनीकों की भी खोज करनी पड़ती है ।

एस.आर. रंगनाथन ने 19वीं शताब्दी के साहित्य के वर्गीकरण हेतु डीडीसी. को सर्वोत्तम पद्धति माना था । साथ ही उन्होंनें 20वीं शताब्दी, विशेषकर विश्व युद्धों के पश्चात के समय के ज्ञान के वर्गीकरण हेतु इसे सर्वथा अनुपयुक्त पाया था । इस प्रकार 20वीं शताब्दी को नवीन वर्गीकरण प्रणालियों व तकनीकों की आवश्यकता पड़ी थी और अब 21वीं शताब्दी को भी नवीन ज्ञान, विशेषकर इन्टरनेट के व्यवस्थापन हेतु नई वर्गीकरण पद्धतियों की आवश्यकता होगी । जहाँ तक ज्ञान की संरचना का प्रश्न है एकीकृत ज्ञान (Unified Knowledge) के कुछ निश्चित आधारों को जानने के लिये हमे अपने विश्लेषण को एक संस्कृति के केवल एक कालखण्ड (Epoch) तक सीमित करना होगा ।

4.5.2 ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धांत (Principles for Mapping the universe of Knowledge)

एक प्रसिद्ध अंग्रेज पुस्तकालयाध्यक्ष डी.डब्ल्यू लेंग्रिज (1925-2001) ने ज्ञान जगत के चित्रण के चार सिद्धांतों की पहचान की है । वैसे इन सिद्धांतों में पारस्परिक अनन्यता (Mutual Exclusiveness) नहीं है । ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धांत निम्न प्रकार है:

4.5.2.1 वैचारिक सिद्धांत (Ideological principle)

यह सिद्धांत किसी विचारधारा या विशिष्ट चिन्तन पद्धति पर आधारित होते हैं । पूर्व में, मध्य युग की इसाई पद्धतियाँ इसके प्रमुख उदाहरण हैं । जबकि रूसी वर्गीकरण पद्धति बी.बी.के. इसका

नवीनतम उदाहरण है जिसमें मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा को ज्ञान जगत का केन्द्र माना गया है । कुछ सीमा तक प्रत्येक पद्धति किसी न किसी विचारधारा पर आधारित होती है । कोई भी वर्गीकरण पद्धति अपनी उत्पत्ति के काल तथा संस्कृति से स्वतंत्र या मूल्य निरपेक्ष नहीं हो सकती । प्रत्येक पद्धति अपने समाज तथा उसके मूल्यों व संस्कृति की ओर झुकाव रखती है । इसी कारणवश ड्यूई डेसीमल क्लासीफिकेशन को अफ्रीकी तथा एशियाई विषयों के वर्गीकरण के लिये परिवर्तित तथा अनुकूलित करना पड़ा ।

4.5.2.2 सामाजिक प्रयोजन का सिद्धांत (principle of Social Purpose)

वैदिक पद्धति (1500ईसा पूर्व) इस सिद्धांत का एक अच्छा उदाहरण है जिसमें ज्ञान को चार श्रेणियों में विभक्त किया गया है : धर्म (नियामक सिद्धांत), अर्थ (सामाजिक विज्ञान), काम (सैद्धांतिक विज्ञान(Pure Sciences) तथा कलाएँ) और मोक्ष (आध्यात्मिक ज्ञान) । यह वर्गीकरण की एक मोटी रूपरेखा प्रस्तुत करता है । जिसमें ज्ञान को उसकी घटती सामयिक सामाजिक उपयोगिता (Decreasing current social utility) तथा भविष्य में बढते उपयोग की संभाव्यता (Increasing potential for future use) के आधार पर व्यवस्थित किया गया है । यह एक सैद्धांतिक वर्गीकरण है तथा किसी भी पुस्तकालय वर्गीकरण या दार्शनिक ज्ञान वर्गीकरण का आधार नहीं रहा है । रंगनाथन इससे थोड़ा प्रभावित जरूर थे परन्तु उन्होंने कोलन क्लासीफिकेशन में वर्गीकरण के आधार के रूप में इसका कभी उपयोग नहीं किया ।

4.5.2.3 वैज्ञानिक अनुक्रम का सिद्धांत (Principle of Scientific Order)

यह वैज्ञानिक अनुक्रम का सिद्धांत विषयों के कुछ प्राकृतिक एवं तर्कसंगत क्रम पर आधारित है इसके मूल तत्वों को सर्वप्रथम ई.सी.रिचर्डसन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक “Classification : Theoretical and Practical”(1901) में प्रतिपादित किया था । सी.ए. कटर ने मुख्यवर्गों के विकास क्रम (Evolutionary Order) को अपने एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन(1893) में प्रयुक्त किया था । कटर का यह मानना था कि प्रकृति में चीजों का एक क्रम होता है और यह क्रम ज्ञान के व्यवस्थापन में भी परिलक्षित होना चाहिए । उनकी वर्गीकरण पद्धति इस पूर्वधारणा (Assumption) पर आधारित है: "Order of sciences is the order of things, and order of things is the order of their complexity” यह निश्चित ही प्रकृति विज्ञानी चार्ल्स डार्विन (1809-1882) के सिद्धांत 'Theory of origin of species' से प्रभावित थी । प्रकृति में तत्व परमाणुविक स्वरूप में आणविक और फिर सम्पूर्ण पदार्थ (Molar from) में विकसित हु ए हैं इन सिद्धांतों का थोडा बहु त प्रयोग जे.डी.ब्राउन (1862-1914) ने अपने सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन (1906) तथा एच.ई.ब्लिस (1870-1955) ने अपने बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन (1935)में किया था । लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस क्लासीफिकेशन में भी वर्ग विन्यास इसी सिद्धांत पर आधारित है । डी.डी.सी. तथा सी.सी. में वनस्पति विज्ञान व प्राणि विज्ञान में वर्गों का क्रम मुख्यत: वर्गीकीय (Taxonomic) है । किन्तु इस सिद्धांत के पूर्ण निहितार्थों (Implications) को खोजने का काम लंदन स्थित क्लासीफिकेशन रिसर्च ग्रुप (सी.आर.जी)(स्थापित 1955) द्वारा किया गया जब यह समूह सामान्य वर्गीकरण पद्धतियों की समस्याओं को सुलझाने तथा एक नई वर्गीकरण पद्धति की अभिकल्पना (Design) करने के प्रयास कर रहा था । इस अस्पष्ट से,

विकास क्रम के सिद्धांत का जे.ई.एल. फैराडेन (1906-1989) ने अपनी पुस्तक 'Theory of Integrative Level' में अत्यन्त गहन अध्ययन कर, उसकी सुस्पष्ट परिभाषा दी है । इस सिद्धांत का उद्देश्य था कि "...identity all the entities or object of knowledge in existence, and to order them by means of a theory and thus provide an structure of knowledge". निश्चय ही यह सिद्धांत मुख्य रूप से प्राकृतिक वस्तुओं पर लागू होता है । जो भौतिक रूप से विकसित होती हैं । यह उन सामाजिक चीजों पर भी लागू हो सकता है जो स्पष्टत: एक धीमे सामाजिक विकास (social evolution) की दशा में निरन्तर की रहती हैं ।

4.5.2.4 अनुशासनानुक्रम का सिद्धांत (Principle of Arrangement by Disciplines)

अनुशासन(Disciplines) अध्ययन के समान उद्देश्यों वाले या एक ही विधि से निर्मित विषयों के ज्ञान के वृहद एवं सम्बद्ध खण्ड को कहते हैं । मेलविल ड्यूई (1851-1931) द्वारा ज्ञान को अनुशासनानुसार विभाजित करना उनका एक महत्वपूर्ण योगदान था । डी.डी.सी. के अनुसार 'A discipline is"an organized field of study or branch of learning dealing with specific kinds of subject and/or subjects considered from specific points of view.''' अनुशासन ज्ञान को तार्किक रूप से भिन्न ऐसे क्षेत्रों में विभक्त करता है जिनकी प्रमुख विशेषता, उनकी कुछ विशिष्ट धारणाएं, संरचना तथा विधियां हैं जिनसे नए ज्ञान को सत्यापित कर उसे वृहद् स्वीकृति प्रदान की जा सके ।

पुस्तकालय उपयोगकर्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये तथा सूचना पुनर्प्राप्ति की समस्याओं के बेहतर हल के लिये अनुशासनानुसार विभाजन एक उपयुक्त उपाय हो सकता है । इस विधि का प्रतिपादन सर्वप्रथम प्रसिद्ध अंग्रेज दार्शनिक, लेखक तथा वैज्ञानिक फ्रांसिस बेकन (1561-1626) ने अपनी पुस्तक 'Advancement of Learning'(1605) में किया । उन्होंने ज्ञान की तत्कालीन स्थिति तथा उसके विकास के साधनों का गहन अध्ययन किया । उनका सुझाव था कि बुद्धि(Mind) की तीन क्षमताओं (Faculties), कल्पना (Imagination) तथा विवेक (Reason) पर आधारित ज्ञान के भी तीन प्रकार (वृहद् अनुशासन) होते हैं । जिनको सम्बन्धित क्षमता के अनुरूप इतिहास, कला तथा विज्ञान में विभाजित किया जा सकता है । हालांकि यह अब भी विवाद का विषय है कि क्या यह अनुशासन आपस में स्वतंत्र तथा पारस्परिक अनन्य (Mutually exclusive) हैं और विलय के पश्चात एकीकृत होकर सम्पूर्ण ज्ञान (Integrated whole of knowledge) बनाते हैं । चाहे जो भी हो यह कहा जा सकता है कि अनुशासनानुसार ज्ञान का विभाजन विद्वानों द्वारा प्रयुक्त प्रव्रत्तियों के अनुरूप है तथा यही विश्वविद्यालयों की शैक्षिक व्यवस्था में भी अभिव्यक्त होता है ।

4.6 कुछ सामान्य पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान जगत का चित्रण(Mapping the Universe of Knowledge in some General Library Classification Systems)

अब हम कुछ सामान्य पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धतियों में ज्ञान के चित्रण को देखेंगे । विभिन्न पद्धतियाँ अलग-अलग सिद्धांतों को मानते हुए अपने ढंग से ज्ञान जगत का चित्रण एवं निरूपण करती हैं ।

4.6.1 डी.डी.सी. में चित्रण (Mapping in the DDC)

मेलविल ड्यूई ने अपने वर्गीकरण का आधार, समकालीन हीगलवादी दार्शनिक डब्ल्यू.टि. हैरिस (1835-1909) के द्वारा प्रतिपादित बेकन के व्युत्क्रमित विषयक्रम (Inverted Baconian Order) को बनाया इसमें ज्ञान को सबसे पहले अनुशासनानुसार विभाजित किया गया है जो किसी भी पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धति में पहली बार किया गया था । अनुशासनानुसार विभाजन में विभिन्न विषय अलग-अलग वर्गों में बिखर जाते हैं ।

बुद्धि की तीन क्षमताओं द्वारा उत्पन्न तीन वृहद् प्रभाग हैं:

मुख्य वर्ग	अनुशासन	मानसिक क्षमता
100-600	विज्ञान	विवेक
700-800	कला एवं साहित्य	कल्पना
900	इतिहास	स्मृति

दरसल, विविध वर्ग 0 (शून्य) तथा उसके बाद 1-9 तक कुल दस मुख्य वर्ग हैं । यह दस मुख्य वर्ग 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध की पश्चिमी दुनिया में शैक्षिक सर्वसम्मति (Educational Consensus) को दर्शाते हैं । डी.डी.सी. के मुख्य वर्ग अनुशासन हैं जो उप अनुशासन में तथा प्रत्येक उप अनुशासन पुन: विषयों व उनके पक्षों में विभक्त किये गये हैं । अनुशासन किसी विषय को समुचित संदर्भ में प्रस्तुत करते हैं ।

4.6.1.1 दशमलव अंकन की अपरिवर्तनीयता/कृत्रिमता(Rigidity/Artificiality of the Decimal Notation)

डी.डी.सी. को प्रत्येक स्तर पर केवल दस वर्गों में विभाजन की अनिवार्यता के कारण सदैव आलोचना का सामना करना पड़ता है । इसके आलोचकों का यह तर्क उचित प्रतीत होता है कि ज्ञान का विस्तार हमेशा दस के पैटर्न पर ही नहीं होता । ज्ञान का विकास दशमलव या मीटरी पद्धति द्वारा नियंत्रित नहीं होता । यह तो एक कृत्रिम तथा अपरिवर्तनीय सांचा (Mould) है । डी.डी.सी. में प्रयुक्त दशमलव पद्धति में ऐसा इसलिये होता है क्योंकि ड्यूई ने पहले अंकन का चुनाव किया तथा बाद में विभिन्न वर्ग बनाए । इसलिये अपनी सुविधानुसार वर्गों की संख्या निर्धारित करने में अंकन की इस पद्धति में महत्वपूर्ण भूमिका रही ।

लेकिन दशमलव युक्ति, श्रृंखला ग्राहयता (Hospitality in Chain) के लिये अत्यन्त सुविधाजनक है । पदानुक्रम में डी.डी.सी. के किसी भी उपवर्ग को उसके दाई ओर एक अंक बढाकर

किसी भी स्तर तक ले जाया जा सकता है । प्रत्येक स्तर पर विषय को विशिष्टता/तीव्रता (Intension) बढ़ती जाती है ।

999-000	Universe of Knowledge
300	Social Science
330	Economics
332	Financial Economics
332.4	Money
332.42	Monetary Standards
332.422	Monometallic
332.4222	Gold Coins
332.422209	Hallmark Future-History

पदानुक्रम (Hierarchy) डी.डी.सी. पद्धति की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता हैं । दशमलव अंकन के प्रयोग के परिणामस्वरूप यह विशेषता स्वत: ही इस पद्धति में आ गई । हालांकि मुख्य वर्गों की पंक्ति में कुछ त्रुटियाँ स्पष्टत: परिलक्षित होती हैं । जैसे धर्मशास्त्र (Religion) जो कि आस्था पर आधारित है, को विवेक की श्रेणी में रखा गया है और भाषा मुख्य वर्ग (400) को साहित्य (800) से अलग कर दिया गया है । साथ ही इतिहास (930-990) को सामाजिक विज्ञानों से अलग रखा गया है । मुख्य वर्गों के अलावा प्रभागों व अनुभागों में भी ऐसी अनेकों अनियमितताएं देखी जा सकती है । ड्यूई का यह मानना था कि जब तक प्रत्येक वर्ग को पद्धति में स्थान दिया जा सकता है तब तक वर्गों के क्रम से ज्यादा फर्क नहीं पड़ता । इस समस्या से निपटने के लिये उन्होंने पद्धति में एक प्रभावी अनुक्रमणिका का प्रावधान किया था ।

डी.डी.सी. एक देश (उत्पत्ति यू.एस.ए) तथा काल (19वीं शताब्दी) सिद्ध व्यावहारिक पद्धति है । इसके सैद्धान्तिक तथा दार्शनिक आधारों की खोज अगर व्यर्थ नहीं तो कोई विशेष लाभदायक भी नहीं होगी । ड्यूई का मुख्य उद्देश्य एक ऐसी वर्गीकरण पद्धति का निर्माण करना था जो कि शेल्फ में पुस्तकों के क्रम को यंत्रीकृत करें तथा नवीन विषयों, पूर्व में व्यवस्थित क्रम में अव्यवस्थित किये बिना समुचित स्थान प्रदान करें । ड्यूई का मुख्य योगदान केवल ग्राह्यता (Hospitality) की व्यावहारिक समस्या का समाधान प्रस्तुत करने के संदर्भ में माना जा सकता है । यह कार्य उन्होनें दशमलव अंकन (Decimal Fraction Notation) की मदद से सफलतापूर्वक किया ।

4.6.2 सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति में चित्रण (Mapping in the Universal Decimal Classification System)

सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति एक लगभग पक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति है । यह दशमलव वर्गीकरण पद्धति पर आधारित है । सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति में सह-सम्बन्धित विचारों एवं विचार समूहों को एक साथ लाने का प्रयास किया गया है । इसकी संरचना में सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होने के सिद्धांत को अपनाकर मानव ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र को दस मुख्य वर्गों में विभाजित

किया गया है तथा प्रत्येक मुख्य वर्ग को विशिष्टता की आवश्यक मात्रा के आधार पर दशमलव अंकन के द्वारा विभाजित किया गया है ।

सार्वभौम वर्गीकरण पद्धति में मानव ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र को एक इकाई के रूप में व्यवस्थित किया गया है । ज्ञान जगत को दस प्रमुख भागों में विभाजित किया गया है तथा प्रत्येक वर्ग को आवश्यकतानुसार विभागों एवं उप-विभागों में दशमलव भिन्न अंकन पद्धति के आधार पर विभक्त किया गया है क्योंकि दशमलव अंकन में प्रत्येक वर्ग के लिये कम से कम तीन अंकों के प्रयोग की अनिवार्यता को समाप्त कर दिया गया है ।

इसके मुख्य वर्गों की रूपरेखा निम्न प्रकार है:

0 सामान्य कृतियां

1 दर्शनशास्त्र

2 धर्म

3 सामाजिक विज्ञान

4 भाषा शास्त्र

5 शुद्ध विज्ञान

6 प्रायोगिक विज्ञान

7 कलायें

8 साहित्य

9 भूगोल, जीवनी, इतिहास

इस आधारभूत संरचना को अपनाकर इन मुख्य वर्गों के उप-विभाजन में सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होने के सिद्धांत को प्रयोग में लाया गया है । सुविधा की दृष्टि से आरम्भिक दशमलव बिन्दु को हटा गया है । सन् 1963 में वर्ग 4 भाषाशास्त्र को ज्ञान के भावी विकास को स्थान देने के लिये रिक्त कर दिया गया है और मूल विषय भाषा के लिये वर्ग 8 साहित्य के अन्तर्गत प्रावधान कर दिया गया है । ज्ञान जगत की उपयुक्त स्थिति अंकित करने के साथ यू.डी.सी में निम्नलिखित दो प्रकार की सहायक सारणियों को स्थान दिया गया है:

1. सामान्य
2. विशिष्ट

सामान्य सहायकों में सामान्य रूप से पुनरावर्तन विशेषताओं (Recurrent characteristics) को सम्मिलित किया गया है । विशिष्ट सहायकों के अन्तर्गत स्थानीय रूप से पुनरार्वतन विशेषताओं को सम्मिलित किया गया है । ड्यूई दशमलव वर्गीकरण की भांति सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण में भी आधारभूत तथा संयुक्त विषयों की स्थिति का निर्धारण करते समय परिगणनात्मक पद्धति को अपनाया गया है । ड्यूई दशमलव वर्गीकरण पद्धति की भांति यह भी एक अवस्थितिपरक (Aspect) वर्गीकरण पद्धति है । सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति का मुख्य योगदान ग्राह्यता तथा विशिष्ट अंकन चिन्हों के प्रयोग ने इसे एक प्रकार की पक्षात्मक संरचना प्रदान की है तथा सम्पूर्ण पद्धति में इसकी परिवर्तनशील (Versitaile) अंकन पद्धति के प्रयोग के कारण संश्लेषण की प्रक्रिया स्पष्ट दिखाई देती है । अत: इसको संश्लेषणात्मक संरचना तथा अंकन युक्तियों के कारण इसे नवीन विषयों की स्थिति का निर्धारण करने का लचीलापन प्राप्त हो गया है ।

4.6.3 कटर की एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन पद्धति (Expensive Classification System)

सी.ए.कटर (1831-1903) की एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन पद्धति अत्यन्त महत्वपूर्ण है। क्योंकि इसमें मुख्य वर्गों का क्रम ज्ञान के विकासक्रम (Evolutionary order) पर आधारित है। उनका यह मानना था कि ज्ञान के वर्गीकरण पर आधारित पुस्तक वर्गीकरण पद्धति का स्थायी महत्व अधिक होता है। दशमलव वर्गीकरण की अपरिवर्तनशीलता से बचने के लिये उन्होने वर्गों के संकेतक के रूप में वर्णमाला (Alphabets) का प्रयोग किया। उनकी वर्गीकरण पद्धति के मुख्य वर्ग इस प्रकार हैं:

A	Genralia works	M/O	Bio sciences, Medicine
B/D	Philosophy and Religion	R/V	Useful Arts, Technology War, Athletics
E/G	Histroy and Geography	W	Fine Arts
H/K	Social Sciences	X/Y	Language and Literature
L	Sciences and Arts	Z	Book Art

स्वयं कटर के अनुसार एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन पूर्णत: विकासक्रम पर आधारित है। प्राकृतिक इतिहास वर्ग के अन्तर्गत प्रत्येक विषय के विभिन्न भागों को उसी क्रम में रखा गया है जिसमें उस विषय के सिद्धांतानुसार वह अस्तित्व में आए। विज्ञान विषयों में क्रम परमाणु से अणु तथा फिर सम्पूर्ण तत्व, इसी प्रकार अंक (Number) से स्थान (Space); और पदार्थ एवं शक्ति (Matter and Force) से पदार्थ एवं जीवन (Matter and life) का क्रम प्रयुक्त किया गया है। वनस्पति विज्ञान के अन्तर्गत (Gyrptograms) से (Phanerograms) तक क्रम में दर्शाए गये हैं। पुस्तक कला मुख्य वर्ग के अन्तर्गत क्रम से पुस्तकों के उत्पादन का इतिहास, उनका वितरण तथा फिर संग्रहण और पुस्तकालयों में उपयोग दिया गया है। इस वर्ग के अन्त में उनका वर्णन अर्थात ग्रंथसूची विषय को रखा गया है। अर्थशास्त्र में भी प्राकृतिक क्रम का ही पालन हुआ है जनसंख्या -> उत्पादन -> वितरण -> सम्पत्ति -> उपभोग। इस क्रम का व्यावहारिक महत्व भी है क्योंकि इसके द्वारा ऐसी पुस्तकें एक साथ रखी जाती हैं जिन्हें कोई व्यक्ति एक ही समय मे प्रयुक्त करना चाहेगा। कटर की पद्धति अब एक मृत पद्धति हैं किन्तु इसका प्रभाव विशेषकर लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस वर्गीकरण पर निश्चित रूप से देखने को मिलता है। यह कुछ निश्चित एवं वस्तुपरक नियमों पर आधारित प्रथम पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धति थी जिसका उद्देश्य मात्र फलक व्यवस्थापन से कहीं अधिक नहीं था।

4.6.4 सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन पद्धति (Subject Classification System)

जेम्स डफ ब्राउन (1862-1914) मुख्यत: इंग्लैण्ड में मुक्त प्रवेश प्रणाली की शुरूआत के लिये जाने जाते हैं। उनकी सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन पद्धति सर्वप्रथम 1906 मे प्रकाशित हुई तथा उसके बाद 1917 और 1939 में संशोधित की गई। इसका मुख्य वर्गों का क्रम अत्यन्त रोचक तथा डी.डी.सी. व एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन दोनों से भिन्न है। ब्राउन का यह दावा था कि उनकी पद्धति में मुख्य

वर्गों का क्रम वैज्ञानिक आरोहण 'Scientific progression' पर आधारित था । उनका यह मानना था कि प्रकृति में चीजों के उत्पन्न होने का क्रम इस प्रकार था:

Matter---------Force--------Life-------Mind-------Record

तदनुसार उनके मुख्य वर्गों का क्रम इस प्रकार है:

A	Generalia
	<u>Matter and Froce</u>
B-D	Physical Sciences
	<u>Life</u>
E-F	Biological Sciences
G-H	Ethnology, Medicine
I	Economic Biology
	<u>Mind</u>
J-K	Philosophy and Religion
L	Social and Political Science
	<u>Record</u>
M-N	Language and Literature
O-W	History and Geography
X	Bibliography

ब्राउन अपनी ‘One Place Theory' या 'एक स्थान सिद्धांत' के लिये जाने जाते हैं जिसमें डी.डी.सी. तथा अन्य पद्धतियों की तरह एक ही विषय के विभिन्न पक्षों को अनुशासनानुसार बिखराने के बजाय एक साथ रखा जाता है । किसी मूर्त विषय (Concrete subject) को आधार मानते हुए उसके अमूर्त पक्षों को आस पास ही स्थान दिया जाता है । इसे एक उदाहरण से स्पष्ट समझा जा सकता है । तांबा विषय के अनेक सम्बन्धित पक्ष हो सकते है : धातुकर्मीय (Metallurgical), खनिज की (Mineralogical), रासायनिक चालकता (Conductivity), आर्थिक आदि । सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन इन सभी पक्षों को तांबा वर्ग के साथ ही वर्गीकृत करता है । इसलिए इसे एक स्थान सिद्धांत कहा जाता हैं । मूर्त विषय(तांबा) एक ऐसे विज्ञान के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जाता है जिसके यह सबसे नजदीक होता है । उपरोक्त उदाहरण में यह विषय(तांबा) खनिज विज्ञान (Mineralogy) है । इसी प्रकार, सेव को वनस्पति विज्ञान के अन्तर्गत रखा गया है । इसमें व्यवहार सिद्धांत के बाद दिया जाता है: रासायनिक प्रौद्योगिकी को रसायन विज्ञान के अन्तर्गत रखा गया है । किन्तु यह एक स्थान सिद्धांत कभी-कभी अत्यन्त हास्यास्पद (funny) और उलझाने वाले (embasrrassing) परिणाम भी देता है: शारीरिक व्यायाम तथा शरीर की अंत्येष्टि (Body Funeral) दोनों को इस पद्धति में एक ही स्थान पर रखा गया है । इसमें यद्यपि मुख्य वर्गों का क्रम पूर्णत: विकासक्रम के अनुसार है किन्तु 'एक स्थान सिद्धांत' विषयों को एक तार्किक क्रम देने में असफल रहा । निःसंदेह यह अनुशासनानुसार विभाजन का विकल्प

प्रस्तुत करने का एक महत्वपूर्ण प्रयास था । यह परीक्षण (experiment) तो असफल हो गया किन्तु इसके सबक विद्यमान रहेंगे ।

4.6.5 कोलन क्लासीफिकेशन

डॉ. एस.आर.रंगनाथन (1892- 1972) की कोलन क्लासीफिकेशन (सी.सी.) पद्धति (प्रथम संस्करण 1933) एक पूर्णत: पक्षात्मक तथा सिद्धांत आधारित पद्धति है । डॉ. रंगनाथन ने मुख्य वर्गों तथा वर्गांकों के पक्षों के क्रम पर विशेष ध्यान दिया । उनके लिये अनुक्रम वर्गीकरण का सार (essence) था । उन्होंने वर्गों की पंक्ति तथा श्रृंखला और पक्ष परिसूत्र के पक्षों के क्रम निर्धारण के लिये कुछ अभिधारणाओं (Postulates) तथा सिद्धांतों (Principles) का प्रतिपादन किया । उम्मीदों के विपरीत उन्होंने सी.सी. में मुख्य वर्गों के क्रम के लिये वैदिक पद्धति का उपयोग नहीं किया यद्यपि इस पद्धति का धुंधला सा प्रभाव जरूर दिखाई देता है । उनके मुख्य वर्गों के क्रम को त्रिभुज के द्वारा दर्शाया गया है:

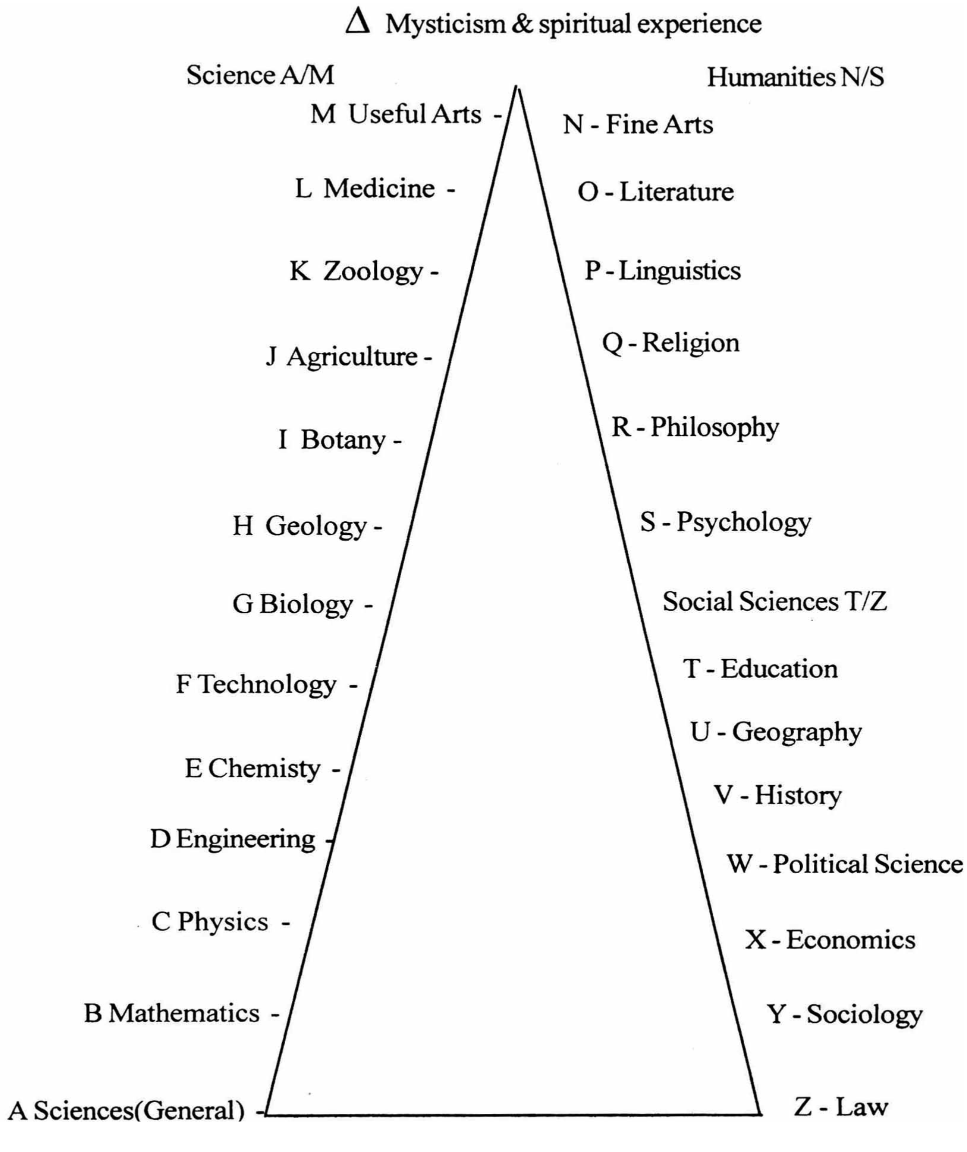

डॉ. रंगनाथन का यह दृढ़ मत था कि विकास के क्रम में सर्वप्रथम विज्ञान विषय विकसित हुए, उसके बाद मानविकी और अन्त में सामाजिक विज्ञान अस्तित्व में आए । तत्कालीन सामाजिक तथा शैक्षिक प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए रंगनाथन ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को कुल मुख्य वर्गों में से आधे स्थान प्रदान किये थे । त्रिभुज के दूसरी ओर के आधे स्थान मानविकी तथा सामाजिक विज्ञानों के बीचे बंटे । A से M तक विज्ञानों को मूर्तता के बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया गया है । विज्ञानों में B- गणित सर्वाधिक अमूर्त है, C- भौतिक विज्ञान, B- गणित से अधिक मूर्त तथा D- अभियांत्रिकी से कम मूर्त है । अन्य अनुशासन भी इसी प्रकार व्यवस्थित हैं । M- उपयोगी कलाएं मुख्य वर्ग के अन्तर्गत वस्त्र अभियांत्रिकी, बढ़ाईगिरी, लोहारी(Smithy), क्रीड़ा एवं खेलकूद जैसे विषय रखे गये हैं जो विज्ञानों में सर्वाधिक मूर्त हैं । विज्ञानों के अन्तर्गत डॉ. रंगनाथन ने ऑगस्ट कॉम्टे (1798-1857) द्वारा सर्वप्रथम प्रस्तुत-'सिद्धांत एवं व्यवहार के प्रत्यावर्तन' (Theory and practice alternating one another) के सिद्धांत का प्रयोग किया है । उदाहरणार्थ B- गणित के अनेक सिद्धांतों का अनुप्रयोग, C- भौतिक विज्ञान में होता है जो गणित मुख्य वर्ग के तुरन्त बाद दिया गया है । इसी प्रकार, E- रसायन विज्ञान के बाद F- प्रौद्योगिकी तथा I- वनस्पति विज्ञान के बाद J- कृषि विज्ञान वर्गों को व्यवस्थित किया गया है । इस तरह सी.सी. में सिद्धांत तथा उनके अनुप्रयोगों को एक साथ लाया गया है जो डी.डी.सी. में अलग-अलग स्थानों पर वर्गीकृत किये जाते हैं । N/S मानविकों विषयों को उनकी विषय-वस्तु की बढ़ती समृद्धि (increasing richness of contents) के क्रम में व्यवस्थित किया गया है । T/Z सामाजिक विज्ञानों को कृत्रिमता के बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया गया है । Z- विधि सभी सामाजिक विज्ञानों में सबसे अधिक कृत्रिम है । मुख्य वर्ग ▵(डेल्टा) -रहस्यवाद एवं आध्यात्मिक अनुभव को ज्ञान के चित्रण में सर्वोच्च-त्रिभुज के शीर्ष में स्थान दिया गया है । यह विज्ञान तथा मानविकी के विभाजन बिन्दु पर स्थित है । डॉ. रंगनाथन का यह मत था कि रहस्यवादी तथा आध्यात्मिक ज्ञान सभी प्रकार के ज्ञान का स्रोत होता है । यह सम्पूर्ण अनुभव सिद्ध ज्ञान का योग एवं संक्षेपण होता है । आध्यात्मिक ज्ञान को भारतवर्ष में ईश्वर एवं आत्मा (God and Self) का सर्वोच्च ज्ञान माना जाता है । सर्व विद्या प्रतिष्ठा इसलिये इसे सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया हैं । इस सुविचारित मुख्य वर्गों के क्रम के अलावा, PMEST मूलभूत श्रेणियों को उनकी घटती हुई मूर्तता के आधार पर रखा गया है । जबकि इन मूलभूत श्रेणियों के योजक चिन्हों का क्रम बोध मान (Ordinal value) प्रदान किया गया है जिससे शेल्फ पर विषयों का क्रम अमूर्त से मूर्त की ओर तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर हो । इसे प्रतिलोमता का सिद्धांत कहा जाता है । पक्ष परिसूत्र में पक्षों के आवर्तन एवं स्तर (Rounds and levels) का क्रम पक्ष-अनुक्रम के सिद्धांतों जैसे वॉल-पिक्चर सिद्धांत, काउ-कॉफ सिद्धांत आदि द्वारा निर्धारित किया जाता है । उनके पक्ष-अनुक्रम तथा एक पंक्ति के अन्तर्गत सहायक अनुक्रम के सिद्धांतों का प्रयोग अन्य वर्गीकरण पद्धतियों द्वारा भी किया गया है ।

4.6.6 लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस क्लासीफिकेशन

1898 में निर्मित लाइब्रेरी ऑफ काँग्रेस क्लासीफिकेशन (LCC) की प्रथम अनुसूची 1902 मे प्रकाशित हुई । वर्गांक Z की अनुसूची को सबसे पहले विकसित किया गया । आरम्भ से ही जे.सी.एम. हेनसन तथा वार्ल्स मार्टेल के निर्देशन में अलग-अलग विशेषज्ञों के समूहों ने विशिष्ट वर्गों की अनुसूचियों

को विकसित करने का काम किया । अनेकों अमेरिकी व विदेशी पुस्तकालयों में प्रयुक्त इस पद्धति में 21 वर्गों की 40 से अधिक अनुसूचियां हैं । कटर के एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन तथा इसके मुख्य विभाजनों में अत्यधिक समानता है तथा वही पद्धति इसकी विभिन्न अनुसूचियों के विकास में मार्गदर्शक रही है । यह एक अनुशासनानुसार वर्गीकरण की पद्धति है । यह सार्वभौमिक नहीं अपितु लिटरेरी वारंट के सिद्धांत पर आधारित है । इसमें अनुसूचियों का विकास लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस के पुस्तक-संग्रह के अनुसार किया गया है । मुख्य वर्गों को उपवर्गों में बांटा गया है । जिन्हें दो अंकों से प्रदर्शित किया जाता है और यह उपवर्ग सामान्य से विशिष्ट की ओर विकसित होते हैं । विश्व के सबसे बडे पुस्तकालय के लिये बनाई गई इस पद्धति में वर्गों का क्रम पुस्तकालय भवन की आवश्यकताओं के अनुसार भी प्रभावित होता है । यह पद्धति व्यावहारिकता वाद (Pragmatism) की जीत का एक उत्कृष्ट नमूना है ।

लाईब्रेरी ऑफ काँग्रेस क्लासीफिकेशन में प्रयुक्त वर्गक्रम इस प्रकार है:

A	Genral works		Science & Technology
Social sciences			
B	Philosophy, Psychology	Q	Science
Religion		R	Medicine
C	History & Geography	S	Agriculture
H/L	Social Sciences	T	Technology
Humanities		U	Military Science
M/N	Music and Fine Art	V	Navy
P	Language and Literature	Z	Bibliography and Library Science

सामान्य विषयों को पद्धति के शुरू में स्थान दिया गया है । इसके बाद दर्शनशास्त्र तथा धर्मशास्त्र जो मानव जाति के ईश्वर से सम्बन्धों के सिद्धांतों की रचना करते हैं, को स्थान दिया गया है । C/G के अन्तर्गत् ऐसी धारणाएं जैसे मानव आवास (Abode) तथा उनके निर्वाह (Living) के साधन और बुद्धि का पुरातन सोच से उन्नत संस्कृति की ओर परिवर्तन दिया गया है । इनसे सम्बन्धित सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक पक्ष H/L तक दिये गये हैं । M/P मानवीय सौन्दर्य बोध तथा बौद्धिक विकास हैं । Q/V प्रकृति की समझ तथा विकास सम्बन्धित विषय हैं ।

4.6.7 बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन

हैनरी एवलिन ब्लिस (1870-1955) ने अपने जीवन का अधिकांश भाग पुस्तकालय वर्गीकरण के मूलभूत सिद्धांतों के अध्ययन में व्यतीत किया । उनकी बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन पद्धति (बी.सी. 1940-1953) में मुख्य वर्गों का क्रम वैज्ञानिक तथा शैक्षिक सर्वसम्मति (Scientific and Educational consensus) पर आधारित है । उनका यह मानना था कि मुख्य वर्गों का एक नैसर्गिक

क्रम होगा है तथा अधिकांश उपयोगकर्ता ज्ञान को कमोबेश उसी क्रम में प्रयोग करते हैं । उनके द्वारा प्रयुक्त वर्गक्रम इस प्रकार हैं:

A	Philosophy	L/O	History
AM	Mathematics	P	Religion(Alternative is Z)
B	Physics	Q	Social welfare
C	Chemistry	R	Political Sciences
D	Astronomy	S	Law
E/G	biology	T	Econmics
H	Anthropology	U	REchonology
I	Psychology	V	Fine Arts
J	Deucation	W/Y	Language and Litrature
K	Social Sciences	Z	Religion(Alternative is P)

इसके अतिरिक्त उन्होंने परस्पर सम्बद्ध विषयों को एक साथ लाने के लिये संस्थिति एवं अधीनस्थता (Collocation and subordination) के सिद्धांतों का भी उपयोग किया । उदाहरणार्थ विज्ञान तथा उनके अनुप्रयुक्त पक्षों को साथ-साथ रखा गया है । उन्होंने कुछ विषयों के लिये वैकल्पिक स्थान का भी प्रावधान किया है । उदाहरणार्थ आर्थिक इतिहास विषय को अर्थशास्त्र या सामान्य इतिहास किसी के भी साथ वर्गीकृत किया जा सकता है । इसमें अनेक स्थानों पर ऐसे वैकल्पिक प्रावधान है । दूसरी ओर उनके सर्वसम्मति के सिद्धांत की काफी आलोचना की गई है । आलोचकों का यह तर्क है कि मुख्य वर्गों का कोई नैसर्गिक स्थायी कम नहीं होता, अत: ऐसे किसी क्रम को जान सकना संभव नहीं हैं । अगर ऐसा कोई क्रम हो भी तो समय-समय पर नए बहुअनुशासनात्मक विषयों के बनते रहने से इसमें परिवर्तन होते रहेगें । एक नए मुख्य वर्ग के आविर्भाव से अन्य वर्गों की स्थिति परिवर्तित हो जाती है । उनका वैकल्पिक स्थान का प्रावधान भी मुख्य वर्गों के स्थायी नैसर्गिक क्रम के विपरीत माना जा सकता है । इसके बावजूद यह कहा जा सकता है कि बी.सी. का मुख्य वर्गों का क्रम अन्य प्रतिस्पर्धी पद्धतियों की तुलना में अधिक तार्किक तथा स्थायी है ।

बोध प्रश्न-2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. वर्गीकरण पद्धति का स्वाभाव अस्थायी क्यों होता है ?

   ....

   ....

2. ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धांत बताइये ।

   ....

   ....

3. डी.डी.सी. में ज्ञान जगत का चित्रण बताइये ।

   ....

   ....

4.	द्विबिन्दु वर्गीकरण में ज्ञान का चित्रण स्पष्ट कीजिये । ....

4.7 सारांश (Summary)

मानव को ज्ञात समस्त विचारों, वस्तुओं, तकनीकों आदि के सम्मिलित योग को ज्ञान कहते हैं तथा यह ज्ञान उसकी समूहिक स्मृति के साधनों में संचित रहता है । ज्ञान गतिशील, परिवर्तनीय सदैव अपूर्ण तथा असीम होता है । ज्ञान, ज्ञाता अर्थात् व्यक्ति आधारित होता है । यह सामाजिक प्रकृति का होता है । अत: समाज तथा काल परिवर्तन के साथ इसकी संरचना भी बदल जाती है । इसके स्वभाव, संरचना तथा विशेषताओं का अध्ययन पुस्तकालय एवं सूचना पेशेवरों के लिये उसी प्रकार महत्वपूर्ण है जिस प्रकार एक सर्जन के लिये शरीर रचना विज्ञान का अध्ययन । वर्गीकरण पद्धतियां ज्ञान को दर्शाती हैं तथा उसकी विभिन्न शाखाओं की स्थिति एवं स्थान को निर्धारित करती हैं । जैसे ज्ञान परिवर्तनशील है उसी प्रकार, विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियां भी अपनी उत्पत्ति के समय तथा समाज के आधार पर ज्ञान की भिन्न-भिन्न संरचना प्रस्तुत करती हैं । कोई भी वर्गीकरण तटस्थ या स्थायी नहीं होता । सभी वर्गीकरण कुछ विशेष धारणाओं आदि की ओर झुकाव अथवा मूल्य आधारित शान की संरचना को प्रस्तुत करते हैं । मुख्य वर्गो का व्यवस्थापन सामान्यत: निम्न चार प्रकार से किया जा सकता है

(अ) वैचारिक सिद्धांत

(ब) सामाजिक प्रयोजन का सिद्धांत

(स) वैज्ञानिक अनुक्रम

(द) अनुशासनानुसार विभाजन

इन सिद्धांतों में पारस्परिक अनन्यता नहीं है । ज्ञान का चित्रण विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों के निर्माताओं द्वारा जो कि अलग अलग समाज व काल मे रहे हैं, अलग-अलग ढंग से किया गया है । ड्यूई ने मुख्य वर्गो को बेकन के व्युत्क्रमित विषय क्रमानुसार रखा जो कि बुद्धि की तीन क्षमताओं -स्मृति, कल्पना तथा विवेक द्वारा उत्पन्न होते हैं । इसमें मुख्य विभाजन अनुशासनानुसार किया गया है । यह एक 19वीं शताब्दी की पद्धति है जिसका सांचा दशमलव अंकन की मदद से विकसित किया गया है । प्रत्येक स्तर पर दस भागों में विभाजन के कारण यह कृत्रिम तथा अपरिवर्तनीय हो गयी है । ज्ञान का नैसर्गिक विकास ऐसे किसी नियंत्रण के अधीन नहीं होता । यद्यपि पदानुक्रम किसी वर्ग के केवल एक ही आयाम को दर्शाता है, लेकिन इससे पद्धति में वस्तुत: असीमित ग्राह्यता आ जाती है । सी.ए.कटर ने अपनी एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन पद्धति में मुख्य वर्गो के क्रम के लिये वैज्ञानिक एवं विकासक्रम सिद्धांत का प्रयोग किया है । इस सिद्धांतानुसार विज्ञान विषयों का विकासनुक्रम आणविक से सम्पूर्ण तत्व की ओर तथा गणित के अंक से स्थान की ओर होता है । जेम्स डफ ब्राउन की सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन पद्धति में पदार्थ, शक्ति, जीवन, बुद्धि तथा अभिलेख (Record) का अत्यन्त रोचक क्रम प्रस्तुत किया गया है । इसमें मुख्य वर्गो को कॉस्मिक तथा सामाजिक विकासक्रम में रखा गया है । एक नवीन अनुप्रयोग के रूप में, ब्राउन ने अनुशासनानुसार विभाजन की परम्परागत विधि से हटकर

यह क्रम प्रस्तुत किया था उन्होने एक स्थान सिद्धांत का प्रयोग किया । इसके अनुसार उन्होनें एक मूर्त विषय जैसे लौह या सेव लिया और उसके सभी अमूर्त पक्षों को मूर्त विषय के साथ एकत्रित कर दिया । उदाहरणार्थ लौह के विभिन्न पक्ष जैसे रासायनिक, खनिज की मिश्र धात्विक, प्रौद्योगिकीय, पुरातत्वीय व लोक साहित्यिक सभी को अनुसूचियों में एक? ही स्थान पर रखा जाएगा । दूसरी पद्धतियों जैसे डी.डी.सी., एल.सी.सी., बी.सी. तथा सी.सी. में इन सभी पक्षों को अनुशासनानुसार अलग-अलग दिया गया है । किन्तु उपयोक्ताओं की आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष में इरा एक स्थान सिद्धांत के अच्छे परिणाम नहीं निकले । डॉ. एस.आर.रंगनाथन ने अपनी कोलन क्लासीफिकेशन पद्धति में मुख्य वर्गो के लिये मुख्यत: वर्णमाला का प्रयोग किया तथा किसी नए मुख्य वर्ग को समुचित रथान प्रदान करने के लिये सुस्पष्ट प्रावधान किया । सी.सी. के सातवें संरकरण में तो मूल विषयों की संख्या 750 से भी अधिक हो गई है । उन्होंने कुल वर्गो के आधे स्थानों पर A/M विज्ञान विषयों को रखा जिनको आपस में मूर्तता के बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया गया है । N/S मानविकी विषयों को विषय-वस्तु की बढ़ती समृद्धि के क्रम में रखा गया है । जबकि T/Z - सामाजिक विज्ञानों को कृत्रिमता के बढ़ते क्रम में रखा गया है । ∆ - रहस्यवाद एवं आध्यात्मिक अनुभव विषय जो कि समस्त ज्ञान के योग, संक्षेपण तथा स्रोत को दर्शाता है, को शीर्ष स्थान प्रदान किया गया है । उन्होनें एक ही मुख्य वर्ग के अन्तर्गत समस्त समान स्तर के विचारों को तथा व्यापक रूप से शेल्फ में पुस्तकों के क्रम को सुव्यवस्थित करने के लिए सहायक अनुक्रम के स्पष्ट सिद्धांतों का प्रयोग किया । एच0ई0 ब्लिस ने अपनी बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन पद्धति में मुख्य वर्गो का क्रम उनके ही शब्दों में, वैज्ञानिक एवं शैक्षिक सर्वसम्मति के सिद्धांत पर आधारित किया । उन्होंने कुछ मुख्य वर्गो के लिये वैकल्पिक स्थान के रूप में एक विकल्प भी प्रस्तुत किया । उनका मुख्य वर्गो का क्रम सामान्यत: अधिक स्थायी माना जाता है । हालांकि कुछ दार्शनिकों का यह तर्क भी सही हैं कि वर्गो का कोई नैसर्गिक स्थायी क्रम नहीं होता, तब भी यह तो मानना पड़ेगा कि बी.सी. में प्रयुक्त मुख्य वर्गो के क्रम में अनेक विशेषताएँ हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि ज्ञान का कोई सार्वभौमिक सर्वसम्मत चित्रण नहीं हो सकता । ऐसे चित्रण व्यक्तिगत अनुभव आधारित तथा मूल्य सापेक्ष हो सकते हैं जो देश व काल के साथ बदलते रहते हैं । ज्ञान परिवर्तनशील है अत: इसका चित्रण भी परिवर्तनशील ही होना चाहिए ।

4.8 अभ्यासार्थ प्रश्न(Questions)

1. ज्ञान से क्या तात्पर्य है ? इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ।
2. ज्ञान वृद्धि की विभिन्न विधियों की व्याख्या कीजिए ।
3. ज्ञान जगत के चित्रण के विभिन्न सिद्धांतों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
4. सी.सी. तथा डी.डी.सी. में ज्ञान का चित्रण किस प्रकार किया गया है ?

4.9 प्रमुख शब्द Key Words)

अनुशासन (Discipline) : किसी विशिष्ट शोध विधि अथवा परस्पर समान अध्ययन क्षेत्रों पर आधारित ज्ञान का एक वृहद् सम्बद्ध क्षेत्र ।

शैक्षिक एवं वैज्ञानिक सर्वसम्मति (Educational and Scientific Consensus)	:	एच.ई. ब्लिस ने शिक्षा शास्त्रियों एवं वैज्ञानिकों की सर्वसम्मति पर आधारित मुख्य वर्गो के क्रम को खोजने का प्रयत्न किया था । उन्होंने यह क्रम अपनी बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन पद्धति में प्रयोग किया।
विकासक्रम (Evolutionary Order)	:	वर्गो की उत्पत्ति का कालानुक्रमिक अनुक्रम अथवा नैसर्गिक क्रम । यह) वर्गिकी (Taxonomic) तथा कॉस्मिक क्रम है ।
ज्ञान	:	मानव समाज द्वारा संरक्षित समस्त विचार, तथ्य कथा, मिथक तथा अनुभवों का योग । समाज में जो कुछ ज्ञात है तथा जो सामूहिक स्मृति में उपलब्ध है उसे ही ज्ञान कहा जा सकता है । ज्ञान वह है जो मुझे ज्ञात है जबकि सूचना वह है जो हमको ज्ञात है ।
मुख्य वर्ग (Main Class)	:	ज्ञान जगत के विभाजन में प्रथम क्रम की पंक्ति (First order array) के वर्ग । मुख्य वर्गो की संख्या तथा उनका क्रम विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों में भिन्न-भिन्न होता है । मुख्य वर्ग ज्ञान का एक वृहद चित्र प्रस्तुत करते हैं ।
एक स्थान सिद्धांत (One Place Theory)	:	किसी मूर्त विषय के समस्त अमूर्त पक्षों को उसी के आसपास विन्यस्त किया जाय । जेम्स डफ ब्राउन द्वारा प्रतिपादित यह सिद्धांत अनुशासनानुसार विभाजन की एक वैकल्पिक विधि प्रस्तुत करता है । किन्तु यह ज्ञान के चित्रण तथा पुस्तकों के शेल्फ व्यवस्थापन में समुचित परिणाम नहीं दे पाया ।

4.10 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रन्थसूची(References and Further Readings)

1. Chan, Lois Mai, Cataloguning and Classification : An Introduction, Ed.2, New York: McGraw Hill : 1994, pp. 387-398
2. Iyer, Hemalata, Classificatry Structures : Concepts, relations and representatious, Frankfurt : Indeks Verlag, 1994, pp. 12-29
3. Khanna, J.K. and Vashisth. K.K., Knowledge :Evolution, structure and research meth-odology, New Delhi : Ess Ess Publication, 1985, pp. 220-279
4. Langridge, D.W., Classification and Indexing in the humanities, London : Butterworths, 1976, pp 1-d7d.
5. Malthy, Arthur, Sayers Manual of classification for Librarians, Ed. 5, London : Andre Deutshs, 1975, pp. 122-135.

6. Rajan Pillai, C.V., and the Universe of Knowledge : Nature and dimensions, Trivandrum : Velicham Publications , 1983, pp. 29-44.
7. Ranganathan, S.R., Prolegomena to library Classification, Ed. 3, Bombay : Asia , 1967, pp 382-391.
8. Satija, M.P., Anatomy of the growth of Knowledge, Lucknow librarian 24(2), 1992, pp. 49-57.
9. Satija, M.P., Relationships in Ranganathan's Colon Classification In Relationships in Oraganizations of Knowledge/ed by Carol A Bean and Rebicca Green Dordrecht (the Netherlands) : Kuuwer, Academic Publisher, 2001 pp 199-210.
10. McGray, K., Changing context of information, Ed.2 , London : L.A., 1993.
11. Evans, William M, ed, : Knowledge and Power in Global society , Beverly hills calif : sage Publication, 1981, 320p.
12. Gnoli, Clautio, Phylogenetic Classification, Knowledge Organisation, 33(3), 2006, pp 138-152.

इकाई-5

चिंतन की विधियाँ

Modes of Thinking

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 चिन्तन की परिभाषाएँ
5.3 मस्तिष्क प्रकोष्ठ
5.4 चिन्तन की प्रमुख विधियाँ
5.4.1 प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि
5.4.1.1 प्राधिकार केन्द्रित चिंतन की विशेषताएँ
5.4.1.2 प्राधिकार केन्द्रित चिंतन विधि का ज्ञान के विकास में योगदान
5.4.2 प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि
5.4.2.1 विशेषताएँ
5.4.2.2 प्राकृतिक विज्ञान एवं प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन की विधि
5.4.2.3 विज्ञान एवं प्रत्यक्षवादपरक चिंतन की विशेषताएँ
5.4.2.4 प्रत्यक्षवादपरक चिंतन विधि का ज्ञान के विकास में योगदान
5.4.3 कल्पनात्मक चिन्तन विधि
5.4.3.1 कल्पनात्मक चिंतन की विशेषताएँ
5.4.3.2 कल्पनात्मक चिंतन विधि का ज्ञान के विकास में योगदान
5.5 सारांश
5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
5.7 प्रमुख शब्द
5.8 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

5.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के उद्देश्य निम्न हैं.

1. चिन्तन की प्रक्रिया को समझाना ।
2. चिन्तन की विभिन्न विधियों की विस्तार से जानकारी देना ।
3. चिन्तन की विधियों के अर्थ को जानना ।
4. चिन्तन की विभिन्न विधियों के ज्ञान में योगदान से परिचित करवाना ।

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

विश्व के समस्त प्राणियों में और जीवों में मानव ही एकमात्र ऐसा जीव है जिसके मस्तिष्क का विकास सर्वाधिक हुआ है, इसीलिए मानव को तर्कयुक्त प्राणी कहा जाता है क्योंकि सोचने, विचारने और उचित, अनुचित का निर्णय लेने की शक्ति मात्र मानव के पास ही है । मानव न केवल चिन्तन-मनन कर सकता है अपितु अपने बौद्धिक विकास को उस सीमा तक ले जा सकता है जहां से मानव समुदाय ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व के भविष्य का अनुमान लगाया जा सकता है । मानव मस्तिष्क की तुलना एक उपजाऊ भूमि से की जा सकती है । जैसे एक उपजाऊ भूमि पर छोटा सा बीज पोषित और पल्लवित होकर एक बड़े वृक्ष का रूप धारण कर लेता है । उसी प्रकार मानव के मस्तिष्क में एक छोटा सा विचार धीरे-धीरे विकसित होकर ज्ञान का विस्तार करता है । आज ज्ञान की जो विशाल मात्रा दिखाई देती है वह धीरे-धीरे ज्ञान की छोटी-छोटी इकाईयों में से ही विकसित हुई है ।

वस्तुतः मानव को चिन्तन-मनन की प्रखर शक्ति प्रकृति का एक बड़ा वरदान है । मानव मस्तिष्क अपने आस-पास के प्रति सदैव से ही जिज्ञासु रहा है । वह अपने आस-पास हो रही घटनाओं पर क्रिया एवं प्रतिक्रिया व्यक्त करता है । मानव अवलोकन, सूंधने, चखने, सुनने और स्पर्श द्वारा बहुत प्रकार की सूचनाओं को ग्रहण करता है । यह ग्रहण की गई सूचना मस्तिष्क में एकत्रित रहती है और भविष्य में सोचने, विचारने या निर्णय लेने में मदद करती है ।

मानव मस्तिष्क और ज्ञान एक दूसरे पर आश्रित हैं । मानव अपने अनुभव, अध्ययन और गहन चिन्तन-मनन से नए ज्ञान को विकसित करता है । इस इकाई में चिन्तन की परिभाषा, मस्तिष्क कक्ष, चिंतन की विभिन्न विधियों की विस्तार से चर्चा की गई है ।

5.2 चिन्तन की परिभाषाएँ (Definitions of Thinking)

चिन्तन सभी प्रकार के प्राणियों में किसी न किसी स्तर पर पाया जाता है अर्थात् प्राणी किसी न किसी रूप में चिन्तन करते हैं । चूंकि चिन्तन एक मानसिक प्रक्रिया है जिसे कोई भी प्रत्यक्षतः देख नहीं पाता है किन्तु व्यक्ति के चिन्तन का अनुमान उसके प्रत्यक्ष व्यवहार या प्रकटीकरण से ज्ञात किया जा सकता है । जब चिन्तन प्रकट रूप में हमारे समक्ष आता है तो उसे सुव्यक्त ज्ञान (Explicit Knowledge) कहते है और जब चिन्तन मानसिक स्तर पर ही होता है तो उसे अव्यक्त ज्ञान (Implicit Knowledge) कहते हैं । वैसे चिन्तन एक अव्यक्त मानसिक प्रक्रिया (Implicit Mental Process) है । मनोवैज्ञानिकों ने चिन्तन को अलग-अलग तरह से परिभाषित किया है । कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं :

1. कागन एवं हेवमैन (Kagan and Haveman) के अनुसार चिन्तन - "प्रतिबिम्बों, प्रतीकों, संप्रत्ययों, नियमों और अन्य मध्यस्थ इकाइयों का मानसिक कौशल हैं ।"

   "The mental manipulation of images, symbols, concepts, rules and other meditational units. "
2. बेरोन (Baron) के अनुसार - "चिन्तन में संप्रत्ययों, प्रतिज्ञाप्तियो और प्रतिबिम्बों का मानसिक कौशल समाहित है ।"

"Thinking involves mental manipulation of concepts, propositions and images."

वस्तुत: चिन्तन एक सतत् मानसिक प्रक्रिया है । हां इतना अवश्य है कि समस्या के आने पर इस प्रक्रिया में गति आ जाती है ।

5.3 मस्तिष्क प्रकोष्ठ (Brain Chamber)

मस्तिष्क के जिस प्रकोष्ठ में विचारों का समावेश होता है, उसे मस्तिष्क प्रकोष्ठ के नाम से जाना जाता है । मस्तिष्क में चिन्तन की प्रक्रिया से विचारों का निर्माण होता है । डॉ. एस.आर. रंगनाथन ने विचार सृजन की प्रक्रिया या निर्माण की प्रक्रिया को मस्तिष्क प्रकोष्ठ (Brain Chamber) का रेखाचित्र बनाकर इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है । इसमें बाह्य अनुभव पांच ज्ञानेन्द्रियों जैसे आंख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा, के द्‌वारा व्यक्ति देखने, सुनने, सूंघने, चखने और स्पर्श के द्‌वारा ज्ञानार्जन करता है । ज्ञानार्जन स्मृति में एक और माध्यम से आता है, वह है अन्तर ज्ञान (Intuition) । यह अन्तर्ज्ञान व्यक्ति में ईश्वरीय प्रदत्त बौद्धिक सम्पदा है । यह सारा ज्ञान स्मृति में एकत्रित होता है और तर्क की भट्टी पर चिन्तन की प्रक्रिया में बुद्धि पात्र के अन्दर जब तपता है तो बौद्धिक अनुभवों के रूप में पुन: स्मृति में संचित होता है । यह बौद्धिक अनुभव ही धीरे-धीरे ज्ञान संपदा के रूप में विशाल आकार को ग्रहण कर लेता है । इस प्रकार मस्तिष्क प्रकोष्ठ में नये विचारों का जन्म तथा उनका संचय होता रहता है । आवश्यकता पड़ने पर उनका प्रयोग किया जाता है । मस्तिष्क प्रकोष्ठ को निम्न रेखाचित्र 5.1 से स्पष्ट किया गया है:

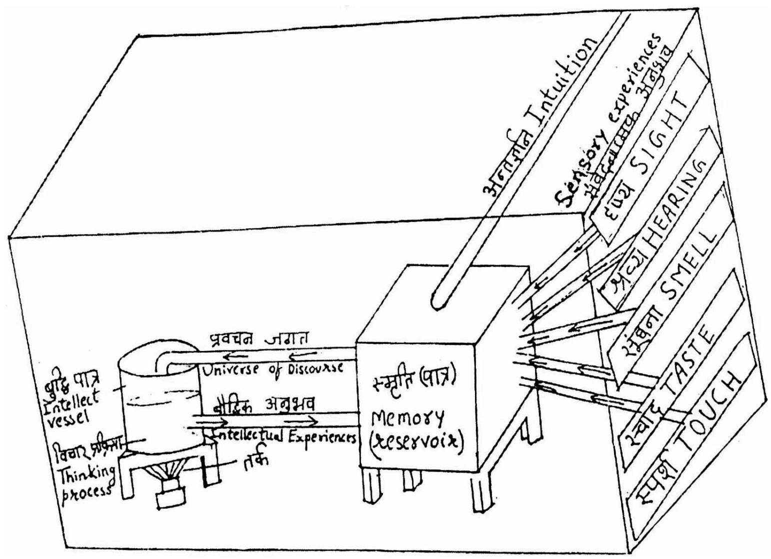

मस्तिष्क प्रकोष्ठ (Brain Chamber)

रेखाचित्र 5.1

5.4 चिन्तन की प्रमुख विधियाँ (Major Modes of Thinking)

ज्ञान का विकास सतत है और विविध भी है । ज्ञान में विविधता इसलिए है कि सारे लोग एक जैसा नहीं सोचते हैं । यह विविधता मानव मस्तिष्क में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण प्रकृति में दिखाई

देती है । विविधता प्रकृति का एक आवश्यक गुण है इसी कारण से मानव मस्तिष्क भी अलग-अलग प्रकार से चिन्तन-मनन करता है । चूंकि सभी लोग एक जैसा नहीं सोचते हैं इसलिए वे एक जैसे नहीं हैं । सभी व्यक्तियों की क्षमताओं में कार्य करने के ढंग में और उनकी प्रसन्नताओं में अन्तर दिखाई देता है । चिन्तन की तीन विधियां प्रमुख रूप से दिखाई देती हैं, जो इस प्रकार हैं :

1. प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि
2. वैज्ञानिक या प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि
3. कल्पनात्मक चिन्तन विधि

5.4.1 प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि (Authority Centred Mode of Thinking)

प्राधिकार शब्द से तात्पर्य किसी न किसी प्रकार के प्रभाव का उपयोग करने से है । वस्तुत: प्राधिकार और आज्ञा पालन ये एक दूसरे से घनिष्ट रूप से सम्बंधित हैं । इसमें अधीनस्थ व्यक्ति बिना किसी सन्देह या तर्क के अपने उच्च अधिकारी के आदेश का पालन करता है । तात्पर्य यह है कि इसमें दो प्रकार के स्तर या समूह दिखाई देते हैं । एक वे हैं जो प्राधिकार का उपयोग करते हैं यानि आदेश देते हैं और दूसरे वे जो उसका पालन करते हैं । प्राधिकार एक ऐसा पद है जों यह दर्शाता है कि आशा पालन कराने के लिए बल का उपयोग किया जाना चाहिए । यहां बल से तात्पर्य प्रभाव, अधिकार या प्रभुत्व से है । बल का उपयोग विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग ढंग से किया जा सकता है । प्राधिकार जिस व्यक्ति में निहित होता है उसका निर्णय अंतिम होता है और लोगों से अपेक्षा की जाती है कि उसके निर्णयों को स्वीकार करें । इस विधि में चिंतन केन्द्रित होता है । मनुष्य समाज में पारिवारिक जीवन व्यतीत कर तीन पीढ़ियों तक निवास करता है । परिवार के मुखिया के रूप में, जो कुछ भी सुझाव या आदेश वह प्रदान करता है उसे परिवार के सदस्य बिना कोई तर्क के स्वीकार करते हैं । राजनैतिक जीवन में सरकार का अधिकार होता है । जो कुछ भी अधिकारी निर्देश दे दे वह सर्वमान्य होता है । विज्ञान के क्षेत्र में प्रकृति का प्रभुत्व होता है । धर्म के क्षेत्र में प्रत्येक मनुष्य को अपने धर्म के प्रति गहरी आस्था वह विश्वास होता है । यह विश्वास पर आधारित है । इस विधि में जो आज्ञा पालनकर्ता के तर्कों, विचारों का कोई महत्व नहीं होता । मार्क्सवाद एवं लेनिनवाद इस प्रकार के विचारों के पोषक रहे हैं ।

5.4.1.1 प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Authority Centered Mode of Thinking)

1. चिन्तन की यह विधि तर्क के विपरीत है । इसमें बिना कोई सन्देह या प्रश्न पूछे, आज्ञा पालन करने वाले समूह होते हैं ।
2. चिन्तन की इस विधि में जो कुछ भी कहा जाता है उसे अंतिम सत्य माना जाता है ।
3. चिन्तन की इस विधि में विरोध या असहमति बिल्कुल सहन नहीं की जाती है ।
4. चिन्तन की इस विधि में ज्ञान की उत्पत्ति का कारण प्रश्न या सन्देह नहीं होते हैं ।
5. इस विधि में किसी भी प्रमाण के बिना अनेक बातों एवं तथ्यों पर अटूट एवं दृढ़ विश्वास कर लिया जाता है ।

6. चिन्तन की इस विधि में ज्ञान मुख्य रूप से अन्तर्ज्ञान (Intuition) और अनुभव आदि से सृजित किया जाता है ।
7. चिन्तन की इस विधि में स्वामी भक्ति का होना बहुत आवश्यक है ।
8. इसमें एक व्यक्ति का चिन्तन सबके लिए लागू होता है ।

5.4.1.2 प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि का ज्ञान के विकास में योगदान (Contribution of Authority Centred mode of Thinking in the Development of Knowledge)

चिन्तन की इस विधि ने ज्ञान के विकास में योगदान दिया है । धर्म की उत्पत्ति चिन्तन की इसी विधि से हुई है । चिन्तन की यह विधि आज भी धर्म सम्बंधी कट्टर मान्यताओं और विश्वासों का आधार है । हीगल का कथन है कि अधिकतर लोग धर्म भीरू होने के कारण उसकी सच्चाई को चुनौती नहीं दे पाते हैं इसलिए वे सब उसे बिना किसी प्रश्न के स्वीकारते हैं ।

आज भी धर्म के क्षेत्र में न तो प्रश्न किए जा सकते हैं, न तर्क और न ही संदेह किया जा सकता है । यहां तक कि लोग धार्मिक बातों को ईश्वरीय आदेश मानकर न केवल सहज रूप से स्वीकार करते हैं वरन् उस पर चलकर अपने जीवन को धन्य समझते हैं । वस्तुतः धार्मिक मान्यताएं या तो धर्म गुरूओं से मिली हैं या धार्मिक ग्रंथों से । इन सभी मान्यताओं का विकास, चिन्तन की इसी विधि से हुआ है ।

जिन समाज सुधारकों, विचारकों, दार्शनिकों एवं वैज्ञानिकों ने धार्मिक एवं सामाजिक कुरीतियों एवं पाखंडों का विरोध किया उन्हें न केवल प्रताड़ना सहनी पड़ी बल्कि मृत्यु का वरण भी करना पड़ा । आज धार्मिक उन्माद एवं धार्मिक कारणों से दंगे होते ही रहते हैं । सत्रहवीं एवं अठारहवीं शताब्दी में वैज्ञानिक चिन्तन के प्रभाव के कारण धीरे-धीरे धर्म का प्रभाव क्षीण होने लगा । जिस धर्म ने या धार्मिक ग्रंथों अथवा धर्म गुरूओं ने समाज के सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया था उसी धर्म का प्रभाव धीरे-धीरे क्षीण होने लगा । आज व्यक्ति धर्म गुरू या धार्मिक ग्रंथ क्या कहते हैं, इसका ध्यान किए बिना वैज्ञानिक चिन्तन को जीवन में अपनाता है । शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण लोगों के जीवन में जागृति आई है और लोगों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में तर्क का उपयोग करना प्रारंभ कर दिया है ।

आज भी प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि का प्रभाव दिखाई देता है । जब भी कोई व्यक्ति धर्म सम्बंधी कट्टर मान्यताओं और आधारों को चुनौती देने का प्रयास करता है तो धर्मांध लोगों का समूह उसे विनष्ट करने का प्रयास करने लगता है ।

सामान्य जीवन में भी प्राधिकार दिखाई देता है । आज किसी भी प्रकार के शासन पर विचार करें तो सभी प्रकार के शासन किसी न किसी तरह से प्राधिकार का उपयोग करते हैं । वस्तुतः शासन वह शक्ति है जो अपनी जनता पर अपने प्राधिकार का उपयोग करती है । ध्यान यह रखें कि प्राधिकार का उपयोग वे ही कर सकते हैं जो शक्तिशाली होते हैं । उदाहरण के लिए तानाशाही या राजतंत्र । इस तरह के शासन में धार्मिक गुरूओं का स्थान तानाशाह ले लेता है और यह तानाशाह एक व्यक्ति हो सकता है या एक पार्टी हो सकती है । उनके अनुसार राज्य कोई भी काम गलत नहीं करता है और जनता का प्रत्येक व्यक्ति राज्य के लिए है और तानाशाह को उसके लिए क्या हितकर है या क्या उपयुक्त है, इसका निर्णय लेने का अधिकार है ।

इस तरह की विचारधारा में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं होती है । लेकिन चिन्तन की इस विधि के प्रभाव का ह्रास उस समय से प्रारंभ हो गया जब मनुष्य ने घटनाओं को तर्क के आधार पर समझने का प्रयास किया और किसी भी बात को बिना प्रमाण के या बिना प्रश्नों के सीधे मानने या स्वीकार करने से इनकार करना प्रारंभ कर दिया । फिर भी चिन्तन की इस विधि का प्रभाव आज भी किसी न किसी रूप में दिखाई देता है ।

प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि का प्रभाव साहित्य के क्षेत्र में भी दिखाई देता है । साहित्य में कवियों की कल्पनाएं एक प्राधिकार के रूप में स्वीकार की जाती रही हैं । लेकिन वैज्ञानिक विकास एवं लोगों के ज्ञान स्तर में वृद्धि के कारण कवियों की सुन्दरता की उपमाएं आज लोगों को स्वीकारने में कठिनाई होती है । जैसे कवि सुन्दरता की तुलना चन्द्रमा से करते आ रहे हैं । आज चन्द्रमा के बारे में जो वैज्ञानिक तथ्य हमें ज्ञात हैं उनके सन्दर्भ में इस उपमा को स्वीकारने में कठिनाई होती प्रकृति के क्षेत्र में भी इस विधि का प्रभाव दिखाई देता है । प्रकृति बहुत जटिल है और उसकी जटिलता किसी न किसी रूप में हमें दिखाई देती है । प्रकृति पर मनुष्य ने अधिक से अधिक नियंत्रण का प्रयास किया है और मानव ऐसा इसलिए कर पाया है क्योंकि उसने अपने आप को उसके प्राधिकार के प्रति समर्पित कर दिया है । उदाहरण के लिए गुरूत्वाकर्षण के सिद्धांत की अवहेलना करके यदि किसी मकान के निर्माण का प्रयास किया जाए तो वह सम्भव नहीं हो सकेगा । मानव प्रकृति की जटिलताओं को तर्क की विधियों के द्वारा समझने का प्रयास करता है । आज मानव ने प्रकृति को न केवल समझा है अपितु उसे व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । यह प्रयास उसी समय सम्भव हो सकता है जब उसने प्रकृति को निष्पक्ष रूप से सत्य मानते हुए उसके प्राधिकार को स्वीकारा है । अर्थात् प्रकृति की व्यवस्था जैसी है उसे स्वीकार कर लिया गया है ।

बोध प्रश्न - 1

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. सुव्यक्त ज्ञान किसे कहते हैं ?

   ....

   ....

2. चिंतन को परिभाषित कीजिए ।

   ....

   ....

3. मस्तिष्क प्रकोष्ठ का रेखाचित्र बनाइए ।

   ....

   ....

4. चिंतन की प्रमुख विधियाँ बताइये ।

   ....

   ....

5.4.2 प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि (Positivistics Mode of thinking)

प्रत्यक्षवादपरक एक ऐसी चिन्तन की विधि है जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण को पुष्ट करती है । इस विधि को वैज्ञानिक चिन्तन विधि के नाम से भी जाना जाता है । प्रत्यक्षवाद इस बात का संकेत

करता है कि इसमें जो कुछ भी कथन किया जाता है वह निश्चित होता है या सही होता है और आवश्यकता पड़ने पर उसे पुन: सुनिश्चित किया जा सकता है । वस्तुत: प्रत्यक्षवाद के मुख्य प्रवर्तक फ्रांसीसी दार्शनिक ऑगस्ट कॉस्टे (1798- 1857) थे ।

पद 'Positive' की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'Positives' से हुई है जिससे आशय है - निश्चित, सुनिश्चित या सुस्पष्ट (Definit) । शब्द 'Positivism' की व्युत्पत्ति फ्रेंच शब्द 'Positive' से भी मानी जाती है, जिसका अर्थ है - नि:संशय (Sure) और निश्चित (Certian) ।

ऑगस्ट कॉस्टे उन्नीस वीं शताब्दी के एक प्रमुख दार्शनिक हैं । उनके अनुसार प्रत्यक्षवाद एक ऐसी दार्शनिक प्रणाली है जो निरीक्षण योग्य तथ्यों पर आधारित है । ऑगस्ट कॉम्टे के अनुसार ज्ञान के विकास की अंतिम अवस्था प्रत्यक्षवाद है । यह ज्ञान के विकास का अंतिम चरण है लेकिन इस अंतिम चरण तक पहुंचने के लिए तीन स्तरों से होकर गुजरना पड़ता है ।

1. ईश्वरपरक स्तर (Theological Stage)
2. आध्यात्मिक स्तर (Metaphysical Stage)
3. प्रत्यक्षवादपरक स्तर (Positivistic Stage)

इन उपर्युक्त तीनों चरणों को निम्नलिखित उदाहरणों के द्वारा बेहतर ढंग से समझा जा सकता है :

1. ईश्वरपरक स्तर

इसे अनुभूति अवस्था भी कहा जाता है, इस अवस्था में व्यक्ति विशेष द्वारा ज्ञानेन्द्रिय अनुभवों के आधार पर तथ्यों का संकलन किया जाता है और ज्ञान को धार्मिक स्तर पर स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है । उदाहरण के लिए गुरूत्वाकर्षण बल (Gravitation Force) को पूर्व में धार्मिक स्तर पर स्पष्ट करने के लिए यह कहा जाता था कि आकाशीय तारों और ग्रहों में ईश्वरीय देवी-देवता निवास करते हैं और देवताओं की शक्ति के कारण ये आपस में एक दूसरे को आकर्षित करते हैं और अपने से दूर धकेलते हैं । वस्तुत: यह व्यक्ति के चिन्तन का प्राथमिक स्तर है । जिसमें वह अपनी, ज्ञानेन्द्रियों से संकलित तथ्यों की धार्मिक पृष्ठभूमि में व्याख्या करते हैं ।

2. आध्यात्मिक स्तर

इस दूसरे स्तर पर व्यक्ति आध्यात्मिक स्तर की ओर बढ़ता है और अपने अंतर्ज्ञान (Intuition) और बुद्धि (Intellect) का उपयोग करके तथ्यों को स्पष्ट करने का प्रयास करता है । इस स्तर पर गुरूत्वाकर्षण बल के बारे में यह प्रतिपादित किया गया कि इन तारों एवं ग्रहों में एक अति मानवीय शक्ति है जो इन्हें लगातार गति (Movement) में रखती है अर्थात् इस अवस्था में मनुष्य अपने व्यक्तिगत ज्ञान का प्रयोग कर तथ्यों को स्पष्ट करने का प्रयास करता है ।

3. प्रत्यक्षवादपरक स्तर

यह चिन्तन का तीसरा स्तर है जिसमें घटनाओं की सही-सही व्याख्या मात्र नियमों और सिद्धान्तों के आधार पर की जाती है । यहां कल्पनाओं के आधार पर ज्ञान का प्रतिपादन न करके अवलोकन, निरीक्षण के आधार पर सत्य को प्रतिपादित किया जाता है । इसमें गुरूत्वाकर्षण बल को गणित के समीकरण द्वारा स्पष्ट किया जाता है जिसमें परिमाण (Mass) और दूरी (Distance) का अवलोकन करके इस तथ्य को स्पष्ट किया जाता है ।

वस्तुतः प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि में तथ्यों और घटनाओं को उनके मूल रूप में अवलोकन करके फिर उन्हें तर्क एवं प्रयोग के आधार पर स्पष्ट किया जाता है । यह काल्पनिक न होकर वास्तविक चिंतन है एवं निरपेक्ष न होकर सापेक्ष चिंतन है । वैज्ञानिक प्रविधि के द्वारा अभिलक्षित होने के कारण यह पूर्ण निश्चित एवं प्रमाणित होता है । इसके द्वारा मानव समाज का कल्याण होता है इस प्रकार का चिंतन किसी उद्देश्य की पूर्ति में सहायक सिद्ध होता है ।

वस्तुतः इसमें तथ्यों के आधार पर तर्क की सहायता से घटनाओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है ।

5.4.2.1 विशेषताएँ (Characteristics)

1. इस चिन्तन की विधि में तर्क करने की पूरी स्वतंत्रता होती है ।
2. इसमें ज्ञान के जन्म का आधार संदेह होता है ।
3. इसमें परिकल्पना का प्रतिपादन किया जाता है और यदि परीक्षण में परिकल्पना गलत सिद्ध होती है तो उसे संशोधित कर पुनः प्रतिपादित किया जाता है ।
4. चिन्तन की यह विधि प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन की विधि से सर्वथा विपरीत है ।
5. चिन्तन की इस विधि से प्राकृतिक विज्ञानों का विकास हुआ है ।
6. कोई भी विषय जो प्रत्यक्षवाद चिन्तन पर आधारित है उसे वैज्ञानिक विषय कह सकते हैं ।
7. इसमें सिद्धांत उस समय तक अंतिम रूप प्राप्त नहीं करते जब तक कि उन्हें सत्यापन के द्वारा सुनिश्चित नहीं कर लिया जाता ।
8. इस विधि को विश्लेषणात्मक दर्शन (Analytic Philosophy) भी कहते हैं ।
9. ऐसा नहीं है कि चिन्तन की इस विधि से प्रतिपादित ज्ञान पूर्ण होता है और उसमें संशोधन की आवश्यकता न पड़ती हो ।
10. इस ज्ञान में त्रुटि हो सकती है जिसे ज्ञात होने पर संशोधित किया जाता है ।
11. यह अपने निष्कर्षो को गोपनीय नहीं रखती है ।
12. अन्य चिन्तन की विधियों की तरह यह केवल व्यक्तिनिष्ठ ही नहीं है अपितु यह व्यक्तिनिष्ठ (Subjective) एवं वस्तुनिष्ठ (Objective) दोनों है ।
13. इसमें आलोचनाओं का स्वागत किया जाता है और सत्यापित आलोचना को स्वीकार कर लिया जाता है ।
14. चिन्तन की इस विधि में किसी भी तथ्य को अंतिम सत्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है ।

5.4.2.2 प्राकृतिक विज्ञान एवं प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन की विधि (Science and Positivistic Mode of Thinking)

प्राकृतिक विज्ञानों में मुख्य रूप से प्राकृतिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है । जैसा कि हम जानते हैं कि प्रकृति में एकरूपता है और उसमें खोजा गया ज्ञान सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक (Universal) होता है । इसमें जो भी कथन किए जाते हैं वे सुनिश्चित होते हैं । इसमें थन तभी प्रतिपादित किए जाते हैं जब उन्हें बारम्बार परीक्षण करके सत्यापित कर लिया जाता है ।

5.4.2.3 विज्ञान एवं प्रत्यक्षवादपरक चिंतन की विशेषताएँ (Characteristic of Science and Positivistic mode of Thinking)

इस प्रकार के चिंतन की निम्न विशेषताएँ हैं:

1. **परिशुद्धता (Accuracy) :** इसमें जो कुछ भी कथन प्रतिपादित किए जाते हैं, वे परिशुद्ध होते हैं ।
2. **प्रामाणिकता (Validity) :** इसमें प्रमाणों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं । जो कुछ भी कथन किया जाता है उसे उपलब्ध प्रमाणों से पुष्ट किया जाता है ।
3. **संशयवाद (Sceplicism) :** वस्तुत: संशय नए ज्ञान का जन्मदाता है । हर नया संशय नए ज्ञान को आधार प्रदान करता है ।
4. **भविष्यवाणी (Prediction) :** वैज्ञानिक ज्ञान में भविष्यवाणी करने की क्षमता होती है और इसकी भविष्यवाणियां ज्यादा सही पाई जाती है ।
5. **निश्चितता (Certainty)** वैज्ञानिक ज्ञान निश्चित होता है अर्थात् सही होता है ।
8. **व्यवस्थित करण (Systematization)** वैज्ञानिक ज्ञान में एक सुव्यवस्था दिखाई देती है । सुव्यवस्था में तीन गुण होते हैं - 1. परिपूर्ण होना, 2. तर्क आधारित होना और 3. अन्तर संबंधित होना ।

5.4.2.4 प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि का शान के विकास में योगदान (Contribution of Positivistic Mode of Thinkingn in the Development of Knowledge)

चिन्तन की इस विधि से प्राकृतिक विज्ञानों का विकास हुआ । प्राकृतिक विज्ञान के विकास ने सामाजिक विज्ञानों और मानविकी के कई विषयों को प्रभावित किया है । चार्ल्स डारविन ने विकासवाद का सिद्धान्त (Theory of Evolution) प्रतिपादित किया । इस सिद्धान्त के विकास ने ईश्वरीय सृजन (Divine Creation) की धारणा को हिलाकर रख दिया क्योंकि धर्मो द्वारा प्रतिपादित यह कहानी तर्क पर खरी नहीं उतरती । विकासवाद के सिद्धान्त ने धार्मिक विश्वासों और मान्यताओं को हिलाकर रख दिया । धीरे-धीरे धार्मिक लोगों ने नई वैज्ञानिक मान्यताओं के अनुरूप अपने सिद्धान्तों की व्याख्या करना शुरू कर दिया और धर्म ने समझौतावादी दृष्टिकोण विकसित किया ।

इसी तरह कॉपरनिकस ने जब यह बताया कि इस ब्रम्हाण्ड का केन्द्र सूर्य है और सारे ग्रह उसके चारों ओर घूमते हैं तो यह कथन विभिन्न धार्मिक मान्यताओं के विपरीत था । चूंकि कॉपरनिकस का कथन तर्कयुक्त चिन्तन पर आधारित था और उन्होंने अपने कथन की पुष्टि अवलोकनों एवं उपलब्ध तथ्यों के आधार पर की थी । इसलिए धार्मिक मान्यताओं ने धीरे-धीरे अपने धर्मोपदेशों की तदनुरूप व्याख्या शुरू कर दी ।

चिन्तन की इस विधि ने प्राकृतिक विज्ञान को ही नहीं बल्कि सामाजिक विज्ञान और मानविकी को भी प्रभावित किया है । चिन्तन की इस विधि का प्रभाव हम मनोविज्ञान के क्षेत्र में देख सकते हैं । मनोविज्ञान के क्षेत्र में मनोविश्लेषणात्मक विचार धारा (Psycho-analytical School) का जनक फ्राइड को माना जाता हैं वे विएना में एक चिकित्सक थे । चूंकि चिकित्सक थे इसलिए वे अपने रोगियों के केसों का अध्ययन करते थे । अध्ययन के दौरान उन्हें अनुभव हुआ कि मानव के चेतन मन पर

अवचेतन मन का बहुत प्रभाव होता है और इस विचार को उन्होंने अवलोकनों, अध्ययनों और परीक्षणों से पुष्ट किया । परिणामत: मनोविज्ञान के क्षेत्र में मनोविश्लेषण विकसित हुआ और इसे वैज्ञानिक आधार मिला । फ्राइड से पहले मन की विभिन्न जटिलताओं का कोई वैज्ञानिक स्पष्टीकरण नहीं था ।

चिन्तन की इस विधि का प्रभाव साहित्य पर भी दिखाई देता है । आज प्रत्यक्षवाद के प्रभाव के कारण लोगों का साहित्य के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव आया है । आज साहित्य में उपमायें बदल चुकी हैं । विज्ञान के प्रभाव के कारण लोग उन उपमाओं को नकारने लगे हैं जिनके बारे में पहले स्वीकारोक्ति थी । इस तरह हम कह सकते हैं कि प्रत्यक्षवाद चिन्तन विधि का प्रभाव प्राकृतिक विज्ञानों पर ही नहीं अपितु ज्ञान के अन्य क्षेत्रों पर भी बहुत अधिक पड़ा ।

5.4.3 कल्पनात्मक चिन्तन विधि (Speculative Mode of Thinking)

स्पेक्यूलेटिव (Speculative) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Specere से हुई है जिसका अर्थ ढूढ़ निकालना, खोजना, पता लगाना । वस्तुत: यह एक ऐसा सिद्धान्त या कथन है जो हमारे मतों (Views) या अनुमानों (Guess) पर आधारित होता है । उदाहरण के रूप में हम कह सकते हैं कि पुनर्जन्म के बारे में कोई भी कथन या सिद्धान्त एक कल्पनात्मक चिन्तन है ।

कल्पनात्मक चिन्तन विधि को तत्वमीमांसक चिन्तन विधि (Metaphysical Mode of Thinking) भी कहते हैं जिसकी उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द Metaphysics से हुई है जिसका अर्थ है - After the thing of nature । इसका उपयोग मुख्य रूप से अरस्तु के द्वारा लिखे गए उन तमाम ग्रंथों को प्रदर्शित करने के लिए किया गया था और बाद में जिन्हें तत्वमीमांसक के नाम से जाना जाता था । प्राचीन एवं मध्यकालीन दार्शनिकों ने इसका अर्थ उन विषयों से लगाया जो Things of nature के बाद आते हैं । वस्तुत: इस प्रकार का विचार ज्ञानेन्द्रियों के अनुभव से पृथक होता है और इसलिए ही उसे समझने में कठिनाई होती है ।

आज कल्पनात्मक चिन्तन से आशय उन घटनाओं, वस्तुओं और तथ्यों के अध्ययन से लगाया जाता है जो प्रकृति से परे हैं । इसमें उन प्रश्नों का उत्तर ढूंढने का प्रयास किया जाता है जिन्हें अवलोकन या प्रयोग द्वारा समझने में कठिनाई होती है । आज दर्शन शास्त्र में तत्वमीमांसा के अन्तर्गत जीव और आत्मा क्या है ' शरीर का चेतन तत्व से क्या सम्बंध है? मनुष्य को संकल्प की स्वतंत्रता है या नहीं, का अध्ययन किया जाता है । इसके साथ-साथ मस्तिष्क की प्रकृति, उसमें ज्ञान की उत्पत्ति और उसके ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता आदि पर भी विचार किया जाता है । चिंतन की इस विधि ने ज्ञान के विकास में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है । इस चिंतन ने समाज विज्ञान में मानविकी को बहुत प्रभावित किया है ।

5.4.3.1 कल्पनात्मक चिन्तन विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Speculative Mode of Thinking)

1. चिन्तन की इस विधि में समाज में मनुष्य की परिस्थितियां और उसके अनुभवों का अध्ययन किया जाता है । इसके साथ-साथ उसके भविष्य का अनुमान भी लगाया जाता है ।

2. चूंकि मनुष्य-मनुष्य में अन्तर होता है, मानव के सोचने विचारने, अनुभव करने आदि में समानता नहीं होती है इसलिए एक व्यक्ति को आधार बनाकर सामान्य सिद्धान्तों को प्रतिपादित करना कठिन होता है और ये समय के अनुसार बदलते भी रहते हैं ।
3. यह चिन्तन की विधि मानव की भावनाओं से सम्बंधित है । जैसा कि हम जानते हैं कि मानव की भावनाओं पर नियंत्रण सम्भव नहीं है क्योंकि मानव पर नियंत्रित परीक्षण (Controlled Experiment) कर पाना सम्भव नहीं होता है । इसलिए सामाजिक विज्ञानों में निश्चित एवं स्थायी भविष्यवाणी करना भी सम्भव नहीं होता है ।
4. चिन्तन की इस विधि में मनुष्य की परिस्थितियों का अधिकांशत: अवलोकन के आधार पर अध्ययन किया जाता है । इसलिए सामाजिक विज्ञानों में प्रतिपादित सिद्धान्तों को मानकीय सिद्धान्त (Normative Principle) कहते हैं जो बहुत लम्बे समय तक स्थायी नहीं होते है । जैसा कि सर्वविदित है कि सामाजिक विज्ञान में तथ्य, परिस्थितियों के बदलने पर बदल जाते हैं और इन तथ्यों को नई परिस्थितियों के संदर्भ में समझना आवश्यक हो जाता है । इसलिए सामाजिक विज्ञानों में परिस्थितियों के बदलने पर मानकीय सिद्धान्त भी बदल जाते हैं । यह कहा जा सकता है कि जो सिद्धान्त पहले प्रतिपादित किए गए थे वे गलत नहीं थे बल्कि समय के साथ-साथ परिस्थितियों के बदलने पर सिद्धान्तों में भी परिवर्तन आवश्यक हो गया । इसीलिए सामाजिक विज्ञान में सत्य स्थायी नहीं है बल्कि वह सापेक्षिक है । स्थान एवं काल के अनुसार मूल्य बदलते रहते हैं । आज एक समुदाय में जो गलत माना जाता है वह दूसरे समुदाय में सहज स्वीकार्य है । इसी तरह एक राष्ट्र में जिसके लिए कठोर सजा का प्रावधान है दूसरे राष्ट्र में उसी अपराध के लिए साधारण सजा भी नहीं है ।

5.4.3.2 कल्पनात्मक चिन्तन विधि का ज्ञान के विकास में योगदान (Contribution of Speculative Mode of Thinking in the Development of Knowledge)

कल्पनात्मक चिन्तन विधि का ज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है । चिन्तन की इस विधि ने सामाजिक विज्ञान और मानविकी को बहुत प्रभावित किया है । कल्पनात्मक चिन्तन विधि से साहित्य अत्यधिक प्रभावित हुआ है । आज अनेक ऐसे प्रशिक्षण विद्यालय खोले जा रहे हैं जो कवि एवं लेखक बनने को प्रशिक्षण देते हैं । आज कविता, कहानी, चुटकले आदि मनुष्य के थके हुए मस्तिष्क को तनावरहित करने के लिए साधन या माध्यम समझे जाने लगे हैं । आज साहित्यिक आलोचना को मनोविज्ञान के सन्दर्भ में समझने का प्रयास किया जा रहा है । समाज-वैज्ञानिक यह ज्ञात करने में लगे हुए हैं कि कैसे साहित्य की विभिन्न विधाएं समाज के लिए उपयोगी हो सकती हैं । विज्ञान भी सामाजिक प्रभावों से पूर्णत: मुक्त नहीं है क्योंकि वैज्ञानिक चिन्तन भी पूर्णत: निरपेक्ष नहीं है । वैज्ञानिक भी बहुत सी खोजे और सृजन सामाजिक प्रतिष्ठा एवं धनार्जन के लिए करने लगे हैं । वैज्ञानिक भी उन क्षेत्रों में कार्य करना पसंद करते हैं जिनमें उन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है और उनके स्तर को स्वीकारा जाता है । इसलिए यह कहना कि विज्ञान पूर्णत: सामाजिक प्रभावों से मुक्त है, कहना ठीक नहीं होगा । वैज्ञानिक भी मानव समुदाय का एक अभिन्न अंग है और वह समाज के प्रभावों से पूर्णत: मुक्त नहीं है ।

चिन्तन की इस विधि ने ज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है तथा इसने हमें प्रकृति, ईश्वर, मस्तिष्क आदि के सम्बंधों के विषय में सोचने के लिये भी विवश कर दिया है और विभिन्न चिन्तकों ने अपनी कल्पना शक्ति से नए ज्ञान का सृजन किया है ।

बोध प्रश्न - 2

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. त्यक्षवाद परक चिन्तन विधि को स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

2. प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि की प्रमुख विशेषताएँ बताइये ।

   ....

   ....

3. कल्पनात्मक चिन्तन विधि को स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

4. प्राधिकार केन्द्रित विधि की प्रमुख विशेषताएँ बताइये ।

   ....

   ....

5.5 सारांश (Summary)

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त वर्णित तीन प्रकार की चिन्तन विधियां हो सकती हैं । इन चिन्तन विधियों ने ज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है । प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि, प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि और कल्पनात्मक चिन्तन विधि ने ज्ञान के विकास में किसी न किसी रूप में योगदान दिया है । प्रत्यक्षवाद चिन्तन की विधि वैज्ञानिक चिन्तन विधि है जिससे सृजित ज्ञान सम्पूर्ण मानव जाति के लिए अभ्यूदय का मार्ग प्रशस्त करता है ।

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. चिन्तन की विभिन्न विधियां कौन-कौन सी हैं? कल्पनात्मक चिन्तन विधि को समझाइए ।
2. प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि एवं प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए ।
3. प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि क्या है ? ज्ञान के विकास में इसके योगदान का वर्णन कीजिए ।
4. प्रत्यक्षवाद चिन्तन विधि एवं प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि के मध्य प्रमुख विभिन्नताओं को उदाहरण सहित समझाइए ।
5. चिन्तन की प्रक्रिया क्या है? समझाइए ।
6. प्राधिकार केन्द्रित चिन्तन विधि के ज्ञान के विकास में योगदान का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

5.7 प्रमुख शब्द (Key Words)

प्राधिकार (Authority)	:	प्राधिकार शब्द से तात्पर्य किसी न किसी प्रकार के प्रभाव का उपयोग करने से है ।
प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि (Positivistics Mode of Thinking)	:	वस्तुतः प्रत्यक्षवादपरक चिन्तन विधि में तथ्यों और घटनाओं को उनके मूल रूप में अवलोकन करके फिर उन्हें तर्क एवं प्रयोग के आधार पर स्पष्ट किया जाता है ।
कल्पनात्मक चिन्तन विधि (Speculative Mode of Thinking)	:	वस्तुतः यह एक ऐसा सिद्धान्त या कथन होता है जो हमारे मतों या अनुमानों पर आधारित होता है ।

5.8 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (Reference and Further Readings)

1. Garg, B.S., Philosophy of scientific of positivistic mode of thinking, Library Herald, Vol. 23, No.1, 1984, pp.1-13
2. Khanna, J.K. and Vashisth, K.K., Knowledge : Evolution, structure and research methodology, New Delhi : Ess Ess Publication, 1985.
3. Ranganathan, S.R., Prolegomena to library Classification, Banglore : Sardar Ranganathan Endowment for library science, 1989
4. Sharma, Pandey, S.K., Universe of knowledge, Delhi : Ken Publications, 1990.
5. सिंह, ए.के., संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास, 2002 ।
6. सिंह, एस, ज्ञान जगत : स्वरूप, संरचना एवं विकास, भोपाल : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1999, पृ. 20-25 ।

इकाई-6

अनुसंधान का अर्थ, अनुसंधान समस्या और अनुसंधान प्रक्रिया
Meaning of Research, Reseach Problem and Process of Research

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 अनुसंधान की उत्पत्ति
6.3 अनुसंधान : परिभाषा
6.4 अनुसंधान के उद्देश्य
6.5 अनुसंधान के लाभ
6.6 अनुसंधान के प्रकार
6.7 पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान की आवश्यकता
6.8 अनुसंधान समस्या
6.9 अनुसंधान प्रक्रिया के चरण
6.10 सारांश
6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न
6.12 प्रमुख शब्द
6.13 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

6.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं :

1. अनुसंधान का अर्थ से परिचय करवाना
2. अनुसंधान की परिभाषाओं की जानकारी देना
3. अनुसंधान के लाभों का अध्ययन करना
4. अनुसंधान के प्रकारों एवं उद्देश्यों से परिचित कराना ।
5. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान की आवश्यकता स्पष्ट करना ।
6. अनुसंधान समस्या का विस्तृत वितरण प्रदान करना ।
7. अनुसंधान प्रक्रिया के चरणों से अवगत करवाना ।

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है, वह हमेशा नवीन तथ्यों को जानने हेतु उत्सुक रहता है । मानव की जिज्ञासु प्रवृति के फलस्वरूप प्रतिक्षण नवीन विचार जन्म लेते रहते हैं । जब मनुष्य इन विचारों पर गहन चिंतन करता है तथा प्रयोगों व विश्लेषणों के द्‌वारा उनकी सत्यता को प्रमाणित करता हैं

तब ये विचार व्यवस्थित ज्ञान में परिवर्तित हो जाते हैं । मानवीय विकास में व्यवस्थित ज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका रही है । कृषि युग से औद्योगिक युग और औद्योगिक युग से सूचना युग की यात्रा में पाथेय ज्ञान ही रहा है । आज जिन्हें हम विकसित राष्ट्र कहते हैं वे सूचना और ज्ञान आधारित समाज है । वहां सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियों में नवीनतम सूचनाओं की उत्पत्ति आदान-प्रदान और उपयोग होता है । जहाँ तक कि सकल घरेलू उत्पाद (GNP) का अधिकांश हिस्सा अनुसंधान एवं विकास तथा सेवा क्षेत्र की गतिविधियों से आता है । इन राष्ट्रों में अनुसंधान एवं विकास और शैक्षणिक गतिविधियों को सभी स्तरों पर प्रोत्साहित एवं समर्थित किया जाता है । साथ ही इन राष्ट्रों में विज्ञान, सामाजिक विज्ञान यहाँ तक कि मानविकी के क्षेत्रों में भी नवीनतम वैज्ञानिक शोधों को चारों ओर से बढ़ावा दिया गया है ।

आवश्यकता आविष्कार की जननी है । समाज की निरन्तर बढती हुई आवश्यकताओं एवं सुविधाओं की माँग ने नए-नए आविष्कारों को जन्म दिया है । आज अनुसंधान एवं विकास गतिविधियाँ एकल प्रयास न होकर सामूहिक या संगठित प्रयास बन चुके हैं तथा अनुसंधान एवं विकास की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने एवं त्वरित परिणामों की प्राप्ति के लिए अनुसंधान संस्थाओं एवं प्रयोगशालाओं को स्थापित किया गया है । ये संस्थाएँ दिन-रात अनुसंधान कार्य में लगी हुई है । सरकारों ने भी अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों के महत्व को समझा है और उन्हें अनुदान एवं विविध प्रकार से मदद देकर प्रोत्साहित किया है ।

अनुसंधान कार्य दो स्तरों पर हो रहा है, एक विश्वविद्यालय स्तर पर, जिसमें विद्यार्थी अनुसंधान उपाधि जैसे एम.फिल. और पी.एचडी. माध्यम से शोध कार्य करता है और दूसरे स्तर पर निजी एवं शासकीय शोध संस्थाऐं अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों को अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रायोजित करती हैं ।

6.2 अनुसंधान की उत्पत्ति (Origin of Research)

शोध, खोज, अनुसंधान, अन्वेषण एवं गवेषण आदि सभी शब्द हिन्दी भाषा के पर्यायवाची शब्द है जिसे आंग्लभाषा में रिसर्च (Research) कहा जाता है । फ्रैंच भाषा के सर्चियर (Cerchier) शब्द से इस मूल शब्द की उत्पत्ति हुई है । जिसका अर्थ है ' 'अधिक' सुनिश्चित होने के लिये पुनः-पुन: खोजना । अनुसंधान को एक व्यवस्थित प्रक्रिया कहा गया है, जो पूर्णरूपेण सुनियोजित है । जिसके द्वारा नवीन ज्ञान की खोज की जाती है । अंग्रेजी शब्द रिसर्च (Research) का शब्दिक अनुवाद है- पुनः-पुन: अन्वेषण करना, खोजना, नवीन-नवीन तथ्यों की जानकारी देना ।

6.3 अनुसंधान : परिभाषा (Research : Defination)

अनुसंधान एक ऐसी गतिविधि है, जिसमें नवीन ज्ञान की खोज एवं उपलब्ध ज्ञान को सत्यापित करने का प्रयास किया जाता है । यह एक उच्च बौद्धिक क्रियाकलाप है, जिसमें अनुसंधानकर्ता उपलब्ध ज्ञान के सहारे नवीन तथ्यों और सूचनाओं की खोज करता है । विभिन्न विद्वानों ने अनुसंधान को परिभाषित किया है जिसका विवरण इस प्रकार हैं

1. वैबस्टर्स न्यू इन्टरनेशनल डिक्शनरी के अनुसार

"अनुसंधान सिद्धान्तों के लिए तथ्यों की खोज में एक सतर्कतापूर्ण, आलोचनात्मक खोज या परीक्षण है अथवा किसी वस्तु को सुनिश्चित करने के क्रम में परिश्रम पूर्ण खोज है ।''

2. एल.बी. रैडमैन (L.B. Radman) के अनुसार "नए ज्ञान को प्राप्त करने के लिए सुव्यवस्थित प्रयास ही अनुसंधान है ।''
3. पी.एम. कुक ने "Research" शब्द के प्रारम्भिक अक्षरों को लेकर कुछ विशेषताएँ प्रदान की हैं जो इस प्रकार हैं

R - Rational way of thinking (चिन्तन का तर्क युक्त रास्ता)

E - Expert and exhaustive treatment (विशेषज्ञ और सांगोपांग प्रतिपादन)

S - Search of solution (समाधान हेतु खोज)

E - Exactness (यथार्थता)

A - Analysis (विश्लेषण)

R - Relationship of facts (तथ्यों में सम्बंध)

C - Critical observation, careful recording, constructive attitude and condensed generalizations (आलोचनात्मक अवलोकन, सतर्क अभिलेखन, रचनात्मक सोच, घनीभूत सामान्यीकरण)

H - Honesty and hard working (ईमानदारी और कठिन परिश्रम)

इन उपर्युक्त अनुसंधान परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अनुसंधान मात्र एक खोज नहीं है अपितु यह वैज्ञानिक. उद्देश्यपूर्ण, तर्कयुक्त और व्यवस्थित खोज है । शोधार्थी इसे आलोचनात्मक एवं तर्कयुक्त ढंग से करता है ।

6.4 अनुसंधान के उद्देश्य (Purpose of Research)

अनुसंधान के उद्देश्य निम्न प्रकार हैं :

1. नया ज्ञान, नए निष्कर्षो, नए समाधानों एवं नए तथ्यों की खोज करना ।
2. उपलब्ध ज्ञान को सत्यापित करना ।
3. मानव जीवन के समक्ष आ रही नित-नित नई-नई समस्याओं का हल ढूंढना ।
4. भविष्य में आने वाली समस्याओं का पता लगाना और उनका संभावित हल निकालना ।
5. ज्ञान के भण्डार में वृद्धि करना ।
6. विभिन्न घटनाओं के कार्य-कारण सम्बंधों को ज्ञात करना ।
7. लोगों का समाजार्थिक विकास करना ।
8. प्रकृति एवं मानव के गुह्य अन्तर सम्बंधों की जटिलताओं को ज्ञात करना और उनका हल ढूंढना।

6.5 अनुसंधान के लाभ (Benefits of Research)

अनुसंधान गतिविधियों के अनेक लाभ हैं, जिनका वर्णन निम्न प्रकार है :

1. अनुसंधान के द्वारा किसी विषय एवं प्रकरण का अध्ययन गहराई से किया जा सकता है ।

इससे यह लाभ होता है कि सम्बंधित विषय में नए आयाम जुड़ते हैं और विषय के क्षेत्र में वृद्धि के साथ-साथ उसे बौद्धिक जगत में मान्यता भी मिलती है ।

2. अनुसंधान से वैज्ञानिक सोच का विकास होता है । चूंकि अनुसंधान में आलोचनात्मक एवं तर्कपूर्ण चिन्तन किया जाता है । इससे वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा मिलता है । वैज्ञानिक सोच ही मानवता को प्रगति और अभ्युदय की ओर ले जाती है ।
3. अनुसंधान गतिविधियों से आपसी समन्वय एवं समझदारी का विकास होता है ।
4. यह उपलब्ध ज्ञान एवं संसाधनों के अधिकतम उपयोग का अवसर प्रदान करती है । शोधार्थी जब अनुसंधान कार्य करता है तो वह पूर्व से उपलब्ध ज्ञान एवं अध्ययनों को विस्तार से पढ़ता है । इसके साथ-साथ वह पुस्तकालय के संसाधनों इन्टरनेट पर उपलब्ध स्रोतों वैयक्तिक विद्‌वानों आदि का उपयोग करता है । उपलब्ध ज्ञान ही नवीन ज्ञान की आधारशिला है ।
5. अनुसंधान कार्य शोधार्थी में विशिष्ट अभिरूचि, योग्यता, दक्षता आदि को विकसित करने में सहायता करता है । अनुसंधान करते समय शोधार्थी विभिन्न परिस्थितियों से गुजरता है और ये परिस्थितियां उसे सीखने में मदद करती हैं ।
6. अनुसंधान कार्य दूसरे के प्रति सामंजस्य एवं सद्भाव का वातावरण विकसित करता है ।
7. अनुसंधान के द्‌वारा पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों की अधोसंरचना में परिवर्तनों एवं परिवर्धन संबंधी सुझाव प्राप्त किए जा सकते हैं ।
8. इससे पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विषय के नए पाठ्‌यक्रम का विकास, अध्ययन एवं अध्यापन की नई तकनीकों का विकास किया जा सकता है ।
9. अनुसंधान के द्‌वारा पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के समक्ष आ रही नित-नित समस्याओं का बेहतर हल खोजा जा सकता है ।

6.6 अनुसंधान के प्रकार (Types of Research)

अनुसंधान अधोलिखित प्रकार का हो सकता है

6.6.1. शुद्ध अनुसंधान (Pure Research)

6.6.2. व्यावहारिक अनुसंधान (Applied Research)

6.6.3. क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)

6.6.1 शुद्ध अनुसंधान (Pure Research)

इस अनुसंधान को मौलिक, प्राथमिक या सैद्धान्तिक नाम से भी जाना जाता है । इस प्रकार का अनुसंधान प्रकृति से सैद्धान्तिक होता है । इसमें नवीन सिद्धान्तों एवं नियमों की खोज की जाती है । इस प्रकार के अनुसंधान में नए ज्ञान की उत्पत्ति पर जोर दिया जाता है । इस अनुसंधान का प्राथमिक उद्देश्य सामान्यीकरणों के द्‌वारा नए सिद्धान्तों को विकसित करना है । यह मूलतः बौद्धिक समस्याओं के समाधान से सम्बंधित है । मौलिक अनुसंधान में अनुसंधान कार्य विशुद्ध रूप से ज्ञान प्राप्ति के लिए किया जाता है उसका व्यावहारिक उपयोग होगा या नहीं, इस पर विचार नहीं किया जाता है । यह प्रायोगिक समस्याओं का हल प्रदान नहीं करता है ।

शुद्ध अनुसंधान बौद्धिक प्रश्नों और जिज्ञासाओं का उत्तर खोजने का प्रयास करता है । इसमें पुराने सिद्धान्तों, नियमों और सूत्रों की पुनर्व्याख्या एवं उसका सत्यापन किया जाता है ।

6.6.2 व्यावहारिक अनुसंधान (Applied Research)

व्यावहारिक अनुसंधान मूल रूप से प्रायोगिक समस्याओं के हल करने से सम्बंधित है । यह वर्तमान में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आ रही समस्याओं का हल खोजने की दिशा में कार्य करता है । शुद्ध अनुसंधान द्वारा जहाँ सिद्धान्त और सूत्र खोजे जाते हैं वहीं व्यावहारिक अनुसंधान इन सूत्रों की सहायता से किसी विशिष्ट समस्या के व्यावहारिक पक्ष से सम्बंधित है । व्यावहारिक अनुसंधान के अनुप्रयोग से मानव समुदाय की व्यावहारिक कठिनाइयों का हल खोजा जाता है । विज्ञान के क्षेत्र में व्यावहारिक अनुसंधान के द्वारा नवीन उपकरण एवं यंत्रों का मानव हित में निर्माण किया जाता है । समाज की शैक्षणिक, आवासीय, तकनीकी, आर्थिक आदि समस्याओं के समाधान में व्यावहारिक अनुसंधान उपयोगी है ।

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान सुस्थापित नहीं है । वैसे पुस्तकालय विज्ञान का अनुसंधान कार्य व्यावहारिक अनुसंधान की श्रेणी में आता है । व्यावहारिक अनुसंधान की सहायता से पाठक, पाठ्य सामग्री, धन का अभाव, पुस्तकालय व्यावसायियों की समस्याओं का व्यावहारिक हल खोजा जा सकता है । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में सतत् स्तरीय अनुसंधान की आवश्यकता है । अनुसंधान ही पुस्तकालय व्यवसाय के समक्ष आ रही चुनौतियों का हल प्रदान कर सकता है ।

6.6.3 क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)

यह एक प्रकार का शैक्षणिक अनुसंधान है । इस प्रकार के अनुसंधान द्वारा किसी विशिष्ट शैक्षणिक वर्ग की शैक्षणिक समस्याओं का समाधान किया जाता है । क्रियात्मक अनुसंधान सैद्धांतिक विकास से हटकर तुरन्त प्रयोज्य पर केन्द्रित रहता है । इसका प्रभाव स्थानीय परिवेश की किसी समस्या पर रहता है । इसके परिणामों का मूल्यांकन स्थानीय प्रायोज्यता के संदर्भ में ही किया जाना चाहिए न कि सार्वभौमिक सत्यता के संदर्भ में । इसके माध्यम से पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में पुस्तकालयों, सूचना केन्द्रों, प्रलेखन केन्द्रों आदि के समक्ष आ रही विशिष्ट समस्याओं का हल खोजा जा सकता है ।

6.7 पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान की आवश्यकता (Need of Research in Library and Information Science)

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विषय सतत परिवर्तनों के दौर से गुजर रहा है । सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के निरन्तर बढ़ते हुए विकास ने इस विषय की तकनीकों एवं प्रविधियों को सबसे अधिक प्रभावित किया है । पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र पाठ्य सामग्री का चयन, अर्जन, प्रक्रियाकरण, व्यवस्थापन, आदान-प्रदान, पुनःप्राप्ति, संरक्षण आदि अन्यान्य गतिविधियों में लगे हुए हैं । सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने सूचना के चयन, अर्जन, प्राप्ति एवं संग्रहण प्रविधियों में आमूलचूल परिवर्तन ला दिया है । इन सब समस्याओं का सार्थक हल निकालने एवं तकनीकी विकास के साथ-साथ चलने के लिए पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में सतत अनुसंधान की आवश्यकता है । कृष्ण कुमार

लिखते हैं कि "विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सामाजिक विज्ञानों में अनुसंधान अच्छी तरह से संस्थापित है । जबकि पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान की आवश्यकता पूरी तरह से मान्य नहीं है । यह विकासशील राष्ट्रों जैसे भारत के बारे में विशेष रूप से सत्य है । "

फिर भी पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से है :

1. अनुसंधान के द्वारा पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान की शैक्षिक संरचना के लिए ।
2. पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों की प्रबन्धकीय व्यवस्थाओं में सुधार हेतु एवं उनकी समस्याओं के निदान हेतु ।
3. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में नए ज्ञान के सृजन के लिए ।
4. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान को शैक्षिक जगत में एक विषय के रूप में प्रतिष्ठा दिलाने हेतु।
5. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विषय के व्यवसायियों को नई तकनीकों एवं प्रविधियों में दक्ष करने हेतु ।
6. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विषय में नई तकनीकों, प्रविधियों और उपकरणों के विकास हेतु ।
7. शिक्षण कक्ष की समस्याओं एवं छात्र एवं शिक्षकों की समस्याओं के निदान हेतु ।
8. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में विगत सिद्धान्तों की नई सूचना वातावरण में पुन: व्याख्या नवीन सिद्धान्तों, सूत्रों आदि के सृजन हेतु ।

आज के युग में सूचना का सृजन, व्यवस्थापन, आदान-प्रदान, सेवाओं के उपयोग का परिदृश्य पूरी तरह बदल गया है । इस बदलाव में निरन्तरता है और यह पाठक के ज्ञान प्राप्त करने की सुविधा को केन्द्रित करती है । रंगनाथन का पुस्तकालय विज्ञान का प्रथम सूत्र "ग्रंथ उपयोगार्थ है'' । अर्थात् ज्ञान और सूचना उपयोगार्थ हैं । आज इन्टरनेट इस सूत्र की सार्थकता को और दृढ़ीभूत कर रहा हैं । आज पुस्तकालय, पुस्तकालय न होकर इलेक्ट्रॉनिक लाइब्रेरी और आभासीय पुस्तकालय (Virtual Library) की ओर बढ़ रहे हैं । पुस्तकालयाध्यक्ष भी Knowledge Navigator की तरफ बढ़ रहे है । पुस्तकालय पाठ्य सामग्री का स्वरूप बदल चुका है । पाठक वर्ग पूरी संकल्पना का केन्द्र बिन्दु है । ऐसी परिस्थिति में अनुसंधान ही इन सभी कठिनाइयों, समस्याओं और जिज्ञासाओं का समाधान प्रदान कर सकता है ।

6.8 अनुसंधान समस्या (Research Problem)

6.8.1 अनुसंधान समस्या क्या है? (What is research problem ?)

किसी समस्या के निवारण हेतु किया जाने वाला अनुसंधान अनुसंधानकर्ता के लिये एक समस्या के रूप में जाना जाता है । जिसे शोधकर्ता सैद्धान्तिक, प्रायोगिक रूप से अनुभव करता है और उसका समाधान खोजना चाहता है । हम इसे इस तरह भी कह सकते हैं कि यह वह कथन है जिसे शोधार्थी प्रतिपादित करता है । यह एक प्रस्तावित प्रश्न है जिसका समाधान खोजा जाना है या यह ऐसा कथन है जिसका परीक्षण किया जाना है । करलिंगर के अनुसार - "समस्या एक प्रश्नवाचक वाक्य अथवा कथन है जिसमें दो या दो से अधिक चरों के मध्य सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है ।''

टाउनसेण्ड ने भी कहा है कि - "समस्या तो समाधान के लिए प्रस्तावित एक प्रश्न है । ''

6.8.2 अनुसंधान समस्या के घटक (Components of a Research Problem)

एक अनुसंधान समस्या के घटक इस प्रकार हो सकते हैं :

1. यह आवश्यक है कि ऐसा व्यक्ति अथवा समूह जिसको कोई समस्या हो । यदि यह व्यक्ति अथवा समूह अनुसंधान के माध्यम से समस्या का समाधान चाहता है उसे हम अनुसंधान उपभोक्ता (Research Consumer) कहेंगे ।
2. अनुसंधान उपभोक्ता का कोई उद्देश्य, लक्ष्य अथवा इच्छा होनी चाहिए । जिससे अनुसंधान के माध्यम से उसे प्राप्त किया जा सके ।
3. अनुसंधान समस्या के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु वैकल्पिक माध्यम का होना आवश्यक है।
4. शोधार्थी के मस्तिष्क में वैकल्पिकों के चयन को लेकर संदेह जरूर रहना चाहिए । अर्थात् यदि शोधार्थी के मन में संदेह है तो वह यह अवश्य निर्णय लेगा कि कौन-सा रास्ता बेहतर एवं प्रभावकारी है ।
5. अनुसंधान समस्या ऐसी होनी चाहिए जो कि शोधार्थी से समस्या का सर्वोत्तम समाधान खोजने की अपेक्षा करे ।

6.8.3 अनुसंधान समस्या का प्रतिपादन (Formulation of a Research Problem)

अनुसंधान समस्या का चयन आसान कार्य नहीं है । कोई भी अनुसंधान समस्या चयनित की जाए उसका चयन बड़ी सावधानीपूर्वक करना चाहिए । अनुसंधान समस्या चयन करने से पूर्व शोधार्थी को गहन अध्ययन करना चाहिए । चयन की जा रही अनुसंधान समस्या के ऊपर अनुसंधान प्रतिवेदनों, अनुसंधान आलेखों आदि का व्यापक अवलोकन करना चाहिए । यदि शोधार्थी को वैज्ञानिक विधि का ज्ञान नहीं है तो वह अनुसंधान कार्य अच्छे ढंग से सम्पादित नहीं कर पाएगा । शोधार्थी के द्वारा अनुसंधान समस्या का चयन करते समय निम्नलिखित मानदण्डों को ध्यान में रखना -

1. समस्या को दो या दो से अधिक चरों के मध्य संबंध को अभिव्यक्त करना चाहिए ।
2. बहु त संकीर्ण और अत्यंत अस्पष्ट समस्या के चयन से बचना चाहिए ।
3. समस्या को इस प्रकार प्रतिपादित करें जिससे उसके माध्यम से मानव जाति का कल्याण हो सके ।
4. ऐसी समस्या चयनित की जानी चाहिए जिसका प्रयोगाश्रित परीक्षण (Empiricial Test) किया जा सके ।
5. समस्या चयन करते समय वह ध्यान रखें कि यह मौलिक हो । मौलिकता अनुसंधान का आधार है ।
6. शोधार्थी को अपनी रूचि के अनुकूल समस्या चयनित करना चाहिए । अर्थात् शोधार्थी की रूचि एवं इच्छा के अनुकूल ही अनुसंधान समस्या हो जिससे कि बेहतर परिणाम प्राप्त हो सकें ।
7. अनुसंधान समस्या का चयन करते समय पूर्व से किए जा रहे अध्ययनों की जानकारी रखनी चाहिए ।
8. अनुसंधान समस्या महत्वपूर्ण होनी चाहिए जिससे कि इस पर व्यय किए गए समय, श्रम एवं धन को उचित ठहराया जा सके ।

गुड़े एवं हाट ने समस्या चयन के लिए निम्नलिखित मानदण्ड दिए हैं :

1. शोधार्थी की अभिरूचि, बुद्धिमत्ता, जिज्ञासा और प्रेरणा ।
2. व्यवहार्यता और कार्यान्वयन योग्यता ।
3. समस्या की अत्यावश्यकता ।
4. प्रत्याशित परिणामों का अनुमान और उनका प्रतिनिधित्व कर रहे क्षेत्र के लिए महत्व ।
5. संसाधन, प्रशिक्षण और कर्मचारियों की व्यक्तिगत योग्यता, विशिष्ट उपकरणों, विधियों, समय और प्रायोजक की उपलब्धता, प्रशंसकों का सहयोग ।

कोचरन और कॉक्स (Cocharan and cox) ने सुझाव दिया है कि भावी शोधार्थी को निम्नलिखित प्रश्न प्रस्तुत करना चाहिए और अनुसंधान के लिए समस्या का चयन करना चाहिए

1. क्या विषय क्षेत्र मेरी अभिरूचि का है?
   अ. क्या अभिरूचि शुद्ध रूप से बौद्धिक है?
   ब. क्या अभिरूचि आर्थिक प्रतिदान के पुरस्कार, पद के आगे बढ़ने की सम्भावना और सत्ता में वृद्धि के कारण है ?
2. क्या परिणाम प्रायोगिक अथवा व्यावहारिक उपयोगितापरक होंगे ?
3. क्या विषय क्षेत्र सत्यापित ज्ञान में अन्तरालों को प्रस्तुत करता है जिन्हें पूरित किए जाने की आवश्यकता है?
4. क्या विषय क्षेत्र को पुन: काम करने अथवा सुधारने की आवश्यकता है ?
5. क्या विषय क्षेत्र सत्यापित ज्ञान की वर्तमान सीमाओं से आगे खोज (Enquiry) के विस्तार की अनुमति देता है?
6. क्या विषय क्षेत्र मूलभूत एवं महत्वपूर्ण है?

इसलिए समस्या चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि समस्या ऐसी हो जो प्रायोगिक एवं सैद्धान्तिक समस्याओं का वास्तविक समाधान प्रदान करे । साथ ही वह वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान की सीमाओं अथवा ज्ञान राशि में वृद्धि करे । समस्या समकालीन महत्व की होने के साथ-साथ ऐसी हो जो प्रमुख मानवीय समस्याओं का समाधान दे सके ।

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विषय क्षेत्र में खोज के लिए कुछ विषय क्षेत्रों एवं प्रकरणों का विवरण इस प्रकार है

1. पुस्तकालय वर्गीकरण एवं सूचीकरणउपयोग एवं अनुप्रयोग-
2. पाठकों की सूचना आवश्यकता
3. सूचना खोजने सम्बंधी व्यवहार
4. कम्प्यूटर अनुप्रयोग
5. सम्प्रेषण माध्यम
6. पाठ्य सामग्री संरक्षण
7. पुस्तकालय संग्रह
8. पुस्तकालय सहयोग
9. पुस्तकालय आदानप्रदान-
10. वर्चुअल लाइब्रेरी
11. इन्टरनेट का अनुप्रयोग
12. इलेक्ट्रॉनिक संसाधन
13. शिक्षण विधियां
14. पुस्तकालय मानक
15. सूचना समेकन एवं रिपैकेजिंग
16. ग्रंथमिति अध्ययन
17. पुस्तकालय एवं सूचना उत्पादों एवं सेवाओं का विपणन

6.8.4 समस्या का सीमांकन (Delimitation of the Problem)

समस्या के सीमांकन से आशय अनुसंधान के लिए चयनित समस्या या प्रकरण की सीमाओं के निर्धारण से है । यह सीमांकन विषय वस्तु की दृष्टि से भी हो सकता है अर्थात् विषय का कितना विस्तार लिया गया है अथवा अध्ययन की भौगोलिक सीमाओं के द्वारा सीमांकन किया जा सकता है। भौगोलिक सीमा गांव, कस्बा, जिला, संभाग, राज्य आदि हो सकती है । शोधार्थी के द्वारा निदर्शन में यह स्पष्ट उल्लेख किया जाता है कि निदर्शन की कौन सी विधि ली गई है और किन-किन का अध्ययन किया जाना है । समस्या का सीमांकन न केवल भौगोलिक दृष्टि से किया जाता है अपितु कालखण्ड का भी निर्धारण किया जाता है । इसका लाभ यह है कि अनुप्रयोगी आंकड़े न लेकर उपयोगी आंकड़े संकलित किए जाए । अनुसंधान समस्या के सीमांकन के लिए निम्नलिखित चरणों का अनुपालन किया जाना चाहिए :

6.8.4.1 सामान्य रूप में समस्या का कथन (Statement of the Problem in a General Way)

समस्या का प्रतिपादन सामान्य रूप से करना चाहिए । समस्या का कथन करते समय यह ध्यान अवश्य रखें कि वह प्रायोगिक, वैज्ञानिक अथवा बौद्धिक अभिरूचि की हो । इसके लिए शोधार्थी पाइलट अध्ययन (Pilat study) कर सकता है । समस्या का कथन करते समय इस बात का भी ध्यान रखे कि उसका जो समाधान दिया जाएगा उसकी व्यवहार्यता अवश्य हो ।

6.8.4.2 समस्या की प्रकृति को समझना (Understanding the Nature of the Problem)

समस्या का सीमांकन करते समय स्पष्ट रूप से उसकी प्रकृति और मूल को समझना चाहिए । किसी भी समस्या को समझने का सुगम रास्ता यह है कि हम उस समस्या के उद्देश्यों को खोजें । समस्या की प्रकृति को अच्छी तरह से समझने के लिए सम्बंधित विषय के विशेषज्ञों से परामर्श किया जाना चाहिए । शोधार्थी को जिस समस्या का अध्ययन करना है उस समस्या की प्रकृति वातावरण एवं क्षेत्र के बारे में उस विषय का ज्ञान रखने वाले विशेषज्ञों से जानकारी लेनी चाहिए ।

6.8.4.3 उपलब्ध साहित्य का सर्वेक्षण करना (Surveying the Available Literature)

शोधार्थी को एक विशिष्ट अनुसंधान समस्या की सीमाओं का निर्धारण अथवा सीमांकन करने से पूर्व उस समस्या से सम्बंधित उपलब्ध सम्पूर्ण साहित्य का सर्वेक्षण करना चाहिए । जिससे कि शोधार्थी को सम्बंधित क्षेत्र के सिद्धान्तों, अनुसंधान प्रतिवेदनों, अभिलेखों आदि का ज्ञान जाये । उसे जो अनुसंधान कार्य चल रहे हैं या हो चुके हैं, उनकी समीक्षा करनी चाहिए । इससे शोधार्थी को वर्तमान सिद्धान्तों के मध्य अन्तराल का पता चलेगा । इसके साथ-साथ उसे यह भी पता चलेगा कि प्रस्तुत अध्ययन करते समय उसे किन-किन कठिनाईयों का सामना करना होगा । विभिन्न अध्ययनों के सर्वेक्षण से शोधार्थी को न केवल उपयोगी सुझाव प्राप्त होंगे अपितु वर्तमान अध्ययन के लिए नई विधियों अथवा मार्ग का भी पता चलता है । इसके माध्यम से शोध को एक नई दिशा प्राप्त होगी ।

6.8.4.4 परिचर्चाओं के द्वारा विचारों का विकास (Developing Ideas through Discussion)

शोधार्थी को अपने सहयोगियों, शिक्षकों और उस विशिष्ट विषय पर विशेषता रखने वाले विशेषज्ञों से परिचर्चा करनी चाहिए । इस परिचर्चा का लाभ यह होता है कि समस्या से सम्बंधित बहु त से नए विचार मिल जाते हैं । इसे हम अनुभव सर्वेक्षण (Experience survey) के नाम से भी जानते हैं । जिन लोगों के पास अनुभव होता है अगर उनसे बातचीत की जाए तो कुछ न कुछ नई बात उभर कर आती है । इन विशेषज्ञों की सलाह शोधार्थी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

6.8.4.5 अनुसंधान समस्या का पुनः अभिव्यक्तिकरण (Rephrasing of the Research Problem)

अंतिम रूप से शोधार्थी को अनुसंधान समस्या की प्रक्रिया प्रस्ताव के रूप में पुन: अभिव्यक्त करनी चाहिए । एक बार यदि समस्या की प्रकृति समझ ली गई है, वातावरण को परिभाषित कर लिया गया है, परिचर्चाएं कर ली गई है, उपलब्ध साहित्य का सर्वेक्षण किया गया है तो समस्या का विश्लेषणात्मक या कार्यात्मक पदों में पुन: अभिव्यक्त करना कठिन कार्य नहीं है । पुन: अभिव्यक्त करने के द्वारा शोधार्थी अनुसंधान समस्या को जहाँ तक सम्भव हो सकता है विशिष्ट पदों के रूप में प्रस्तुत करता है जिससे कि यह व्यावहारिक रूप से कार्य करने में सक्षम हो जाए । साथ ही यह शोधार्थी को प्रक्रिया परिकल्पना (Working hypothesis) के विकास में सहायता कर सकती है ।

इसके अतिरिक्त अनुसंधान समस्या का सीमांकन करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए :

अ. जो भी तकनीकी पद, शब्द अथवा वाक्यांश प्रयोग किए जाएं उनका अनुसंधान में क्या आशय है ? को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए ।

ब अनुसंधान समस्या से सम्बंधित मूलभूत अवधारणाओं का कथन स्पष्ट रूप से किया जाना चाहिए ।

स. अनुसंधान के मूल्य का स्पष्ट कथन दिया जाना चाहिए ।

द. समस्या का सीमांकन करते समय उपलब्ध तथ्यों के स्रोत और काल खण्ड की उपयुक्तता पर विचार करना चाहिए ।

इ. अनुसंधान समस्या का निर्धारण करते समय अनुसंधान का क्षेत्र और उसकी सीमाओं का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए ।

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. अनुसंधान को परिभाषित कीजिये ।

   ....

   ....

2. अनुसंधान गतिविधियों के लाभ बताइये ।

   ....

   ....

3. अनुसंधान के प्रकार बताइये ।

....

....

4. अनुसंधान के उद्देश्य स्पष्ट कीजिये ।

....

....

6.9 अनुसंधान प्रक्रिया के चरण (Steps in Research Process)

अनुसंधान नया ज्ञान प्राप्त करने का एक माध्यम है । अनुसंधान में शोधार्थी अनुसंधान कार्य को पूरा करने के लिए अनेक चरणों से गुजरता है । शोधार्थी को अनुसंधान प्रक्रिया में प्रत्येक चरण पर विशिष्ट ध्यान देना चाहिए जिससे कि अनुसंधान निरापद सम्पन्न हो सके । अनुसंधान प्रक्रिया के प्रत्येक चरण की विस्तृत योजना तैयार करनी चाहिए । प्रत्येक चरण पर जहाँ भी शोधार्थी को प्रतीत होता है कि कुछ कमी रह गई है या संशोधन अथवा परिवर्तन की आवश्यकता है, तो तदनुरूप आवश्यक परिवर्तन कर लेने चाहिए । अनुसंधान में कोई भी कार्य अंतिम नहीं होता । अनुसंधान प्रक्रिया में विभिन्न स्तरों पर निम्नलिखित चरणों से गुजरना होता है -

6.9.1 समस्या क्षेत्र की पहचान (Identifying of the Problem Area)

इस प्रथम चरण में शोधार्थी अनुसंधान समस्या अर्थात् जिस विशिष्ट क्षेत्र में उसे अनुसंधान कार्य करना है उसकी पहचान करता है । याद रखना चाहिए कि अनुसंधान समस्या ऐसी होनी चाहिए जिससे कि ज्ञान में वृद्धि हो और वह समसामयिक रूप से उपयोगी हो । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में विभिन्न क्षेत्रों जैसे वर्गीकरण, अनुक्रमणीकरण, सारकरण, पाठक आवश्यकता अनुभूति आदि क्षेत्रों में कार्य किया जा सकता है । पुस्तकालय विज्ञान के शिक्षक और पुस्तकालय में कार्य कर रहे व्यवसायियों दोनों अपने-अपने विशिष्ट अनुभवों के आधार से अनुसंधान समस्या क्षेत्र की पहचान कर सकते हैं । शिक्षकों के लिए अध्ययन, अध्यापन की विशिष्ट विधियां समस्या क्षेत्र हो सकती हैं जबकि पुस्तकालयाध्यक्ष के लिये पाठकों की सूचना खोजने की प्रवृत्ति या व्यवहार का क्षेत्र समस्या क्षेत्र हो सकता है ।

6.9.2 विशिष्ट अनुसंधान समस्या का प्रतिपादन (Formulation of the Specific Research Problem)

इसमें शोधार्थी विशिष्ट अनुसंधान समस्या का चयन करता है । अर्थात् वह एक विशिष्ट क्षेत्र पर कार्य करने के लिए मनःस्थिति बनाता है और विशिष्ट अनुसंधान समस्या का प्रतिपादन परिष्कृत तकनीकी शब्दों में करता है । शोधार्थी को ध्यान यह रखना चाहिए कि अनुसंधान समस्या का प्रतिपादन प्रभावकारी एवं स्पष्ट तकनीकी शब्दावली में किया जाए ।

6.9.3 सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण (Thorough Review of Relevant Literature)

इसमें शोधार्थी अपनी विशिष्ट अनुसंधान समस्या से सम्बंधित विषय पर अन्य शोधकर्ताओं और विद्वानों द्वारा अद्यतन किए गए कार्य का गहन अध्ययन करता है । शोधकर्ता अनुसंधान से

सम्बंधित अनुसंधान प्रबंधों, लेखों व अन्य स्वरूपों में उपलब्ध अध्ययन सामग्री का अध्ययन करता है । इसके साथ-साथ शोधकर्ता अभी तक किए गए अनुसंधान कार्यो का सार प्रस्तुत करने के साथ-साथ पूर्ववर्ती अनुसंधान कार्यो में अपनाई गई अनुसंधान विधि, आंकड़ा संकलन विधि और तकनीक, आंकड़ा विश्लेषण तकनीक आदि का भी सार तैयार करता है । शोधार्थी को इस चरण में यह भी स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए कि उसका अनुसंधान कार्य पूर्ववर्ती अनुसंधान कार्यो से किस तरह भिन्न है । इस चरण में शोधार्थी सम्बंधित विषय क्षेत्र की महत्वपूर्ण जानकारियों को प्राप्त करता है ।

6.9.4 उपयुक्त अनुसंधान विधि का चयन (Selection of Appropriate Research Method)

इस चरण में शोधार्थी को उपयुक्त अनुसंधान विधि का चयन करना होता है । हर समस्या एक विशिष्ट प्रकार की होती है और उसका समाधान भी एक विशिष्ट अनुसंधान प्रविधि की सहायता से खोजा जा सकता है । समय विस्तार (Time Dimension) को आधार माने तो तीन सम्भावनाएं दिखाई देती हैं :

1. भूतकाल सम्बंधित
2. वर्तमान काल से सम्बंधित
3. भविष्य काल से सम्बंधित

उपयुक्त तीनों काल खण्डों से सम्बंधित समस्याओं के उत्तर खोजने के लिए निम्नलिखित अनुसंधान प्रविधियां हैं

1. ऐतिहासिक अनुसंधान विधि
2. सर्वेक्षण अनुसंधान विधि
3. प्रयोगात्मक अनुसंधान विधि

ऐतिहासिक अनुसंधान प्रविधि उस अनुसंधान समस्या के लिए उपयोगी है जिसमें शोधार्थी को भूतकाल में उत्तर खोजना है । उदाहरण के लिए "भारत में स्वतंत्रता से पूर्व पुस्तकालयों का विकास", "डॉ. एस.आर. रंगनाथन का पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में योगदान ।" इस अनुसंधान विधि में वर्तमान परिस्थितियों और समस्याओं का हल विगत के आधार पर खोजने का प्रयास किया जाता है।

सर्वेक्षण अनुसंधान प्रविधि में उन समस्याओं का अध्ययन किया जाता है जिनका हल वर्तमान परिस्थितियों में से खोजना हो । यह प्रविधि सामाजिक विज्ञानों में सबसे ज्यादा प्रयोग में लाई जाती है । इसके अन्तर्गत पाठक-सर्वेक्षण, पुस्तकालय-सर्वेक्षण, समुदाय-सर्वेक्षण आदि आते हैं । उदाहरण, "ग्रामीण पाठकों का सूचना खोजने सम्बंधी व्यवहार ।"

प्रयोगात्मक अनुसंधान विधि में उन अनुसंधान समस्याओं का अध्ययन किया जाता है जिनका उत्तर भविष्य में खोजा जाना हो । इसके अन्तर्गत यदि हम कुछ नया करना चाहते हैं या वर्तमान परिस्थितियों में परिवर्तन करना चाहते हैं तब भविष्य की परिस्थिति का अनुमान लगाना होगा । भविष्य की परिस्थिति का अनुमान लगाने के लिए प्रयोगात्मक प्रविधि का अनुसरण करना होता है और इसमें पुनः-पुन: प्रयोग के आधार पर भविष्य की परिस्थिति का अनुमान लगाया जाता है । इस प्रविधि का उपयोग प्राकृतिक विज्ञानों में अधिकतर किया जाता है । उदाहरण, "वर्चुअल लाइब्रेरी : भविष्य के पुस्तकालय" ।

6.9.5 अनुसंधान परिकल्पना का प्रतिपादन (Formulation of the Hypothesis of Research)

अनुसंधान में आँकड़े संकलन से पूर्व अनुसंधान के परिणामों का अनुमान लगाने को परिकल्पना कहते है । परिकल्पना एक बुद्धिमतापूर्ण भविष्यवाणी है । इसे प्रतिपादित करने के पूर्व शोधार्थी को भलीभांति विचार कर लेना चाहिये । यह परिकल्पना पूर्व निर्धारित सिद्धांतों, उपमाओं, व्यक्तिगत अनुभवों अथवा केवल काल्पनिक विचार के आधार पर बनाई जा सकती है ।

6.9.6 आंकड़ा संकलन तकनीक एवं उपकरणों का चयन (Selection of Data Gathering Techniques and Tools)

आंकड़ा संकलन की अनेक विधियां हैं । शोधार्थी को इनमें से अपनी समस्या के अनुरूप तकनीकों का सहारा लेना चाहिये । प्रत्येक तकनीक एक विशिष्ट प्रकार के अनुसंधान के लिए उपयोगी होती है । अत: शोधार्थी को अपने अनुसंधान कार्य के अनुरूप अनुसंधान तकनीकों का चयन करना चाहिए । आंकड़ा संकलन की तकनीकें एवं उपकरण इस प्रकार हैं :

6.9.6.1 अवलोकन (Observation)

अनुसंधान में इस तकनीक का प्रयोग आंकड़ा संकलन के लिए किया जाता है । यह तकनीक व्यक्ति या समूह के व्यवहार का अध्ययन, यदि निर्धारित परिस्थितियों में करना है तो अत्यंत उपयोगी है । कृष्ण कुमार ने इसके तीन घटक बताए हैं : अनुभूति (Sensation), मनोयोग (Attention), प्रत्यक्ष ज्ञान (Percaption) । अनुभूति में हम संवेदी अंगों (जैसे- आंख, नाक, कान आदि) का उपयोग करते हैं । मनोयोग से तात्पर्य अध्ययन की जा रही विषय वस्तु पर एकाग्रता की क्षमता से है । प्रत्यक्ष ज्ञान एक व्यक्ति को तथ्यों को पहचानने में, अनुभव, आत्म-विश्लेषण, अनुभूतियों के उपयोग के द्वारा समर्थ बनाता है ।

6.9.6.2 मापन (Measurement)

शोधार्थी अनुसंधान में मापन का प्रयोग करता है । शोधार्थी द्वारा निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मापन की विभिन्न विधियों का अनुसरण किया जाता है ।

6.9.6.3 प्रश्न पूछना (Questioning)

प्रश्न पूछने में शोधार्थी प्रश्नावली, अनुसूची अथवा साक्षात्कार तकनीक का प्रयोग करता है । प्रश्नावली में शोधार्थी प्रश्नमाला तैयार कर उत्तरदाताओं को डाक, ई-मेल अथवा व्यक्तिगत रूप से देता है । उत्तरदाता इस प्रश्नावली को पढ़कर उत्तर पूरित करते हैं । जबकि अनुसूची (Schedule) में शोधार्थी उत्तरदाताओं से स्वयं प्रश्न पूछकर उत्तरों की पूर्ति करता है । साक्षात्कार में उत्तरदाता एव शोधार्थी आमने-सामने बैठकर संवाद करते हैं ।

6.9.7 सूचनात्मक अभिलेख अथवा प्रलेखों का अध्ययन (Studying the Information Records and Documents)

कृष्ण कुमार ने इसके बारे में लिखा है कि पुस्तकालय में दिन-प्रतिदिन के आधार पर कुछ अभिलेख जैसे आदान-प्रदान अभिलेख, सांख्यिकी, लिखित निवेदन, उद्धरण संख्याएं और अन्य प्रकार के पुस्तकालय अभिलेख रखे जाते हैं। इन अभिलेखों के आँकड़ों की संख्यात्मक सांख्यिकीय विश्लेषण (Quantative stastical analysis) की जा सकती है ।

6.9.8 आंकड़ा एकत्रीकरण उपकरणों का विकास एवं चयन (Selection and Development of Data Gathering Instruments)

अनुसंधान उद्देश्यों एवं निर्धारित परिकल्पना के लिए हर अनुसंधान में पृथक-पृथक प्रकार के आँकडों की आवश्यकता होती है और इनके एकत्रीकरण के लिए विविध प्रकार के उपकरण हैं। शोधार्थी एक या अनेक उपकरणों का अपनी आवश्यकतानुसार चयन कर सकता है। यदि उपलब्ध उपकरण समीचीन न हों तो नए उपकरण का विकास किया जा सकता है। उपकरणों का विवरण इस प्रकार है :

अवलोकन	:	अवलोकन मार्गप्रदर्शिका-, कैमरा, स्टॉप वॉच, दूरबीन, स्कोर कार्ड आदि ।
साक्षात्कार	:	साक्षात्कार मार्ग-दर्शिका, टेपरिकार्डर, वीडियो-कैमरा आदि ।
प्रश्न	:	प्रश्नावली, अनुसूची, अभिवृत्ति मापनी, बुद्धिपरीक्षण-, अभिरूचि परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, निष्पादन परीक्षण आदि ।
मापन	:	सूचियां, समाजमिति, निर्धारण मापनी, संख्यात्मक मापनी, वर्णनात्मक मापनी, ग्राफिक मापनी, व्यक्ति से व्यक्ति मापनी, (Sementic differential scale), रैंक आर्डर स्केल, Q-sort techniques Paired comparision scale आदि।

6.9.9 आंकड़ा विश्लेषण योजना को बनाना (Designing of Data Analysis Plan)

आंकड़ा विश्लेषण योजना की तैयारी वास्तविक आंकड़ा संकलन से पूर्व कर लेना चाहिए। अनुसंधान में शोधार्थी अपने आँकड़ों और तथ्यों के द्वारा परिकल्पना की पुष्टि करता है। यदि परिकल्पना प्रतिपादित नहीं की गई है तो अनुसंधान के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर आंकड़ा विश्लेषण योजना तैयार करनी चाहिए। आंकड़ा विश्लेषण के लिए कितनी और कैसे तालिका बनाना है, किन-किन सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग करना है। इन पर विचार करना चाहिए। आंकड़ा विश्लेषण मैनुअल करना है अथवा कम्प्यूटर की सहायता से करना है; इसको निर्धारित कर लेना चाहिए ।

6.9.10 आंकड़ा एकत्रीकरण योजना को बनाना (Designing of Data Gathering Plan)

इस चरण में शोधार्थी आंकड़ा एकत्रीकरण उपकरणों का प्रबंधन कैसे करेगा, इसके बारे में विस्तृत तैयारी करता है। आंकड़ा संकलन किन परिस्थितियों में करना है, व्यक्ति-दर-व्यक्ति करना है या छोटे

समूह अथवा बड़े समूह में करना है, किनका करना है, इन सबका निर्धारण इस चरण में किया जाता है ।

6.9.11 अध्ययन के समग्र की पहचान (Identification of the Universe of Study)

समग्र से आशय अध्ययन किए जा रहे विषय के पूरे क्षेत्र से है । शोधकर्ता को अध्ययन किए जा रहे पूरे क्षेत्र को सावधानी एवं स्पष्टतापूर्वक समझना चाहिए और उसके बाद उसकी पहचान एवं चयन करना चाहिए ।

6.9.12 प्रतिदर्श ढांचे की रूपरेखा बनाना (Designing of Sample Frame)

अध्ययन तीन प्रकार से किए जा सकते हैं : वर्णनात्मक, तुलनात्मक और मूल्यांकनपरक । अनुसंधान के उद्देश्य के अनुसार निदर्शन ढांचे की योजना बनानी चाहिए । निदर्शन ढांचे के चयन को लेकर विशेष सावधानी बरतनी चाहिए । ध्यान यह रखना चाहिए कि निदर्शन की विधि ऐसी हो जो अध्ययन किए जा रहे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने के साथ-साथ उनकी विशेषताओं का भी प्रतिनिधित्व करे ।

6.9.13 प्रतिदर्श आकार एवं अवलोकन इकाई की पहचान (IdentificAtion of Sample Size and Unit of Observation)

इस चरण में प्रतिदर्श आकार (Sample Size) अर्थात् जिन उत्तरदाताओं से प्रश्न पूछने हैं उनकी पहचान करना चाहिए । साथ ही वे किन-किन क्षेत्रों से लिए जाएंगे इसका चयन करना चाहिए । प्रतिदर्श का आकार लिए गए समग्र के क्षेत्र पर आधारित होगा । ध्यान यह रखना चाहिए कि समग्र एवं प्रतिदर्श समरूप (Identical) हों ।

8.9.14 पायलट अध्ययन (Pilot Study)

शोधार्थी को वास्तविक अध्ययन करने से पूर्व पायलट अध्ययन करना चाहिए जिससे कि आंकड़ा संकलन विधियों तकनीकों, उपकरणों, आंकड़ा संकलन योजना आदि का परीक्षण किया जा सके । पायलट अध्ययन निर्धारित समग्र में से ही करना चाहिए । ध्यान यह रखना चाहिए कि जो प्रतिदर्श पायलट अध्ययन के लिए लिया गया है उसे वास्तविक अध्ययन के लिए न लिया जाए । पायलट अध्ययन के दौरान जो भी कमियां या त्रुटियां दिखाई दें उन्हें वास्तविक अध्ययन से पूर्व परिमार्जित कर लिया जाए ।

6.9.15 आंकड़ा संकलन योजना का क्रियान्वयन (Implementation of Data Gathering Plan)

इसमें आंकड़ा संकलन योजना का वास्तविक क्रियान्वयन किया जाता है ।

6.9.16 आंकड़ा विश्लेषण योजना का क्रियान्वयन (Implementation of Data Analysis Plan)

आंकड़ा विश्लेषण के लिए संगृहीत आँकडों की कोड बुक (Code Book) तैयार करनी चाहिए। उत्तरदाताओं से प्राप्त उत्तरों को इसमें कोड करना चाहिए जिन्हें बाद में कम्प्यूटर में संगृहीत करना चाहिए और उसके बाद सांख्यिकीय विधियों के अनुप्रयोग से आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या करनी चाहिए ।

6.9.17 अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन (Writing of Research Report)

यह अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है जिसे शोधार्थी को ध्यानपूर्वक करना चाहिए । अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन में भाषा एवं प्रस्तुतीकरण मानदण्डों के अनुरूप एवं उच्च स्तरीय होना चाहिए ।

6.9.18 निष्कर्षो एवं अनुशंसाओं का प्रचार-प्रसार (Dissemination of the Findings and Recommendation)

इस चरण में शोधार्थी अपने अनुसंधान के निष्कर्षो एवं अनुशंसाओं को विभिन्न माध्यमों जैसे अनुसंधान पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया आदि के माध्यम से प्रचारित एवं प्रसारित करता है । इस प्रचार-प्रसार का उद्देश्य यह है कि अनुसंधान से प्राप्त निष्कर्ष योजनाकारों, शिक्षाविदों, शोधार्थियों, लाभार्थियों आदि को ज्ञात हो सकें जिससे कि उनका सफल क्रियान्वयन हो सके ।

6.9.19 क्रियान्वयन की दिशा में प्रयास (Efforts for Implementation)

शोधार्थी को अपने अनुसंधान निष्कर्षो एवं सुझावों के वास्तविक क्रियान्वयन के लिए प्रयास करना चाहिए ।

6.9.20 वास्तविक क्रियान्वयन (Actual Implementation)

अनुसंधान का अंतिम चरण अनुसंधान के निष्कर्षो एवं सुझावों का वास्तविक क्रियान्वयन है।

बोध प्रश्न- 2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. अनुसंधान प्रक्रिया के चरण बताइये ।

   ....

   ....

2. समस्या के सीमाकंन से क्या तात्पर्य है?

   ....

   ....

3. अनुसंधान के लिए सम्बन्धित साहित्य का गहन सर्वेक्षण क्यों आवश्यक है ?

   ....

   ....

4. पायलेट अध्ययन क्या है?

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

6.10 सारांश (Summary)

आज अनुसंधान एवं विकास गतिविधियां संगठित एवं सतत् प्रयास बन चुके हैं । अनुसंधान कार्यो से नया ज्ञान सृजित होता है । नया ज्ञान ही समस्त विकास का आधार है । शोध के तीन प्रकार है -शुद्ध अनुसंधान, व्यावहारिक अनुसंधान एवं क्रियात्मक अनुसंधान । शुद्ध अनुसंधान में सिद्धान्तों एवं नियमों की खोज की जाती है । व्यावहारिक अनुसंधान में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का समाधान खोजा जाता है । जबकि क्रियात्मक अनुसंधान में स्थानीय समस्याओं का हल खोजा जाता है । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में निरन्तर शोध की आवश्यकता है । शोध समस्या वह प्रश्न है जिसका शोधार्थी हल खोजना चाहता है । शोध कार्य को करने के लिए शोधार्थी को अनेक चरणों से होकर गुजरना पड़ता है । शोधार्थी को शोध के प्रत्येक चरण पर ध्यान देना चाहिए ।

6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. अनुसंधान को परिभाषित कीजिए ।
2. अनुसंधान की आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डालिए ।
3. अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कीजिए ।
4. अनुसंधान समस्या क्या है?
5. अनुसंधान समस्या को प्रतिपादित कीजिए ।
6. अनुसंधान प्रक्रिया के चरणों का विस्तार से वर्णन कीजिए ।

6.12 प्रमुख शब्द (Key Words)

अनुसंधान (Research)	:	किसी विषय या प्रकरण पर व्यवस्थित गहन निरीक्षण, जिससे कि नए तथ्यों एवं सिद्धान्तों की खोज एवं उन्हें सत्यापित किया जा सके।
परिकल्पना (Hypothesis)	:	यह बुद्धिमतापूर्ण भविष्यवाणी है जिसमें शोध के परिणामों का अनुमान प्रस्तुत किया जाता है ।
शोध समस्या (Research Problem)	:	वह जिसे शोध कर्ता अनुभव करता है और उसका समाधान खोजना चाहता है । एक प्रस्तावित प्रश्न जिसका उत्तर खोजा जाना है ।

6.13 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Readings)

1. Best, J.W., Research in education, New Delhi : Prentice Hall, 1963.
2. Goode,W.J., P.K. Methods in social research, New York : Mcgraw Hill, 1952.

3. Hasouneh, A.B.I.M., Research methodology, Jaipur : Sublime Publications, 2003.
4. Kerlinger, F.N., Foundation of behavioural research, Delhi : Surjeet Publications, 1985.
5. Kothari, C.R., Research methodology : Methods and techniques, New Delhi : Wishwa Prakashan, 2001.
6. Krishan Kumar, Research methods in library and information science, New Delhi : Vikas, 1992.
7. Whitney, F.L., The elements of research, London : Asia Publication House, 1961.
8. Young, P.V., Scientific social surveys and research, New Delhi : Prentice Hall of India, 1984.

इकाई-7

अनुसंधान विधियाँ

Research Methods

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 ऐतिहासिक अनुसंधान विधि
7.3 सर्वेक्षण अनुसंधान विधि
7.4 वर्णनात्मक अनुसंधान विधि
7.5 परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि
7.6 सारांश
7.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
7.8 प्रमुख शब्द
7.9 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

7.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं :

1. अनुसंधान विधि के अर्थ से अवगत करवाना ।
2. ऐतिहासिक अनुसंधान विधि को समझाना ।
3. सर्वेक्षण अनुसंधान विधि की जानकारी देना ।
4. वर्णनात्मक अनुसंधान विधि का अर्थ स्पष्ट करना ।
5. प्रयोगात्मक अनुसंधान विधि पर प्रकाश डालना ।

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

अनुसंधान के द्वारा वर्तमान ज्ञान की सीमाओं को विस्तृत किया जाता है । परिणामत: ज्ञान में वृद्धि एवं संशोधन सतत् होता रहता है । अनुसंधान कार्य की विविधता के कारण विविध अनुसंधान प्रविधियों को उपयोग में लाया जाता है ।

गुड एवं स्केट्स ने अनुसंधान की निम्नलिखित विधियां बताई हैं :

1. ऐतिहासिक
2. आदर्शमूलक सर्वेक्षण
3. परीक्षणात्मक

वस्तुत: शोधकार्य में विविध स्तरों अथवा सोपानों पर विभिन्न अनुसंधान पद्धतियों एवं तकनीकों का सहारा लेना होता है । यहां अनुसंधान विधि से आशय ऐसी। विधि से है जिसका अनुप्रयोग शोधकार्य को पूरा करने के लिए करते हैं ।

प्रत्येक अनुसंधान कार्य को उसकी विषयवस्तु एवं अनुसंधान के लिए प्रयुक्त विधि एवं तकनीकों के आधार पर ही विभाजित किया जाता है । सभी अनुसंधानों में किसी न किसी अनुसंधान विधि या विधियों के संयोजन को प्रयुक्त किया जाता है । इस इकाई में आपको प्रमुख अनुसंधान विधियों - ऐतिहासिक अनुसंधान, सर्वेक्षण अनुसंधान वर्णात्मक अनुसंधान एवं प्रयोगात्मक / परीक्षणात्मक अनुसंधान की विस्तार से जानकारी दी जायेगी ।

7.2 ऐतिहासिक अनुसंधान विधि (Historical Research Methods)

इतिहास मानव के क्रियाकलापों व उपलब्धियों का यथार्थ विस्तृत व अर्थपूर्ण अभिलेख है । इतिहास केवल घटनाओं का वर्णन मात्र नहीं है अपितु उनका सही व परीक्षित अभिलेख है, साथ ही यह घटित घटनाओं के मध्य सहसम्बंधों की विश्वसनीय व्याख्या भी प्रस्तुत करता है । इससे यह भी समझने में सहायता मिलती है कि एक विशिष्ट घटना कब, क्यों, कैसे हुई? शोधार्थी अतीत के परिदृश्य में वर्तमान को समझने का प्रयास करता है, जिससे कि भविष्य के लिए समुचित निर्णय लिया जा सके । अनुसंधानों में बहुधा ऐतिहासिक विधि का उपयोग किया जाता है ।

7.2.1 ऐतिहासिक अनुसंधान का अर्थ

एफ.एल. व्हिटने के शब्दों में - "ऐतिहासिक अनुसंधान में अतीत के अनुभवों का विश्लेषण किया जाता है । इसका उद्देश्य विगत की घटनाओं, तथ्य तथा अभिवृजियों की खोज के द्वारा अभी तक अनसुलझी सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु चिन्तन एवं विश्लेषण प्रस्तुत करना है । इसके द्वारा मानवीय विचारधारा में विकास की रेखा एवं गति, सामाजिक क्रियाओं के आधार पर पता लगाई जाती है ।''

रिचर्ड एफ. क्लार्क के मत में - "ऐतिहासिक सत्य को ज्ञात करने के लिए एक पद्धति या सही प्रक्रिया ही ऐतिहासिक अनुसंधान विधि है ।''

बेस्ट के शब्दों में - “ऐतिहासिक समस्याओं के लिए अनुसंधान की वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करना ऐतिहासिक अनुसंधान है ।”

7.2.2 ऐतिहासिक अनुसंधान के उद्देश्य

ऐतिहासिक अनुसंधान के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :

1. अतीत के आधार पर वर्तमान की प्रासंगिकता ज्ञात करना । इससे पुस्तकालय विज्ञानविदो व पुस्तकालयाध्यक्षों को विगत घटनाओं एवं प्रवृत्तियों के आधार पर वर्तमान परिदृश्य को समझना आसान होगा ।
2. अतीत के अध्ययन के द्वारा तत्कालीन पुस्तकालय व्यवस्था, नीतियां तथा आदर्शो को ज्ञात करना साथ ही वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता या उपयोगिता ज्ञात करना ।
3. विगत में हुई त्रुटियों का वर्तमान में परिमार्जन ।
4. ग्रंथालयित्व की दिशा एवं विकास का पूर्वानुमान लगाना ।

5. इतिहास के आधार पर वर्तमानकालीन शिक्षण संस्थाओं, पुस्तकालयों आदि की कमियों को ज्ञात करना ।
6. यह ज्ञात करना कि विगत में एक परिस्थिति में एक समाज या समूह ने कैसा व्यवहार किया ? और क्यों किया? व उसके क्या परिणाम हुए?
7. अतीत में घटित घटनाओं की क्रमबद्धता ज्ञात करना ।

7.2.3 ऐतिहासिक अनुसंधान का महत्व

अनुसंधान की विभिन्न विधियों में ऐतिहासिक विधि का महत्वपूर्ण स्थान है साथ ही पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान अनुसंधान में इसका महत्व निम्नलिखित तथ्यों से परिलक्षित होता है :

1. इतिहास भूतकाल में घटित घटनाओं के परिणामों का वर्णन करते हुए उसके गुण एवं दोषों से परिचित कराता है । इससे वर्तमान की अनसुलझी समस्याओं को हल करने में सहायता मिलती है ।
2. यह विधि विषय के वर्तमान स्वरूप के एतिहासिक विकास को स्पष्ट करती है ।
3. यह विधि समाज में पुस्तकालयों के महत्व तथा समाज एवं पुस्तकालयों के अन्तर्सम्बन्ध की व्याख्या करती है ।
4. ऐतिहासिक अनुसंधान भ्रमों एवं अन्धविश्वासों का निवारण करता है ।

7.2.4 ऐतिहासिक अनुसंधान के प्रकार

ऐतिहासिक अनुसंधान के प्रकार अधोलिखितानुसार हैं :

1. शास्त्रीय अध्ययन - इसमें परम्परागत ऐतिहासिक अध्ययन किया जाता है ।
2. प्रलेखीय अनुसंधान - प्रलेखीय अनुसंधान प्रलेखों पर आधारित अध्ययन है जिसमें अभिलेख भी सम्मिलित हैं ।
3. संदर्भ ग्रंथ संबंधित अध्ययन - इसमें शोधार्थी सम्बंधित समस्या या व्यक्तियों का सूक्ष्म अध्ययन करता है और भविष्य में अनुसंधान के लिए अन्य क्षेत्रों की पहचान करता है ।
4. वैधानिक अनुसंधान - इसमें शोधार्थी पुस्तकालयों या पुस्तकालय शालाओं में प्रचलित नियमों एवं विधानों का अध्ययन करता है । वैधानिक अनुसंधान एक समस्या से सम्बंधित निर्णयों के विश्लेषण के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है ।

7.2.5 ऐतिहासिक अनुसंधान के सोपान

ऐतिहासिक अनुसंधान के निम्नलिखित सोपान हैं :

1. समस्या की पहचान एवं उसकी रूपरेखा
2. आँकड़ों का संकलन
3. परिकल्पनाओं का प्रतिपादन
4. संकलित आँकड़ों की ऐतिहासिक आलोचना
5. आँकड़ों की व्याख्या एवं विश्लेषण
6. प्रतिवेदन लेखन

उपर्युक्त ऐतिहासिक पद्धति के सोपान वैज्ञानिक विधि के सोपानों की तरह ही हैं तथापि इनमें घटनाओं के निरीक्षण, अवलोकन या परीक्षण सोपान नहीं है, क्योंकि अतीत में घटित घटनाओं पुन: दोहराया नहीं जा सकता ।

7.2.5.1 समस्या की पहचान एवं उसकी रूपरेखा

अनुसंधानकर्ता को यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्रत्येक समस्या ऐतिहासिक अनुसंधान के लिए उपयुक्त नहीं होती है । अत: सही समस्या का चयन करना भी दुष्कर कार्य है । शोधार्थी के द्वारा जिस समस्या का अनुसंधान हेतु चयन किया जाय उसका ऐतिहासिक महत्व होने के साथ-साथ सम-सामयिक महत्व भी हो । साथ ही ऐसी समस्या का चयन किया जाना चाहिए जिस पर पर्याप्त तथ्य या आंकड़े उपलब्ध हों । समस्या का चयन इतने विस्तृत रूप में भी नहीं करना चाहिए कि अनुसंधान कार्य पूरा ही न हो सके । किसी विशिष्ट लक्ष्य या उद्देश्य को ध्यान में रखकर समस्या का चयन किया जाना चाहिए ।

7.2.5.2 आँकड़ों का संकलन

उपयुक्त समस्या का चयन करने के अन्तर्गत शोधार्थी समस्या से संबंधित तथ्यों या आँकड़ों का संकलन करता है । आँकड़ों के संकलन हेतु शोधार्थी दो प्रकार के स्रोतों का उपयोग करता है- 1. प्राथमिक स्रोत, 2. द्वितीयक स्रोत ।

7.2.5.2.1 प्राथमिक स्रोत

प्राथमिक स्रोत या अभिलेख वे मानवीय अवशेष हैं जो कि किसी घटना या तथ्य के प्रत्यक्ष साक्षी होते हैं । वे ऐतिहासिक अनुसंधान के आधारभूत आँकड़ों के स्रोत होते हैं । इन स्रोतों से उपलब्ध सूचनाओं को प्राथमिक आंकड़े कहा जाता है । शोधार्थी द्वारा जो आंकड़े एकत्रित किए जाते हैं, वे भी प्राथमिक स्रोत हैं

ये प्राथमिक स्रोत दो प्रकार के होते हैं :

अ. अवशेष

इसमें मानवीय अवशेष सम्मिलित हैं, यथा जीवाश्म, अस्थिपंजर, उपकरण, हथियार, चित्र, वस्त्र, सिक्के, बर्तन, भवन, खाद्य सामग्री, फर्नीचर आदि ।

ब. मौखिक अभिलेख

इसमें वे अभिलेख सम्मिलित हैं जिन्हें घटना के प्रत्यक्षदर्शी या सहभागी द्वारा लिखा एवं रखा जाता है । जो कि मौखिक, लिखित साक्ष्य या अभिलेखों के स्वरूप में हो सकते हैं । इसमें सम्मिलित हैं - संविधान, घोषणा, कानून, न्यायालयों के निर्णय, पत्र, डायरी, आत्मकथा, पुस्तकें, बिल, रसीदें, पत्रिकाएं, समाचार पत्र, कार्यालयीन अभिलेख, मानचित्र, सूचीपत्र, फिल्म, पुस्तकालय सर्वेक्षण, वैधानिक अभिलेख, ग्रंथसूचियां आदि ।

उपर्युक्त सामग्री ऐतिहासिक अनुसंधान के लिए बहुत जरूरी है । इसी सामग्री से ऐतिहासिक तथ्य उद्घाटित व संकलित किए जाते हैं ।

7.2.5.2.2 द्वितीयक स्रोत

जिन व्यक्तियों ने न तो वास्तविक घटना को देखा है तथा ना ही वे उस घटना के सहभागी रहे हैं, अपितु उन्होंने दूसरों के द्वारा अभिव्यक्त या सुनाये गये वर्णन को लिपिबद्ध किया है या अपने शब्दों में वर्णित किया है । इनसे प्राप्त तथ्य या आंकड़े द्वितीयक स्रोत होते हैं । यद्यपि इनमें सत्यांश विद्यमान रहता है परन्तु मूल वास्तविकता में परिवर्तन के साथ-साथ दोषपूर्ण होने की संभावना रहती है । वैज्ञानिक अनुसंधान में इस प्रकार के आँकड़ों का बहुत कम उपयोग होता है परन्तु ऐतिहासिक अनुसंधान में इन द्वितीयक स्रोतों का उपयोग बहुतायत से होता है । एक अच्छे अनुसंधानकर्ता से यह अपेक्षित है कि वह अपने अनुसंधान में अधिकाधिक रूप में प्राथमिक स्रोतों से ही तथ्यों या आँकड़ों का संकलन करे । यदि द्वितीयक स्रोतों से तथ्य या आंकड़े संकलित करने हैं तो उनकी वैधता या सत्यता की जांच करने के बाद ही उनका उपयोग किया जाना चाहिए । उदाहरण-ऐतिहासिक पाठ्यपुस्तकें व संदर्भ ग्रंथ / स्रोत आदि ।

7.2.5.3 परिकल्पनाओं का प्रतिपादन

शोधार्थी को उचित परिकल्पना का प्रतिपादन करना चाहिए । यह ऐतिहासिक पक्षों के मध्य संबंधों को अस्थाई रूप से वर्णित करेगी । ऐतिहासिक अनुसंधान में यदि उपयुक्त परिकल्पना का अभाव है तो आंकड़े तथा तथ्य निरूद्देश्य संग्रह मात्र प्रतीत होते हैं ।

7.2.5.4 संकलित आँकड़ों की ऐतिहासिक आलोचना

सामान्यतया ऐतिहासिक अनुसंधान मौलिक अभिलेखों पर आश्रित होता है और इन मौलिक अभिलेखों में मुद्रण की त्रुटि के कारण, लेखक के धन, सम्मान या लाभ के कारण अथवा व्यक्ति पूजा के कारण तथ्यों को बढ़ा चढाकर कहने के कारण या प्रक्षेप के कारण अनेक अंश या तथ्य त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं । अत: इनके द्वारा प्राप्त तथ्यों या आकड़ों की विश्वसनीयता की जांच करना आवश्यक है । क्योंकि इन्हीं विश्वसनीय ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर ही निष्कर्ष निकाले जाते हैं । जिस प्रक्रिया के द्वारा इन तथ्यों या आँकड़ों की सत्यता की जांच की जाती है उसे ही ऐतिहासिक आलोचना कहते हैं ।

ऐतिहासिक आलोचना दो प्रकार की होती है

अ. बाह्य आलोचना, ब. आन्तरिक आलोचना

अ. बाह्य आलोचना

इसका उद्देश्य है - आँकड़ों की वास्तविकता एवं प्रमाणिकता की जांच करना । इसके अन्तर्गत प्रलेखों एवं अवशेषों की प्राचीनता, विश्वसनीयता, सत्यता एवं वास्तविकता ज्ञात करने के लिए विविध प्रकार के भौतिक एवं रासायनिक परीक्षण किये जाते हैं । जैसे- विविध प्रकार की सामग्री, स्याही, पेंट, कागज, कपड़ा, पत्थर, धातु या लकड़ी आदि का भौतिक एवं रासायनिक परीक्षण कार्बन- 14 तथा फ्लोरिने परीक्षण द्वारा किया जा सकता है । इससे इन पदार्थो की आयु ज्ञात की जा सकती है ।

इसके साथ-साथ लेखकीय प्रामाणिकता या यथार्थता ज्ञात करने के लिए हम हस्ताक्षर, लिखावट, लिपि, प्रकार, वर्तनी, भाषा आदि का दुर्बोध परीक्षण कर सकते हैं । इससे उनकी प्रामाणिकता ज्ञात की जा सकती है ।

ब. आन्तरिक आलोचना

आन्तरिक आलोचना का लक्ष्य यह है कि संकलित तथ्यों एवं आँकड़ों की वैधता को स्थापित किया जाये। ऐतिहासिक प्रलेखों एवं अवशेषों की विशुद्धता एवं प्रामाणिकता ज्ञात करने के पश्चात् इसमें निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान दिया जाता हैं

1. क्या ये तथ्य वास्तविक हैं?
2. क्या ये घटना का सही चित्र प्रस्तुत करते हैं?
3. इनको लिखने वाला कौन है?
4. लेखक का दृष्टिकोण घटना के प्रति दुराग्रहपूर्ण तो नहीं है?
5. क्या लेखक घटना के प्रति अत्यंत संवेदनशील था?
6. लेखक किसी भय या दबाव में तो नहीं था?
7. क्या लेखक घटना से स्वयं भली भांति परिचित था?
8. घटना के घटित होने के कितने समय बाद उसका लेखन किया गया?
9. क्या लेखक को घटना की सभी बातें याद थीं?
10. लेखक के लेखन एवं अन्य समान लेखों में कितनी समानता या असमानता है?

उपर्युक्त सभी प्रश्नों के उत्तर खोजना एक कठिन कार्य है किन्तु शोधार्थी के लिये यह खोजना आवश्यक है कि उसके द्वारा दिये गए तथ्य वास्तविक एवं सही हैं। ऐतिहासिक तथ्यों की आन्तरिक समालोचना को ही आन्तरिक आलोचना कहते हैं। आन्तरिक आलोचना को आन्तरिक समालोचना के पश्चात् ही शोधार्थी किसी निष्कर्ष की तरफ बढता है।

7.2.5.5 आँकड़ों की व्याख्या एवं विश्लेषण

शोधार्थी के द्वारा आँकड़ों व तथ्यों की आन्तरिक एवं बाह्य आलोचना करने के अनन्तर जो कार्य है, वह है संगृहीत आँकडों का समस्या के परिप्रेक्ष्य में व्याख्या एवं विश्लेषण करना। इसमें संगृहीत आँकड़ों की तार्किक व सहायक क्रम में व्याख्या की जाती है।

शोधार्थी को अपने आँकड़ों की परिसीमाओं से सन्तुष्ट होना चाहिए क्योंकि ऐतिहासिक आंकड़े सत्यापन रहित एवं अधूरे होते हैं। इसलिए शोधार्थी में उच्च स्तरीय विद्वत्ता एवं कल्पनाशक्ति का होना बहुत जरूरी है। साथ ही व्याख्या करने के स्तर पर शोधकर्ता को स्वयं में सतर्क, निष्कर्ष व तटस्थ रहना भी बहुत जरूरी हे क्योंकि आँकड़ों की व्याख्या करते समय उसके अपने पूर्वाग्रह, धारणाएं व संस्कार, व्याख्या को प्रभावित कर सकते हैं। अत: शोधार्थी को अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता बनाये रखने का प्रयत्न करना चाहिए। साथ ही आँकड़ों के यथार्थ निष्कर्ष तक पहुंचने का प्रयत्न करना चाहिए।

शोधकर्ता द्वारा आँकडों का विश्लेषण करते समय ऐतिहासिक कार्य कारण सम्बंध को प्रमाणित करना आवश्यक होता है। यह सरल कार्य नहीं है। क्योंकि ऐतिहासिक अनुसंधान में कार्य कारण या तो पूर्व वृतांत के रूप में मिलते हैं या फिर अवशेष के रूप में। जबकि वैज्ञानिक क्षेत्र में ये एक सीमाबद्ध रूप में प्रयुक्त होते हैं। मानव व्यवहार के पारस्परिक संबंध अत्यधिक जटिल होने के कारण ऐतिहासिक कार्य कारण अत्यधिक जटिल होते हैं। अत: शोधार्थी में मानव क्रियाकलाप, व्यवहार एवं मनोविज्ञान की गहरी समझ होनी चाहिए। तभी वह जटिल मानव व्यवहार की व्याख्या कर सकता है। कृष्ण कुमार के शब्दों में - "यह प्राय: संभव है कि एक ऐतिहासिक घटना और कई दूसरी घटनाओं को समानान्तर

रखा जाये, जिसका आधार है - इतिहास की पुनरावृति। । लेकिन एक इतिहासविद् को परिकल्पना के स्रोत के रूप में अनुरूपता के उपयोग में पर्याप्त सावधानी रखनी चाहिए ।''

ऐतिहासिक विधि में अनुसंधानकर्ता को मात्र तथ्यों को प्रमाणित करना या ऐतिहासिक घटनाओं की सूची बना देना ही नहीं होता है, अपितु आँकड़ों के विश्लेषण के आधार पर प्राप्त निष्कर्षो का सामान्यीकरण भी करना होता है । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञानपरक अनुसंधान में हमारा लक्ष्य ऐसी विधियों, सिद्धान्तों तथा उपायों की खोज करने से है जिनसे वर्तमान मानव समुदाय लाभान्वित हो सके। वस्तुत: सामान्यीकरण के स्तर पर इसी लक्ष्य को पूर्ण करने का प्रयास होता है ।

7.2.5.6 प्रतिवेदन लेखन

किसी भी शोधकार्य का समापन इसी अन्तिम सोपान पर होता है । जहाँ पर शोधार्थी अपने कृत कार्यो को दूसरों के पठनार्थ लेखनीबद्ध करता है । गुड एवं हाट ने अनुसंधान प्रतिवेदन पर अपने विचार इस तरह से व्यक्त किए हैं - "एक वैज्ञानिक प्रतिवेदन तैयार करना मूलभूत रूप से तर्क प्रधान निबन्धों या साहित्यिक लेखों से भिन्न है । स्वीकारात्मक एवं निषेधात्मक साक्ष्य का सचेतन प्रस्तुतीकरण करना होता है, साथ ही जिस प्रविधि से साक्ष्य को प्राप्त किया गया, वह भी बतानी होती है ।" प्रतिवेदन लिखते समय निम्नांकित बिन्दुओं को दृष्टिगत रखना चाहिए -

1. प्रतिवेदन लेखन में अतिरंजित व आलंकारिक भाषा के प्रयोग से बचना चाहिए ।
2. प्रतिवेदन वस्तुनिष्ठ एवं सार्थक होना चाहिए ।
3. प्रतिवेदन में तथ्य एवं सार अर्थपूर्ण एवं वर्णनात्मक स्वरूप में होने चाहिए ।
4. इस प्रकार से प्रतिवेदन को लिखा जाना चाहिए कि अन्य शोधार्थियों एवं विद्वानों को अनुसंधान की समस्या, उद्देश्य, महत्व, प्रक्रिया, तथ्यसंकलन, निष्कर्ष एवं मन्तव्य आसानी से पता चल सके ।
5. प्रतिवेदन के अध्यायों का विभाजन कालक्रमानुसार या विषयवस्तु के आधार पर किया जाना चाहिए ।
6. भाषायी दृष्टि से भाषा सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए ।
7. प्रतिवेदन में यथास्थान, पाद टिप्पणी, संदर्भ ग्रंथसूची व परिशिष्ट दिए जाने चाहिए ।

7.2.6 क्या ऐतिहासिक अनुसंधान विधि वैज्ञानिक है?

कृष्णकुमार के मत में - "इतिहास कला एवं विज्ञान दोनों है । अच्छे इतिहासकार सूचना को संकलित, सत्यापित एवं विश्लेषित करने के लिए वैज्ञानिक विधि का उपयोग करते हैं ।" फिर भी इसे विशुद्ध वैज्ञानिक विधि नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसमें वैज्ञानिक पद्धति के कुछ चरणों को नहीं अपनाया जा सकता । जैसे- प्रयोग, परीक्षण या घटनाओं का अवलोकन । क्योंकि इतिहास की प्रत्येक घटना अपने में अनूठी है, इसे उसी रूप में पुन: नहीं दोहराया जा सकता । साथ ही ऐतिहासिक घटनाओं का कारक परिणाम सम्बंधों के आधार पर अध्ययन करना कठिन कार्य है ।

इसमें निष्कर्ष केवल तार्किक निगमन के आधार पर ही सत्यापित होते हैं । ऐतिहासिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठता लाने में भी कई कठिनाइयां हैं, कई बार सही विवरणों का भी अभाव रहता है । यदि अनुसंधानकर्ता को इतिहास की घटनाओं का सही व गहराई से ज्ञान नहीं है तो भी शोधकार्य

का महत्व कम हो जाता है । इस सबके बावजूद ऐतिहासिक विधि का पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अनुसंधान के लिए निरन्तर प्रयोग हो रहा है ।

7.2.7 ऐतिहासिक अनुसंधान विधि एवं पुस्तकालय विज्ञान

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में एतिहासिक अनुसंधान विधि का उपयोग किया जा रहा है । इस विधि के प्रयोग से हम पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में विगत में क्या - क्या घटित हुआ और उन घटनाओं का क्या प्रभाव हुआ, इसका अध्ययन कर सकते हैं । इसके अतिरिक्त उन घटित घटनाओं का विश्लेषण आज के संदर्भ में करके भविष्य का अनुमान प्रस्तुत कर सकते हैं। साथ ही पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान का इतिहास , उत्पत्ति एवं विकास , शिक्षा , कार्य करने की परिस्थितियां , सामाजिक प्रभाव , समस्याओं आदि का गहराई से अध्ययन किया जा सकता है।

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के शोधार्थी ऐतिहासिक अनुसंधान विधि का उपयोग करके विषय के क्रमिक विकास और एक कालखण्ड का दूसरे कालखण्ड पर पड़ने वाले कारण एवं परिणाम का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत कर सकता है ।

7.3 सर्वेक्षण अनुसंधान विधि (Survey Research Method)

सर्वेक्षण विधि के द्वारा अनियंत्रित घटनाओं के स्वाभाविक स्वरूप का अध्ययन किया जाता है । सर्वेक्षण विधि में विषयवस्तु अपने स्वभाव अथवा प्रकृति के अनुसार खुले रूप में कार्य करती है और अनुसंधानकर्ता स्वयं क्षेत्र में जाकर अध्ययन वस्तु के इस प्राकृतिक रूप का निरीक्षण करता है । प्रमुख रूप से सामान्य अथवा जटिल समस्याओं को समझने अथवा किसी समुदाय या समूह का विवरणात्मक अध्ययन करने के लिये प्रयोग किया जाता है । चैपिन ने इसे स्वाभाविक प्रयोग विधि (Natural Experimentation Method) का नाम दिया है । इस अनुसंधान विधि का प्रयोग सामाजिक विज्ञानों और व्यावहारिक विज्ञानों में सर्वाधिक किया जाता है । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में उपयोक्ता अध्ययन, समुदाय सर्वेक्षण, कर्मचारी सर्वेक्षण के क्षेत्र में इस विधि का प्रयोग किया जा रहा है । इस विधि में उत्तरदाताओं से प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर समस्या समाधान का प्रयास किया जाता है । यह अनुसंधान विधि वर्तमान एवं सम-सामयिक समस्याओं के समाधान के लिए उपयोग में लाई जाती है ।

7.3.1 परिभाषाएं

1. एफ.एन. कर्लिजर के अनुसार - "सर्वेक्षण अनुसंधान अध्ययन में विस्तृत एवं लघु जनसंख्याओं (अथवा समग्र) का अध्ययन उनमें से चयनित प्रतिदर्शनो के आधार पर इसलिए किया जाता है ताकि उनमें अन्तर्निहित सामाजिक और मनोवैज्ञानिक चरों की सम्बंधित घटनाओं, वितरणों, तथा पारस्परिक अन्तर सम्बंध का ज्ञान प्राप्त हो सके ।"

"Survey research studies large and small populations (or universes) by selecting and studying sample chosen from the populations to discover the relative incidence, distribution and interrelations of sociology and psychological variables."

2. डोनाल्ड एस. तुल्ल और गेराल्ड एस. अलबौम के अनुसार - "सर्वेक्षण विधि, सूचना प्राप्ति के लिए प्रश्न पूछने और / अथवा व्यवहार अवलोकन की कला और विज्ञान है ।

"In survey research, we are concerned with the art and the science of asking questions and/ or observing behavior to obtain information"

कृष्ण कुमार ने सर्वेक्षण अनुसंधान के विविध रूपों में तीन समान तत्व बताए हैं वे अधोलिखित है

1. सूचना संकलन की विधि हमेशा व्यवस्थित होती है ।
2. हमेशा यह जनसंख्या से सम्बंधित होता है जिसका प्रतिनिधित्व निदर्शन द्वारा किया जाता है ।
3. हमेशा यह आबादी के सदस्यों के व्यवहार से सम्बंधित होती है ।

7.3.2 विशेषताएँ

सर्वेक्षण विधि की विशेषताएँ इस प्रकार हैं

1. यह समकालीन और वर्तमान परिस्थितियों से सम्बंधित होती है ।
2. इसमें हमेशा लक्ष्य एक समूह या समग्र होता है । इस समूह या समग्र की इकाईयों का प्रतिनिधित्व निदर्शन द्वारा किया जाता है ।
3. यह व्यक्तिगत विशेषताओं से सम्बंधित न होकर समग्र की विशेषताओं का सामान्यीकरण निदर्शन के आधार पर किया जाता है ।
4. इस विधि से स्थानीय एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजा जाता है ।
5. यह अनुसंधान की वैज्ञानिक विधि है क्योंकि सही निदर्शन के चयन के द्वारा त्रुटियों को कम करके, विश्वसनीय आंकड़े प्राप्त किए जा सकते हैं ।
6. सर्वेक्षण का क्षेत्र व्यापक होता है ।
7. सर्वेक्षण द्वारा अध्ययन प्रयोगशाला आधारित अध्ययन से अधिक मितव्ययी होता है । क्योंकि सर्वेक्षण द्वारा अध्ययन में अधिक सूचना सापेक्षिक रूप से कम खर्च पर तथा कम समय में उपलब्ध होती हैं ।

7.3.3 क्षेत्र

इस विधि का प्रयोग पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के निम्नलिखित क्षेत्रों में किया जा सकता है

1. पाठक सर्वेक्षण
2. समुदाय सर्वेक्षण
3. पुस्तकालय सर्वेक्षण
4. सूचना आवश्यकता
5. उपयोक्ताओं का सूचना खोजने सम्बंधी व्यवहार
6. उपयोक्ता अध्ययन एवं प्रवृत्ति अध्ययन
7. सम्प्रेषण माध्यम

8. सूचना उपयोग करने का ढंग
9. सूचना प्रचार-प्रसार में बाधक तत्व
10. प्रक्रिया विश्लेषण
11. पुस्तकालय सेवाओं और प्रणालियों का मूल्यांकन

7.3.4 सर्वेक्षण के प्रकार

कृष्ण कुमार ने सर्वेक्षण के निम्न प्रकार बताए हैं

1. वर्णनात्मक सर्वेक्षण
2. तुलनात्मक सर्वेक्षण
3. मूल्यांकनपरक सर्वेक्षण

अन्य सर्वेक्षणों के प्रकार निम्नलिखित हैं :

1. सामाजिक सर्वेक्षण
2. शैक्षणिक सर्वेक्षण
3. बाजार सर्वेक्षण
4. जनमत सर्वेक्षण
5. निदानात्मक सर्वेक्षण
6. पुस्तकालय सर्वेक्षण

7.3.4.1 वर्णनात्मक सर्वेक्षण

वर्णनात्मक सर्वेक्षण में तथ्यों का एक निश्चित समय पर वर्णन किया जाता है । वर्णनात्मक विधि का उपयोग सिद्धान्तों के परीक्षण के लिए किया जा सकता है ।

7.3.4.2 तुलनात्मक सर्वेक्षण

तुलनात्मक सर्वेक्षण में किन्हीं मानदण्डों के आधार पर दो या दो से अधिक अनुसंधान परिस्थितियों अथवा तथ्यों की तुलना की जाती है ।

7.3.4.3 मूल्यांकनपरक सर्वेक्षण

इसमें पूर्व में निर्धारित किए गए मानदण्डों या मानकों के आधार पर किन्हीं तथ्यों या अनुसंधान परिस्थितियों का मूल्यांकनपरक अध्ययन किया जाता है ।

7.3.4.4 सामाजिक सर्वेक्षण

सामाजिक सर्वेक्षण में किसी समसामयिक सामाजिक समस्या को ध्यान में रखकर सर्वेक्षण किया जाता है ।

7.3.4.5 शैक्षणिक सर्वेक्षण

इसमें कक्षा की समस्याएं, पाठ्यक्रम, शिक्षक शिक्षार्थी सम्बंध और शैक्षिक पर्यावरण से सम्बंधित सर्वेक्षण किया जाता है ।

7.3.4.6 बाजार सर्वेक्षण

विभिन्न कम्पनियां अपने उत्पादनों की वस्तुस्थिति एवं विस्तार के लिए बाजार सर्वेक्षण का सहारा लेती हैं ।

7.3.4.7 जनमत सर्वेक्षण

आज कल विभिन्न उद्देश्यों को ध्यान में रखकर लोगों का अभिमत जानने के लिए जनमत सर्वेक्षण किए जाते हैं और इनसे प्राप्त परिणामों को मीडिया द्वारा प्रचारित प्रसारित किया जाता है।

7.3.4.8 निदानात्मक सर्वेक्षण

किसी समस्या के निदान के लिए निदानात्मक सर्वेक्षण का उपयोग किया जाता है ।

7.3.4.9 पुस्तकालय सर्वेक्षण

इसमें पुस्तकालयों, उनकी गतिविधियों, पाठक, कर्मचारी, सेवाओं आदि का सर्वेक्षण किया जाता है ।

7.3.5 उपयोगिताएं या महत्व

सर्वेक्षण विधि का पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में अत्यधिक महत्व है क्योंकि-

1. उपयोक्ता की दशा, मनोवृत्ति, झुकाव, कठिनाइयां सूचना खोजने की प्रवृत्ति, सूचना आवश्यकता आदि का अध्ययन किया-जा सकता है ।
2. इसमें पुस्तकालय की विभिन्न समस्याओं का निदान खोजा जा सकता है ।
3. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के विभिन्न सूत्रों एवं सिद्धान्तों की वैधता की जांच की जा सकती है ।
4. पुस्तकालयाध्यक्षों की विभिन्न समस्याओं का कारण एवं समाधान ढूंढा जा सकता है ।
5. सूचना फैलाव में आ रही कठिनाइयों का निदान ढूंढा जा सकता है ।
6. नई तकनीकों और उपकरणों के उपयोग में आ रही कठिनाइयों को समझा जा सकता है ।

7.3.8 सर्वेक्षण विधि के चरण

सर्वेक्षण विधि के प्रमुख चरण इस प्रकार हैं

1. **समस्या क्षेत्र की पहचान :** अथवा अनुसंधान समस्या की पहचान एवं उसका चयन ।
2. **उद्देश्यों का प्रतिपादन :** इसमें शोधार्थी को अनुसंधान के उद्देश्यों को प्रतिपादित करना चाहिए। अनुसंधान के उद्देश्य खोजे जाने वाली समस्या पर आधारित होने चाहिए ।
3. **परिकल्पना का प्रतिपादन :** शोधार्थी को परिकल्पना प्रतिपादित करते समय पर्याप्त ध्यान रखना चाहिए ।
4. **आंकड़ा संकलन विधि का चयन :** इसमें अवलोकन, मापन, प्रश्न में से किस विधि का प्रयोग करना है, इसे सुनिश्चित करना चाहिए ।
5. **आंकड़ा संकलन तकनीक का चयन :** आंकड़ा संकलन की उपरिवर्णित जिस विधि का भी उपयोग करें उसके अन्तर्गत हमें तकनीक को सुनिश्चित करना चाहिए । जैसे- अवलोकन में प्रत्यक्ष

अवलोकन, अप्रत्यक्ष अवलोकन, संरचित अवलोकन, असंरचित अवलोकन, सहभागी अवलोकन, असहभागी अवलोकन आदि । इसी तरह प्रश्न में प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार (प्रत्यक्ष, टेलीफोन आदि) होने चाहिए ।

6. **समग्र का चयन :** अनुसंधान की सम्पूर्ण इकाइयां या क्षेत्र ही समग्र हैं । इनका चयन किया जाना चाहिए ।
7. **प्रतिदर्श का चयन :** समग्र में से शोधार्थी को प्रतिदर्श की उपयुक्त विधि अनुसरण करते हुए प्रतिदर्श का चयन करना चाहिए । प्रतिदर्श ऐसा होना चाहिए जो समग्र की सभी विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करे ।
8. **आंकडा संकलन :** आंकड़ा संकलन में यदि प्रश्नावली, साक्षात्कार या अनुसूची का उपयोग किया गया है और प्रतिदर्श का क्षेत्र विस्तृत है तो शोधार्थी को सहयोगियों की सहायता लेनी चाहिए। ध्यान यह रखना चाहिए कि सहयोगियों को क्षेत्र में भेजने से पहले उन्हें पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाए । आंकड़ा संकलन में कहीं भी व्यक्तिगत रूचि अरूचि का प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए । शोधार्थी को वस्तुनिष्ठता बनाए रखना चाहिए । आंकड़ा संकलन करते समय आंकड़ें परिपूर्ण, सही, विश्वसनीय हैं या नहीं, इसकी जांच बीच-बीच में करते रहना चाहिए ।
9. **आंकडा विश्लेषण :** आंकड़ा संकलन के पश्चात् उनके विश्लेषण के लिए कोड बुक तैयार करनी चाहिए । उत्तरदाताओं से प्राप्त उत्तरों को इसमें लिखना चाहिए । यह कार्य कम्प्यूटर की सहायता से भी किया जा सकता है । उसके बाद गणनात्मक और सांख्यिकीय विधियों के अनुप्रयोग से विश्लेषित करना चाहिए । यह कार्य करते समय पर्याप्त सावधानी रखनी चाहिए।
10. **निष्कर्षों की व्याख्या :** आंकड़ा विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षो की वर्तमान संदर्भो एव प्रसंगों में व्याख्या करनी चाहिए । पूर्व से ज्ञात निष्कर्षो और वर्तमान अनुसंधान के निष्कर्षो में जो भी साम्यता या वैषम्यता है, को स्पष्ट किया जाना चाहिए । यह कार्य करने के लिए बहुत कौशल व अनुभव का होना अत्यंत जरूरी है ।
11. **प्रतिवेदन लेखन** : प्रतिवेदन लेखन अनुसंधान मानदण्डों के अनुरूप होना चाहिए । भाषा सरल एवं सारगर्भित होनी चाहिए । अनुसंधान में आलंकारिक भाषा से बचा जाना चाहिए ।

7.3.7 सीमाएं

सामाजिक विज्ञानों में सर्वेक्षण विधि अत्यंत उपयोगी होते हुए भी इसके सफल क्रियान्वयन की सीमाएं हैं । सर्वेक्षण विधि खर्चीली एवं अत्यधिक समय लेने वाली है । अगर क्षेत्र बडा है तो सर्वेक्षण के लिए अनेक कार्यकर्ता रखने होते हैं और उनके प्रशिक्षण आदि पर व्यय करना होता है । साथ ही आंकड़ा संकलन के लिए प्रश्नावली निर्माण, सुदूर क्षेत्रों में यातायात के साधन और क्रियान्वयन में अधिक समय एवं लागत आती है ।

7.3.8 सर्वेक्षण अनुसंधान के उपकरण

सर्वेक्षण विधि में आँकड़ों और तथ्यों का संकलन प्रत्यक्ष विधि द्वारा किया जाता है । ध्यान यह रखना चाहिए कि आंकड़े प्रत्यक्ष अवलोकन अथवा मूल स्रोत से ही एकत्रित किए जाएं । चूंकि ये

प्राथमिक स्रोत हैं इसलिए इन्हें विश्वसनीय एवं मूल स्रोत से ही एकत्रित करना चाहिए। प्राथमिक आँकड़ों एवं तथ्यों का आकलन निम्नलिखित विधियों द्वारा किया जा सकता है

7.3.8.1 अवलोकन

7.3.8.2 साक्षात्कार

7.3.8.3 प्रश्नावली

7.3.8.4 टेलीफोनिक सर्वेक्षण

7.3.8.5 इलेक्ट्रोनिक सर्वेक्षण

7.3.8.6 उपर्युक्त विधियों का सम्मिश्रण

आंकड़ा संकलन का कार्य बहुत सावधानी से करना चाहिए। क्योंकि निष्कर्ष इन्हीं मूल आँकड़ों पर आधारित होते हैं। आंकड़ा संकलन का कार्य शोधार्थी द्वारा स्वयं या इलेक्ट्रोनिक उपकरणों की सहायता से किया जा सकता है। इसके लिए कोई एक, दो अथवा दो से अधिक विधियों की सहायता ली जा सकती है।

7.3.8.1 अवलोकन

अवलोकन विधि का उपयोग सामाजिक विज्ञानों में प्राथमिक आंकड़ें एकत्रित करने के लिए किया जाता है। इसमें शोधार्थी एक अनुसंधान परिस्थिति का अध्ययन करता है। इसे कई तरह से किया जा सकता है। जैसे- सहभागी अवलोकन, असहभागी अवलोकन, संरचनात्मक अवलोकन, असंरचनात्मक अवलोकन, नियंत्रित अवलोकन एवं अनियंत्रित अवलोकन।

सहभागी अवलोकन में शोधार्थी अवलोकन किए जा रहे अथवा अध्ययन किए जा रहे समूह का सदस्य बनकर समूह के व्यवहार का अवलोकन करता है। इसमें शोधार्थी समूह में अन्वेषणकर्ता के रूप में न जुड़कर उस समूह के सदस्य के रूप में जुड़ता है। यह पाठकों के व्यवहारों के अध्ययन के लिए अत्यंत उपयोगी है। पाठक के द्वारा भण्डार कक्ष में पुस्तकों के साथ किए जा रहे व्यवहार का अवलोकन किया जा सकता है। सहभागी अवलोकन का दोष यह है कि कई बार शोधकर्ता भावनात्मक रूप से समूह के साथ जुड़ जाता है और अवलोकन में वस्तुनिष्ठता नहीं रह पाती है।

असहभागी अवलोकन में शोधार्थी समूह, का बाहरी व्यक्ति के रूप में अवलोकन करता है। अर्थात् शोधार्थी समूह से दूर रहकर घटित हो रही घटनाओं का अवलोकन करता है। इसमें दोष यह है कि समूह से भिन्न व्यक्ति की उपस्थिति का आभास होते ही समूह अपना व्यवहार बदल सकता है। शोधार्थी आधुनिक उपकरणों जैसे टेपरिकॉर्डर, वीडियो कैमरा आदि की सहायता ले सकता है।

संरचनात्मक अवलोकन में अवलोकन की जा रही इकाईयां अच्छी तरह से परिभाषित होती हैं। इसी तरह असंरचनात्मक अवलोकन में पूर्व से बिना निर्धारित और सुपरिभाषित परिस्थितियों के प्राकृतिक परिस्थिति में घटना का अवलोकन किया जाता है। नियंत्रित अवलोकन सामान्यत: प्रयोगशालाओं में जहाँ पर विषयी को नियंत्रित अवलोकन परिस्थितियों में रखकर उसका अवलोकन किया जाता है। अनियंत्रित अवलोकन वह है जहाँ परिस्थिति का प्राकृतिक वातावरण में ही अवलोकन किया जाता हो।

7.3.8.2 साक्षात्कार

साक्षात्कार को प्राथमिक आंकड़े एकत्रित करने की तकनीक माना गया है । इस तकनीक के द्वारा शोधकर्ता किसी व्यक्ति से वार्तालाप करके तथ्य एवं सूचनाएं एकत्रित करता है । साक्षात्कार कई प्रकार का होता है - संरचित साक्षात्कार, असंरचित साक्षात्कार, नैदानिक साक्षात्कार, केन्द्रीयभूत, टेलीफोन साक्षात्कार, व्यक्तिगत साक्षात्कार और सामूहिक साक्षात्कार ।

7.3.8.3 प्रश्नावली

प्रश्नावली तकनीक का उपयोग उपयोक्ताओं की सूचना आवश्यकता, सूचना खोजने का ढंग, सूचना खोजने सम्बंधी व्यवहार, पाठक सन्तुष्टि, पुस्तकालय उत्पाद एवं सेवाओं का प्रसार आदि विषयों पर प्राथमिक सूचनाएं एकत्रित करने के लिए किया जाता है । प्रश्नावली तकनीक में उपयोक्ताओं से प्रश्न पूछकर तथ्य एकत्रित किए जाते हैं । प्रश्नावली तकनीक के कई प्रकार हैं : संरचित प्रश्नावली एवं असंरचित प्रश्नावली प्रश्नों की प्रकृति के आधार पर इसे सीमित, खुली, चित्रमय, मिश्रित प्रश्नावली में विभाजित कर सकते हैं ।

7.3.8.4 टेलीफोनिक एवं मोबाइल सर्वेक्षण

आज सामाजिक एवं व्यापारिक सर्वेक्षणों में लोगों की राय जानने एवं सूचनाएं एकत्रित करने के लिए टेलीफोन का उपयोग किया जा रहा है । आज टेलीकम्यूनिकेशन प्रौद्योगिकी के विस्तार एवं सस्ता होने के कारण इस तकनीक का उपयोग उत्तरदाताओं से सूचनाएं एकत्रित करने के लिए किया जा रहा है । यह तकनीक मितव्ययी होने के साथ-साथ समय भी बचाती है । सुदूर क्षेत्रों में फैले हुए उत्तरदाताओं से सूचनाएं एकत्रित करने एवं उनकी राय जानने का यह अच्छा माध्यम है । इसमें उत्तरदाता से टेलीफोन अथवा मोबाइल के माध्यम से जानकारी एकत्रित की जाती है । इस तकनीक का उपयोग सेवा क्षेत्र, मनोरंजन क्षेत्र एवं शैक्षिक क्षेत्रों में भरपूर किया जा रहा है ।

लाभ

1. उत्तरदाता से सजीव सम्प्रेषण सम्भव है ।
2. प्रश्न के स्पष्ट न होने की दशा में स्पष्टीकरण दिया जा सकता है ।
3. लोग लिखित में उत्तर देने की बजाय बोलना ज्यादा पसंद करते हैं ।
4. प्रत्युत्तर दर उच्च है ।
5. उत्तरदाता एवं प्रश्नकर्ता अपनी सुविधा के समयानुसार साक्षात्कार कर सकते हैं ।

दोष

1. विस्तृत चर्चा सम्भव नहीं है ।
2. यदि कथनों को टेप नहीं किया गया है तो उत्तरदाता अपने कथन से मुकर सकता है ।
3. उत्तरदाता के पास टेलीफोन या मोबाइल सुविधा होना आवश्यक है ।

7.3.8.5 इलेक्ट्रोनिक सर्वेक्षण

सूचना प्रौद्योगिकी के विकास एवं उसकी उपलब्धता ने सर्वेक्षण के कार्य को सरल, सस्ता एवं आसान कर दिया है । आज इन्टरनेट एवं ई-मेल की सहायता से सर्वेक्षण का कार्य किया जा सकता

है । इलेक्ट्रोनिक स्वरूप में प्रश्नावली का निर्माण, उसे भेजना, उत्तरदाता से पुन: प्राप्त करना, आंकडों का वर्गीकरण, विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण आसान हो गया है । साथ ही यह प्रक्रिया परिशुद्धता एवं तीव्रता के साथ की जा सकती है ।

लाभ

1. वेब आधारित सर्वेक्षण उत्तरदाता एवं प्रश्नकर्ता दोनों के लिए आसान है ।
2. लागत अत्यंत कम है ।
3. उत्तरदाता अपनी सुविधा के अनुसार उत्तर दे सकता है ।
4. प्रश्नावली के खोने का भय नहीं ।
5. भौगोलिक सीमाओं की बाध्यता नहीं ।

7.3.8.6 उपर्युक्त विधियों का सम्मिश्रण

इसमें उपर्युक्त प्रविधियों में से दो या दो से अधिक प्रविधियों का उपयोग किया जाता है ।

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. ऐतिहासिक अनुसंधान का अर्थ बताइये ।

   ....

   ....

2. ऐतिहासिक अनुसंधान के सोपान लिखिये ।

   ....

   ....

3. सर्वेक्षण विधि की विशेषताएँ बताइये ।

   ....

   ....

4. सर्वेक्षण विधि के प्रमुख चरण लिखिये ।

   ....

   ....

7.4 वर्णनात्मक अनुसंधान विधि (Descriptive Research Method)

वर्णनात्मक अनुसंधान में वर्तमान स्थितियों, प्रणालियों, प्रवृत्तियों आदि का वर्णन किया जाता है इसलिए इसे वर्णनात्मक अनुसंधान विधि कहते हैं । सामाजिक विज्ञानों में इस विधि का प्रयोग किया गया है । कुछ विद्वान इसे अलग से अनुसंधान विधि नहीं मानते हैं क्योंकि सभी प्रकार के अनुसंधानों में वर्णनात्मक विधि का उपयोग दिखाई देता है । इस विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें शोधार्थी का चरों पर नियंत्रण नहीं रहता है । वस्तुत: इसमें शोधार्थी जो कुछ भी घटित हो चुका है या होने वाला है उसका वर्णन मात्र करता है । अनेक विद्वान वर्णनात्मक अनुसंधान विधि को सर्वेक्षण विधि के अन्तर्गत भी रखते हैं । लेकिन वर्णनात्मक विधि मात्र आँकड़ों के संकलन एवं उनके प्रस्तुतीकरण तक

ही सीमित नहीं होती है बल्कि इसमे चरों के वर्णन किए जा रहे तथ्यों एवं ऑकडो की उपयोगिता की महत्वपूर्ण व्याख्या भी की जाती है । इस विधि में शोधार्थी वर्णन के साथ-साथ तुलना एवं मूल्यांकन भी करता है । इस विधि के प्रयोग के द्वारा पुस्तकाल एवं सूचना विज्ञान की अनेक समस्याओं का समाधान खोजा जा सकता है । पुस्तकाल एवं सूचना विज्ञान में भी इस विधि का प्रयोग पाठक सर्वेक्षण, कार्य एवं गतिविधि विश्लेषण, कर्मचारी पाठक अभिप्रेरण और अन्य अध्ययनों में किया जा सकता है । सामाजिक विज्ञानों के अलावा इस विधि का प्रयोग भौतिक एवं प्राकृतिक विज्ञानों में भी किया जा सकता है ।

वर्णनात्मक विधि आंकड़ा संग्रहण उपकरणों और साधनों जैसे- अनुसूची, प्रश्नावली मतावली, रेटिंग स्केल आदि के विकास के लिए भी अत्यंत उपयोगी है ।

इस विधि में आगमन-निगमन तर्क विधियों का उपयोग सामान्यीकरण पर पहुंचने के लिए किया जाता है ।

7.5 परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि (Experimental Research Method)

परीक्षणात्मक अनुसंधान एक ऐसी उन्नत वैज्ञानिक पद्धति है । जिसके अन्तर्गत हम किसी सूक्ष्म समस्या का समाधान प्रस्तुत कर सकते हैं । इस अनुसंधान विधि को प्रयोगात्मक अनुसंधान के नाम से भी जाना जाता है । यह विधि अर्थ एवं उपयोगिता की दृष्टि से अत्यन्त व्यावहारिक है क्योंकि इसमें अध्ययन नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता है । यह अनुसंधान इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि जब सभी सम्बन्धित चरों अथवा परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक नियंत्रण करके प्रयोगात्मक चर में परिवर्तन किया जाये तो क्या निष्कर्ष प्राप्त होगा ? इस प्रकार के परीक्षण वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में नियंत्रित परिरिथतियों में किये जाते हैं क्योंकि प्रयोगशाला में स्थितियों पर पर्याप्त नियंत्रण किया जा सकता है । लेकिन यहां विद्यार्थियों को यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि इसका प्रयोग प्रयोगशालाओं से बाहर भी किया जा सकता है और किसी विषय या तथ्य के भविष्य का सटीक अनुमान प्रतिपादित किया जा सकता है ।

वस्तुतः परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि अत्यंत वैज्ञानिक अनुसंधान विधि है जिसके द्वारा नये ज्ञान की खोज की जा सकती है । इसमें दो चरों के मध्य कारण एवं कार्य सम्बंध का अध्ययन प्रत्यक्ष अवलोकन और मापन के द्वारा किया जाता है । इन चरों के मध्य कार्य एवं कारण सम्बंध का अध्ययन प्रयोगशालाओं और प्राकृतिक अवस्थाओं दोनों में किया जा सकता है । प्रयोगशाला परीक्षण करने के लिए आदर्श एवं सुविधाजनक स्थल हैं । यहां शोधार्थी की आवश्यकता के अनुसार भविष्य की परिस्थितियों का निर्माण किया जा सकता है और चरों पर नियंत्रण भी किया जा सकता है ।

7.5.1 परिभाषा

ग्रीनवुड के अनुसार - 'प्रयोग परिकल्पना का परीक्षण करने की वह विधि है जो कि कार्य कारण सम्बंध को बताती है इसमें नियंत्रित परिस्थितियों में कार्य कारण सम्बंध का आकलन किया जाता है।'

जे.डब्ल्यू बेस्ट ने परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि को इस तरह परिभाषित किया है - 'प्रयोगात्मक अनुसंधान सावधानीपूर्वक नियंत्रित परिस्थिति में क्या होगा अथवा कब घटना घटित होगी, इसका वर्णन

और विश्लेषण किया जाता है । सारी अनुसंधान विधियों में यह सबसे अधिक विश्वसनीय किन्तु कठिन विधि है ।'

7.5.2 अनुप्रयोग के क्षेत्र

परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि का अनुप्रयोग नए ज्ञान के सृजन के लिए किया जाता है । कृष्णकुमार ने पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के निम्नलिखित क्षेत्रों में इसके अनुप्रयोग का वर्णन किया है -

1. चरों के मध्य आकस्मिक सम्बंधों की पहचान के लिए ।
2. परिकल्पनाओं के परीक्षण के लिए ।
3. सिद्धान्तों के परीक्षण के लिए ।
4. सिद्धान्तों को स्थापित करने के लिए ।
5. प्रलेखों/सूचना को अर्जित, वर्गीकृत, संग्रहण करने और पुन: प्राप्ति की नई तकनीकों के परीक्षण के लिए ।
6. नए पुस्तकालय एवं सूचना सेवाओं के परीक्षण के लिए ।
7. पूर्व से अध्ययनाकर्षित अथवा कम परिभाषित पुस्तकालय और सूचना विषयों की पहचान के लिए।
8. पुस्तकालय और सूचना समवृत्तियों के लिए एवं एक शोधार्थी की जिज्ञासा की सन्तुष्टि के लिए।
9. नए पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, शैक्षिक प्रोग्राम की जांच / परीक्षण करने के लिए ।
10. नए पुस्तकालय और सूचना विज्ञान पाठ्यक्रम को परीक्षण करने के लिए ।
11. कक्षाओं को व्यवस्थित करने के लिए एक नई विधि के परीक्षण के लिए ।

7.5.3 चर

चर एक घटना या विषय में परिवर्तनीय तत्व है जिसका सभी प्रकार के अनुसंधान में अवलोकन या मापन किया जाता है । परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि में शोधार्थी कुछ चरों को नियंत्रित एवं प्रभावित करता है और परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि का प्रमुख उद्देश्य चरों के सह सम्बंधों को ज्ञात करना है। अनुसंधान में चर अथवा तथ्य वह तत्व है जिनके कार्य-कारण सम्बंधों को जानने का प्रयास शोधार्थी करता है । ये चर विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न होते हैं और इनका मूल्य बदलता हैं शोधार्थी के लिए इन चरों को समझना अत्यंत आवश्यक है ।

7.5.3.1 स्वतंत्र चर

स्वतंत्र चर से आशय उस राशि से है जिसे प्रयोगकर्ता किसी घटना का अवलोकन करने के लिए प्रभावित करता है । अर्थात् घटाता एवं बढ़ाता है । पक्ष, तत्व अथवा परिस्थितियां जिन्हें प्रभावित करती हैं, उन्हें स्वतंत्र चर कहते हैं । स्वतंत्र चर के उदाहरण उम्र, आय, लिंग, शिक्षा, प्रेरणा का स्तर, बुद्धिमता, उपलब्धि आदि हैं ।

7.5.3.2 आश्रित चर

आश्रित अथवा परवर्ती चर वह चर है जो स्वतंत्रता के घटाने, बढ़ाने पर घट, बढ़ जाए । अर्थात् स्वतंत्र चर के प्रदर्शन पर प्रदर्शित हो और हटाने पर अदृश्य हो जाए अथवा मात्रा के परिवर्तन पर परिवर्तित हो ।

7.5.4 परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि के सोपान

1. समस्या का चयन और सीमांकन
2. सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण
3. परीक्षणात्मक अभिकल्प तैयार करना
4. अनुसंधान परिकल्पनाओं का प्रतिपादन
5. प्रयोग समूह का चयन इसमें सम्मिलित है- प्रयोग का स्थान, अवधि, विषय सामग्री का निर्धारण ।
6. परीक्षण का आयोजन
7. प्रयोग का अवलोकन एवं मापन करना ।
8. आँकड़ों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण करना ।
9. निष्कर्षो की व्याख्या ।
10. प्रतिवेदन लेखन ।

इसके साथ-साथ प्रतिवेदन लेखन के प्राथमिक भाग में निम्नलिखित जानकारी दी जाती है.

1. मुख पृष्ठ
2. शोधकर्ता का घोषणा पत्र
3. अनुसंधान निदेशक का प्रमाण पत्र
4. प्राक्कलन
5. विषय सूची
6. सारणी सूची
7. चित्रों की सूची

अन्त में सन्दर्भ भाग दिया जाता है जिसमें सम्मिलित है

1. पाद टिप्पणी
2. ग्रंथ सूची
3. परिशिष्ट
4. अनुक्रमणिका

शोधकर्ता को परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि के लिए उपयुक्त समस्या का चयन अत्यंत सावधानी से करना चाहिए । अनुसंधान समस्या से सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण विस्तार से करना चाहिए । स्वतंत्र चरों का चयन सावधानी से करना चाहिए । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में नई तकनीकों, सेवाओं का परीक्षण किया जा सकता है । नई शिक्षण प्रविधियों और पाठ्यक्रमों का परीक्षण भी किया जा सकता है ।

7.5.5 परीक्षणात्मक अभिकल्प

इसमें छात्रों या पाठकों का एक समूह होता है जिसे परीक्षण के लिए चयनित किया जाता है । इसमें यदि प्रयोगशाला में परीक्षण करना है तो स्वचालित वातावरण होता है और यदि क्षेत्र परीक्षण करना है तो प्राकृतिक वातावरण का चयन करना चाहिए । सामान्यत: परीक्षणात्मक अभिकल्प की तीन प्रमुख विधियां हैं

1. पाठक या एक समूह प्रयोग
2. समान्तर अथवा समकक्ष समूह प्रयोग
3. क्रम आवर्तन समूह विधि द्वारा प्रयोग

7.5.5.1 पायलट अध्ययन

शोधार्थी को परीक्षणात्मक विधि का उपयोग करने से पूर्व पायलट अध्ययन अवश्य करना चाहिए। इसका लाभ यह है कि परीक्षण से सम्बंधित अनेक त्रुटियों और संदेहों को दूर किया जा सकता है और गुणवत्ता एवं सफलता की दृष्टि से भी पायलट अध्ययन आवश्यक है ।

7.5.5.2 परीक्षण का आयोजन

परीक्षण करते समय शोधार्थी को निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए अप्रयोगात्मक तत्वों अथवा चरों को नियंत्रित करना चाहिए ।

1. अप्रयोगात्मक तत्वों अथवा चारों को नियंत्रित करना चाहिए ।
2. निदर्शन का चयन अत्यंत सावधानी से किया जाना चाहिए ।
3. स्वतंत्र चरों को नियंत्रित करना आना चाहिए ।
4. परीक्षण में पूर्व एवं पश्चात् जांच अवश्य करनी चाहिए ।
5. परीक्षणात्मक निष्कर्षो का मापन ।
6. खोजे गए निष्कर्षो की विश्लेषण एवं व्याख्या करनी चाहिए ।
7. वर्तमान तथ्यों से प्राप्त निष्कर्षो का मिलान करना चाहिए ।
8. परीक्षण से प्राप्त तथ्यों को सत्यापित करना चाहिए ।
9. प्रतिवेदन लेखन ।

7.5.6 विशेषताएँ

कृष्णकुमार ने परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि की तीन प्रमुख विशेषताएँ बताई हैं । ये निम्न हैं: 1, नियंत्रण, 2. पुनरावृत्ति, 3. यादृच्छिकीकरण । नियंत्रण परिशुद्ध मापन उपकरणों पर आश्रित है । परीक्षणों की वैधता की जांच के लिए पुनरावृत्ति आवश्यक है । यादृच्छिकीकरण इस बात को सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है कि परीक्षण के बाद प्राप्त परिणाम उन तत्वों के कारण नहीं हैं जो स्वतंत्र चरों से सम्बंधित नहीं हैं ।

अन्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं

1. यह अनुसंधान विधि जे.एस. मिल के एकल परिवर्ती नियम पर आधारित है । इस नियम के अनुसार यदि दो समान स्थितियों में कोई एक तत्व मिलाया या हटाया जाए तो उसमें होने वाला परिवर्तन उस हटाए या जोड़े गए तत्व की क्रिया का परिणाम होता है ।
2. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में इसका कुछ सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है ।
3. इसमें प्रयोग करते समय चरों पर पूर्ण नियंत्रण करने का प्रयास किया जाता है जिससे कि अनुसंधान परिणाम सटीक रूप से मिल सकें ।
4. इसमें दूसरी अनुसंधान विधियों की बजाय चरों में आकस्मिक सम्बंध का निर्धारण बेहतर ढंग से किया जा सकता है ।
5. इस अनुसंधान प्रविधि में परिस्थितियों का सृजन एवं उनका परीक्षण किया जा सकता है ।
6. इसमें वैज्ञानिक उपकरणों एवं आधुनिक यंत्रों से मानवीय त्रुटियों एवं असावधानियों को दूर किया जा सकता है ।
7. इसमें प्रयोगों को पुनः-पुन: दोहराया जा सकता है ।
8. इस विधि से प्राप्त परिणाम वैज्ञानिक दृष्टि से उच्च स्तरीय होते हैं एवं उनका सही मापन किया जा सकता है ।

दोष

1. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में पाठकों को उन स्थितियों में रखकर प्रयोग किया जा सकता है जो हानिकारक है ।
2. मानव के साथ प्रयोग करना एक कठिन कार्य है ।
3. परीक्षणात्मक प्रविधि का उपयोग वर्तमान अध्ययन के लिए किया जा सकता है लेकिन भूतकाल की परिस्थितियों से सम्बंधित अध्ययन नहीं किया जा सकता है ।

7.5.7 प्रयोगात्मक अनुसंधान अभिकल्प

प्रयोगात्मक अनुसंधान अभिकल्प प्रयोग की अवधारणा पर आधारित है । मूलत: प्रयोग एक नियंत्रित खोज है । शोधार्थी प्रयोग में न केवल चरों पर नियंत्रण करता है अपितु वह इच्छानुसार उन्हें घटा बढ़ा सकता है । इसके अन्तर्गत शोधार्थी स्वतंत्र चरों के घटाने एवं बढ़ाने के द्‌वारा आश्रित चरों में आए परिवर्तनों का मापन करता है । प्रयोगात्मक अभिकल्प के तीन मूलभूत सिद्धान्त हैं जो इस प्रकार हैं :

1. प्रत्युत्तर का सिद्धान्त (The Principle of Replication)
2. यादृच्छिक का सिद्धान्त (The Principle of Randomisation)
3. स्थानीय नियंत्रण का सिद्धान्त (The Principle of Local Control)

7.5.7.1 प्रत्युत्तर का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार एक प्रयोग को पुनः-पुन: किया जाना चाहिए । पुनः-पुन: प्रयोगों से प्राप्त परिणाम ज्यादा विश्वसनीय होते हैं । ये परिणाम उन परिणामों से ज्यादा विश्वसनीय होते हैं जिन्हें पुनः-पुन: दोहराया नहीं गया है । अत: इस प्रत्युत्तर सिद्धान्त का परीक्षण करते समय ध्यान अवश्य रखा जाए जिससे अच्छे से अच्छे परिणाम प्राप्त किये जा सके ।

7.5.7.2 यादृच्छिक का सिद्धान्त

यह सिद्धान्त हमें यादृच्छिकता के द्वारा बाहरी तत्वों के प्रभावों के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करता है । इसमें हमें प्रयोग करते समय यादृच्छिक नमूना तकनीक को अपनाना चाहिए । इससे लाभ यह है कि हम यादृच्छिकता सिद्धान्त अनुप्रयोग करते है तो बाहरी तत्वों के प्रभाव से स्वयं को बचा सकते हैं ।

7.5.7.3 स्थानीय नियंत्रण का सिद्धान्त

स्थानीय नियंत्रण के सिद्धान्त की सहायता से प्रयोगात्मक दोष जो कि बाहरी तत्वों की परिवर्तनशीलता के कारण आता है, उसे दूर कर सकते हैं ।

7.5.8 पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में परीक्षणात्मक विधि का अनुप्रयोग

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में परीक्षणात्मक प्रविधि का प्रयोग किया जा सकता है । कृष्णकुमार लिखते हैं कि "जब भी पुस्तकालय कुछ भी नया अथवा अलग करता है तो वास्तव में वह एक प्रयोग करने लिए परिस्थिति अथवा दशा को जन्म देता है । अत: यह प्रतीत होता है कि पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में परीक्षणात्मक प्रविधि का विषयकारी क्षेत्र है ।" वास्तव में यह सही है । सामाजिक विज्ञानों में परीक्षणात्मक प्रविधि का उपयोग भौतिक और रासायनिक विज्ञानों की तरह आसान नहीं है । भौतिक और रासायनिक विज्ञानों में प्रयोगशालाओं में नियंत्रित परिस्थितियों में पुनः-पुन: परीक्षण किया जा सकता है । जबकि पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में पाठकों एवं कर्मचारियों के मानवीय व्यवहार का अध्ययन एक प्रमुख क्षेत्र है इस क्षेत्र में परीक्षणात्मक प्रविधि का उपयोग एक जटिल कार्य है क्योंकि मानवीय संवेदनाओं, भावनाओं और इच्छाओं को नियंत्रित करना सम्भव नहीं है ।

बोध प्रश्न- 2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. वर्णात्मक अनुसंधान विधि क्या है?

   ....

   ....

2. परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि के चरण बताइये ।

   ....

   ....

3. परीक्षणात्मक अभिकल्प की विधियाँ बताइये ।

   ....

   ....

4. परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?

   ....

   ....

7.6. सारांश (Summary)

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान विधियों का उपयोग निरन्तर हो रहा है । ऐतिहासिक अनुसंधान के लिए शोधार्थी का निष्पक्ष होना आवश्यक है । ऐतिहासिक अनुसंधान विधि का प्रयोग भूतकाल के परिप्रेक्ष्य में वर्तमान को समझने व भविष्य के लिए भविष्यवाणी करने के रूप में करना चाहिए । इसी तरह वर्तमान परिस्थितियों के अध्ययन के लिए सर्वेक्षण अनुसंधान विधि का अनुसरण करना चाहिए । इस विधि का प्रयोग सामाजिक विज्ञानों में सबसे ज्यादा किया जाता है । वर्णनात्मक अनुसंधान में वर्तमान स्थितियों, प्रणालियों और प्रवृत्तियों का वर्णन किया जाता है । परीक्षणात्मक अनुसंधान विधि में नियंत्रित एवं अनियंत्रित परिस्थितियों में चरों के प्रभावों का विश्लेषण एवं अध्ययन किया जाता है ।

7.7 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question)

1. प्रमुख अनुसंधान विधियों का वर्णन कीजिए ।
2. ऐतिहासिक अनुसंधान विधि की विवेचना कीजिए ।
3. अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि एवं सर्वेक्षण प्रविधि के मध्य अंतर बताइए ।
4. प्रयोगात्मक अनुसंधान विधि के विभिन्न चरण समझाइए ।
5. सर्वेक्षण अनुसंधान विधि पर एक निबन्ध लिखिए ।

7.8 प्रमुख शब्द (Key Words)

ऐतिहासिक अनुसंधान (Historical Research)	:	यह मानव के क्रियाकलापों और उपलब्धियों का यथार्थ विस्तृत व अर्थपूर्ण अभिलेख है । इसमें अतीत में घटित घटनाओं के मध्य सह-सम्बंध की विश्वसनीय व्याख्या की जाती है ।
पुस्तकालय इतिहास (History of Library)	:	पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में ऐतिहासिक अनुसंधान का आयोजन
चर (Variable)	:	एक घटना या विषय में बदलने वाला तत्व
प्रतिदर्श (Sample)	:	अनुसंधान के सम्पूर्ण क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाली आबादी अथवा इकाईयां
परीक्षणात्मक अनुसंधान (Experimental Research)	:	इसमें नियंत्रित एवं अनियंत्रित परिस्थितियों में चरों के प्रभावों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है ।
प्रश्नावली (Questionnaire)	:	प्रश्नों की एक व्यवस्थित सूची है जिसे शोधार्थी द्वारा उत्तरदाता से प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए बनाया जाता है ।
वर्णनात्मक अनुसंधान (Descriptive	:	इसमें वर्तमान स्थितियों, प्रणालियों, प्रवृत्तियों आदि का वर्णन किया जाता है ।

Research)

सर्वेक्षण अनुसंधान (Survey Research)	:	इसमें उत्तरदाताओं से प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर समस्या समाधान का प्रयास किया जाता है। यह प्रविधि वर्तमान एवं समसामयिक समस्याओं के समाधान के लिए उपयोग में लाई जाती है। सामाजिक विज्ञानों में इस विधि का प्रयोग सर्वाधिक किया जाता है।

7.9 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Readings)

1. Best, J.W., Research in education. New Delhi : Prentice Hall, 1963.
2. Goode, W.J., and Hatt, P.K., Methods in social research, New York : McGraw Hill, 1952.
3. Hasouneh, A.B.I.M., Research methodology, jaipur : Sublime Publications, 2003.
4. Kerlinger, F.N., Foundations of behavioural research, Delhi : Surjeet Publications, 1985.
5. Kothari, C.R., Research methodology : Methods and techniques, New Delhi : Wishwa Prakashan, 2001.
6. Krishan Kumar, Research methods in library and information science, New Delhi : Vikas, 1992.
7. Whitney, F.L., The elements of research , London : Asia Publishing House, 1961.
8. Young, P.V., Scientific social surveys and research, New Delhi : Prentic Hall of India, 1984.
9. राय, पारसनाथ, अनुसंधान परिचय, आगरा लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 1989 ।

इकाई-8

शोध अभिकल्प
(Research Design)

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 शोध अभिकल्प क्या है?

8.3 शोध अभिकल्प की परिभाषाएँ

8.4 शोध अभिकल्प की आवश्यकता

8.5 शोध अभिकल्प की विशेषताएँ

8.6 शोध अभिकल्प के उद्देश्य

8.7 शोध अभिकल्प के तत्व

8.8 शोध अभिकल्पों के प्रकार

- 8.8.1 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प
  - 8.8.1.1 व्यक्तिगत प्रलेख
  - 8.8.1.2 असंरचित साक्षात्कार
  - 8.8.1.3 सहभागी अवलोकन
- 8.8.2 अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प
  - 8.8.2.1 सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण
  - 8.8.2.2 अनुभव सर्वेक्षण
  - 8.8.2.3 अन्तःप्रेरण उदाहरणों का सर्वेक्षण
- 8.8.3 निदानात्मक शोध अभिकल्प
  - 8.8.3.1 साक्षात्कार अथवा केस अध्ययन
  - 8.8.3.2 नैदानिक अवलोकन
  - 8.8.3.3 औपचारिक मानकीकृत परीक्षण
  - 8.8.3.4 अनौपचारिक परीक्षण
- 8.8.4 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प
  - 8.8.4.1 प्रत्युत्तर का सिद्धांत
  - 8.8.4.2 यादृच्छिकता का सिद्धांत
  - 8.8.4.3 स्थानीय नियंत्रण का सिद्धांत

8.9 सारांश

8.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.11 प्रमुख शब्द

8.12 अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

8.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के उद्देश्य निम्न प्रकार हैं

1. शोध अभिकल्प के आशय को स्पष्ट करना ।
2. शोध अभिकल्प की परिभाषा एवं आवश्यकता से परिचय करवाना ।
3. शोध अभिकल्प के उद्देश्यों से परिचित करवाना ।
4. शोध अभिकल्प की विशेषताओं एवं प्रकारों से अवगत करवाना ।

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव सदैव से ही नए ज्ञान की खोज के प्रति जिज्ञासु रहा है । मानव की इस अनवरत जिज्ञासा से ही नए ज्ञान का जन्म हुआ है । नया ज्ञान शोध गतिविधियों का परिणाम है । इसे यूं भी कह सकते हैं कि नया ज्ञान व्यवस्थित शोध का प्रयास है । शोध की एक विशेषता व्यवस्थितीकरण भी है । जितना शोध कार्य व्यवस्थित होगा, उसका परिणाम भी उतनी ही जल्दी एवं सुव्यवस्थित रूप में प्राप्त होगा । शोधार्थी जब किसी समस्या का समाधान ढूंढना चाहता है तो वस्तुत: वह ज्ञान को व्यवस्थित करने का प्रयास कर रहा होता है । जब भी शोध कार्य किया जाता है तो उसे अनेक चरणों से हो कर गुजरना पड़ता है । ये चरण हैं - शोध समस्या की पहचान, सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण, शोध प्रविधि का चयन, आंकड़ा संग्रहण, उपकरणों का चयन, आंकड़ा विश्लेषण, शोध प्रतिवेदन लेखन । इसके साथ-साथ शोध में मानव श्रम, सहयोगी कर्मचारी, समय, उपकरण, भौतिक सुविधाएं और धन की जरूरत होती है । इन सभी चरणों एवं सुविधाओं में किसी भी स्तर पर यदि तारतम्य टूटता है तो शोध कार्य में बाधा आ जाती है । इन सभी चरणों में तारतम्य बना रहे और शोध कार्य निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हो जाए । इसके लिए शोध अभिकल्प अत्यंत सहायक है ।

शोधार्थी शोध अभिकल्प की सहायता से न केवल शोध के सभी चरणों को निर्विध्न रूप से पूरा करता है, इसके साथ-साथ वह कार्य को समय पर भी पूरा कर पाता है । इस इकाई में शोध अभिकल्प क्या है? इसकी परिभाषा, आवश्यकता, विशेषताएँ, उद्देश्य एवं प्रकारों पर विस्तार से चर्चा की गई है।

8.2 शोध अभिकल्प क्या है? (What is Research Design)

शोध अभिकल्प शोधार्थी को न केवल सही दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करती है अपितु शोधार्थी सतत सही मार्ग का अनुसरण करे, यह भी सुनिश्चित करती है । शोध अभिकल्प शोधार्थी के द्वारा शोध के दौरान किए जाने वाले कार्यो की योजना या रणनीति है । शोध अभिकल्प यह बताती है कि शोधार्थी शोध के किस-किस चरण में क्या, कैसे निर्णय लेगा इसका विवरण शोध अभिकल्प में प्रतिपादित किया जाता है ।

8.3 शोध अभिकल्प की परिभाषाएं (Definitions of Research Design)

शोध अभिकल्प की परिभाषाएं इस प्रकार हैं

1. एफ.एन. करलिंगर के अनुसार - "शोध अभिकल्प नियोजित खोज की एक ऐसी योजना, संरचना एवं रणनीति है, जिससे अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करते हैं । इसके साथ-साथ मतभेदों पर भी नियंत्रण किया जाता है ।"

   "Research design in the plan, structure and strategy of investigation conceived so as to obtain answers to research questions and control variance."

2. बी.एन. घोष के शब्दों में - "शोध अभिकल्प प्रस्तावित शोध कार्य की रूपरेखा है ।"

   "A research design is a plan of the proposed research work."

3. सैब्टिज जहोदा और अन्य के अनुसार - "एक शोध अभिकल्प एक तरह से आँकड़ों के संग्रहण एवं विश्लेषण के लिए परिस्थितियों का व्यवस्थापन है, जिसका लक्ष्य प्रक्रियाओं में मितव्ययता के साथ शोध उद्देश्यों की प्रासंगिकता को संयुक्त करना है ।"

   "A research design is the arrangement of conditions for collection and analysis of data in a manner that aims to combine relevance to the research purpose with economy in procedure."

8.4 शोध अभिकल्प की आवश्यकता (Need for Research Design)

शोध अभिकल्प की आवश्यकता शोध प्रक्रिया के अबोध प्रवाह के लिए अत्यंत जरूरी है । आज आवश्यकता इस बात की है कि अल्प व्यय में अधिकतम सूचना/ज्ञान अर्जित किया जाए । क्योंकि अनुसंधान के कार्य में मानव श्रम, समय एवं धन का व्यय किया जाता है इसलिए यह जरूरी है कि इससे अधिकतम परिणाम या लाभ प्राप्त किया जाए । शोध कार्य में आंकड़ा संग्रहण, विश्लेषण आदि कार्यो के लिए एक सुनिश्चित एवं सुव्यवस्थित योजना या अभिकल्प का होना नितांत जरूरी है जिससे कि शोध कार्य निर्विघ्न एवं समय पर पूरा हो सके । शोध में समग्र एवं प्रतिदर्श का चयन, आंकड़ा संग्रहण तकनीक एवं आंकड़ा विश्लेषण तकनीक का निर्धारण, समय-सारणी और शोध प्रतिवेदन लेखन की प्रक्रिया का पूर्ण विवरण और शोध अभिकल्प नितांत आवश्यक होता है । यदि शोध अभिकल्प का निर्माण नहीं किया जाता है तो शोध कार्य प्राय: अपने उद्देश्य से न केवल भटक जाता है अपितु पूरा परिश्रम व्यर्थ हो जाता है ।

8.5 शोध अभिकल्प की विशेषताएँ (Characteristic of Research Design)

कृष्ण कुमार ने कहा है कि एक अच्छे शोध अभिकल्प को इन चार स्थितियों को सन्तुष्ट करना चाहिए । ये हैं

1. विषयनिष्ठता (Objective)
2. विश्वसनीयता (Reliability)
3. वैधता (Validity)
4. सामान्यीकरण (Generalisation)

जो भी शोध अभिकल्प चयन किया जाए उसे मापन उपकरणों के उपयोग की अनुमति देना चाहिए और वे पूर्ण रूप से विषयनिष्ठ हों । विश्वसनीयता से आशय मापन में सुसंगति से है । इसके लिए उत्तरदाता से प्रत्याशा की जाती है कि वह पूछे गए प्रश्न का बार-बार एक ही उत्तर प्रदान करे । जो भी मापन उपकरण लिया जाएं वह वैध हो । एक शोध अभिकल्प को एक शोधार्थी को प्रतिदर्श में से संगृहीत किए गए आँकड़ों में से कुछ सामान्यीकरण निकालने में उपयुक्त होना चाहिए । शोध अभिकल्प की अन्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं

1. इसे लचीला, प्रभावशाली और मितव्ययी होना चाहिए ।
2. इसकी विश्वसनीयता अधिक से अधिक एवं झुकाव कम से कम हो ।
3. इसे अनुसंधानकर्ता का मार्गदर्शक होना चाहिए ।
4. शोध अभिकल्प जटिल अनुसंधान को सरल करता है ।
5. यह अनुसंधान के उद्देश्यों को पूर्ण करने में सहायक है ।

8.6 शोध अभिकल्प के उद्देश्य (Purpose of Research Design)

करलिंगर ने शोध के दो मूलभूत उद्देश्य प्रतिपादित किए हैं

1. अनुसंधान प्रश्नों का उत्तर प्रदान करना ।
2. मतभेद नियंत्रण करना ।

सामान्य रूप से शोध अभिकल्प, ये सभी बातें नहीं करता है अपितु मात्र शोधार्थी ही करता है । अभिकल्प शोधार्थी को अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने में सहायता करता है ।

एक शोध योजना का उद्देश्य निम्नलिखित के बारे में सूचना प्रदान करना है :

1. शोध का विषय क्या है?
2. शोध कहीं किया जा रहा है?
3. शोध कैसे किया जा रहा है?
4. शोध के क्या लक्ष्य हैं?
5. शोध की परिकल्पना क्या है?
6. शोध में क्या प्रक्रियाएं अपनाई जा रही हैं?
7. शोध का समग्र और निदर्शन क्या है ?
8. आंकड़ा संग्रहण विधियाँ और तकनीकें कौन- कौन सी हैं?
9. आंकड़ा संग्रहण कब, क्यों और कैसे किया जाएगा ?
10. आंकड़ा विश्लेषण कैसे किया जाएगा ?
11. शोध का समय क्या है ?

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. शोध अभिकल्प को परिभाषित कीजिये ।

....

....

2. शोध अभिकल्प की आवश्यकता बताये ।

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

3. शोध अभिकल्प की विशेषताएँ बताइये ।

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

4. शोध अभिकल्प के उद्देश्य बताये ।

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

8.7 शोध अभिकल्प के तत्व (Elements ऑफ Research)

शोध अभिकल्प के मूल तत्व निम्नलिखित है :

1. प्रस्तावना
2. समस्या एवं उसका क्षेत्र
3. विषय से सम्बन्धित साहित्य
4. विषय का उद्देश्य
5. पदों की परिभाषाएँ
6. जनसंख्या एवं स्थान
7. परिकल्पना
8. अध्ययन की सीमाएँ
9. शोध पद्धति
10. अध्यायों की रूपरेखा

8.8 शोध अभिकल्पों के प्रकार (Types of Research Design)

शोध अभिकल्प की चार प्रकार की श्रेणियां हैं :-

8.8.1 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प (Descriptive Research Design)

8.8.2 अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प (Exploratory Research Design)

8.8.3 निदानात्मक शोध अभिकल्प (Diagnostic Research Design)

8.8.4 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प (Experimental Research)

8.8.1 वर्णनात्मक शोध अभिकल्प

वर्णनात्मक शोध अभिकल्प एक शोधार्थी को खोजे जाने वाली परिघटना के चित्र या परिदृश्य के वर्णन करने में समर्थ बनाती है । इस तरह के शोध अभिकल्प में जो प्रविधि प्रयुक्त की जाती है, वह प्रकृति से गुणात्मक होती है । उदाहरण के लिए लिखित या बोले गए शब्द और अवलोकनीय व्यवहार । इस तरह के शोध अभिकल्पों का उद्देश्य एक परिस्थिति या घटना का वर्णन करना होता है । ये अध्ययन किसी व्यक्ति, समुदाय के सम्पूर्ण या आंशिक जीवन का अध्ययन करते हैं । इसमें किसी समूह या

स्थितियों की विशेषताओं का वर्णन किया जाता है । इसके बाद चरों की आवृत्ति को सुनिश्चित किया जाता है और इसके बाद अंतिम कार्य चरों के साहचर्य के बारे में ज्ञात करना है । मूलत: व्यवहारपरक पैटर्न को विश्लेषित और अभिलिखित करने की तीन विधियां हैं : अ. व्यक्तिगत प्रलेख, ब. असंरचित साक्षात्कार और, स. सहभागी अवलोकन ।

8.8.1.1 व्यक्तिगत प्रलेख

व्यक्तिगत प्रलेख वे प्रलेख हैं जिनमें एक व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन अथवा उसका आंशिक भाग अथवा विशिष्ट घटना या प्रकरण से सम्बंधित लेखा जोखा रहता है । ये व्यक्तिगत प्रलेख आत्मवृत्त, डायरियों, पत्रों आदि के रूप में हो सकते हैं । व्यक्तिगत प्रलेख मूल स्वरूप में अथवा संपादित संस्करण के रूप में प्रस्तुत किए जाते हैं । शोधार्थी गहन साक्षात्कार के द्वारा भी व्यक्तिगत प्रलेख तैयार कर सकता है ।

8.8.1.2 असंरचित साक्षात्कार

असंरचित साक्षात्कार उत्तरदाता को अधिक लचीलापन प्रदान करता है । वस्तुत: असंरचित साक्षात्कार में पूर्व से निर्धारित प्रश्न नहीं होते, अपितु परिस्थिति के अनुसार प्रश्नों का उत्तर प्रदान किया जाता है । उत्तरदाता के साथ अत्यंत अनौपचारिक रूप में वार्तालाप किया जाता है और यह कोशिश की जाती है कि उससे अधिकतम सूचना संगृहीत की जा सके ।

8.8.1.3 सहभागी अवलोकन

सहभागी अवलोकन में शोधार्थी अध्ययन / अवलोकन किए जा रहे समूह का सदस्य बनकर समूह के व्यवहार का अवलोकन करता है । इसमें शोधार्थी अवलोकन किए जा रहे विषय वस्तु एवं गतिविधि का विश्लेषण एवं उसे समझने का प्रयास करता है । ध्यान यह रखना चाहिए कि सहभागी अवलोकन में संकलित आंकड़ें सावधानी के साथ एवं व्यवस्थित ढंग से एकत्रित किए जाएं । शोध अभिकल्प के रूप में सहभागी अवलोकन के तीन चरण हैं : अ. पूर्व क्षेत्र कार्य, ब. क्षेत्र कार्य और स. आंकड़ा विश्लेषण ।

अ. पूर्व क्षेत्र कार्य

पूर्व क्षेत्र कार्य से आशय उन निर्णयों से है, जिन्हें कार्य क्षेत्र में उतरने से पूर्व अवलोकनकर्ता या शोधार्थी को लेने चाहिए । शोधार्थी को अपने शोध कार्य को करने के लिए प्रारंभिक सम्पर्क अवश्य कर लेना चाहिए ।

ब. क्षेत्र कार्य

शोधार्थी के मस्तिष्क में वे व्यापक प्रश्न होने चाहिए जिन्हें उस समूह में घटित होना है और वे घटनाएं जब घटित हों तभी सूचनाएं संकलित की जानी चाहिए । शोधार्थी को सहभागी अवलोकन में यह ध्यान रखना चाहिए कि वह प्रश्न इस ढंग से पूछे कि वही विषय उनके मस्तिष्क में और उत्तर के रूप में उभर कर आए । ऐसी परिस्थिति विनिर्मित की जानी चाहिए कि बिना किसी दबाव के वे बातें प्रस्तुत हो जाए जिनका उत्तर शोधार्थी चाहता है । जब वह विषय वस्तु उभर कर आ जाए तब अवलोकनकर्ता अपनी विशिष्ट परिकल्पना का अन्वेषण कर सकता है ।

स. आंकड़ा विश्लेषण

आंकड़ा विश्लेषण वह प्रक्रिया है जो हमें औपचारिक रूप से कथन करने की दिशा में किए गए प्रयासों के लिए आवश्यक होती है । इसके बाद ही हमारे द्वारा प्रतिपादित परिकल्पना या तो पुष्ट होती है या अपुष्ट ।

कृष्ण कुमार के शब्दों में "वर्णनात्मक शोध कार्यात्मक संबंधों से संबंधित है । यह व्यावहारिक विज्ञानों के लिए उपयुक्त है क्योंकि कई प्रकारों के व्यवहारों का प्राकृतिक अवस्था में अध्ययन नहीं किया जा सकता है । यह चरों के मध्य आपसी सम्बंधों, परिकल्पना का सत्याभास और सामान्यीकरणों का विकास, सूत्रों अथवा सिद्धान्तों, जिनकी वैश्विक मान्यता है, के अध्ययन के लिए उपयोगी है ।"

8.8.2 अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प

अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प में नवीन तथ्यों की खोज की जाती है । इस अभिकल्प का उद्देश्य शोध समस्याओं और परिकल्पनाओं के निर्धारण में सहायता करना है । इसमें सीमित ज्ञान के बारे में विस्तृत ज्ञान खोजा जाता है । अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक है । इस शोध अभिकल्प का लाभ यह है कि यह सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने में सहायक है ।

कृष्ण कुमार लिखते हैं कि "अन्वेषणात्मक अध्ययन विचारों और परिकल्पनाओं को प्रदान कर सकते हैं जो कि किसी अन्य रास्ते से घटित नहीं हो सकते हैं ।"

सैल्टिज और जहौदा आदि ने कहा है कि - "अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जो कि अधिक सुनिश्चित खोज के लिए सम्बंधित परिकल्पनाओं को बनाने में सहायक होगा ।"

"Exploratory research is necessary to obtain the experience which will be helpful in formulating relevant hypothesis for more definite investigation."

इस शोध अभिकल्प में नए विचारों और अंर्तदृष्टि को खोजने पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है । सी.आर. कोठारी ने इस शोध अभिकल्प में तीन विधियां बताई हैं : अ. सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण, ब. अनुभव सर्वेक्षण, स. अन्तःप्रेरण उदाहरणों का विश्लेषण ।

8.8.2.1 सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण

शोध समस्या अथवा परिकल्पनाओं के विकास के निर्धारण में यह विधि अत्यंत सरल एवं लाभदायक है । पूर्व शोधार्थियों द्वारा प्रतिपादित परिकल्पनाओं की समीक्षा की जाती है और यह देखा जाता है कि वे आगे के शोध के लिए आधार हो सकती हैं । इसके साथ-साथ यह भी देखा जाता है कि पूर्व से कही गई परिकल्पनाएं नई परिकल्पनाओं के सम्बंध में सुझाव दे रही है । अर्थात् शोधार्थी पूर्व से प्रतिपादित साहित्य की समीक्षा एवं मूल्यांकन करता है और उसके पश्चात् उस सामग्री के आधार पर नई परिकल्पना का प्रतिपादन करता है ।

8.8.2.2 अनुभव सर्वेक्षण

अनुभव सर्वेक्षण से आशय यह है कि इसमें अध्ययन की जा रही शोध समस्या पर प्रायोगिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों का सर्वेक्षण किया जाता है । इस सर्वेक्षण का प्रमुख उद्देश्य यह है कि चरों और शोध समस्या से सम्बंधित नए विचारों के मध्य अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना । इसमें उन योग्य

लोगों का चयन किया जाता है जो इस नई शोध समस्या पर अपना योगदान दे सकें । इन चयनित उत्तरदाताओं का शोधार्थी द्वारा साक्षात्कार लिया जाता है । साक्षात्कार के लिए शोधार्थी को साक्षात्कार अनुसूची बनानी चाहिए । इसमें साक्षात्कार करते समय इस बात पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए कि साक्षात्कार में पर्याप्त लचीलापन हो जिससे कि उत्तरदाता नए मुद्दों और प्रश्नों को उभार सकें जिन्हें शोधार्थी ने सम्मिलित नहीं किया था । अच्छा यह होगा कि शोधार्थी पहले से ही उत्तरदाता के पास साक्षात्कार अनुसूची भेज दे जिससे कि वे उसे पढ़कर पूर्व से ही साक्षात्कार हेतु मानसिक एवं बौद्धिक रूप से तैयार हो जाएं । इस तरह का सर्वेक्षण शोधार्थी को विभिन्न प्रकार के शोधों में प्रायोगिक सम्भावनाओं के बारे में सूचना प्रदान करने में अत्यंत लाभकारी है ।

8.8.2.3 अन्तःकरण उदाहरणों का सर्वेक्षण

अन्तःप्रेरण उदाहरणों का सर्वेक्षण शोध के लिए परिकल्पनाओं के सुझाव हेतु लाभकारी विधि है । यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है जहाँ मार्गदर्शन देने के लिए अनुभव की कमी है । इसमें हम जिन परिघटनाओं में हमारी रूचि है उनके चयनित उदाहरणों को लेकर गहन अध्ययन करते हैं । इसके लिए यदि कोई अभिलेख उपलब्ध है तो उसका परीक्षण कर सकते हैं' तथा असंरचित साक्षात्कार का आयोजन कर सकते है या किसी अन्य को अपना सकते हैं ।

8.8.3 निदानात्मक शोध अभिकल्प

निदानात्मक शोध अभिकल्प किसी विशिष्ट समस्या के निदान से सम्बंधित है । कृष्णकुमार के शब्दों में निदानात्मक शोध अभिकल्प शोधार्थी को एक घटना के होने की आवृत्ति अथवा इसके किसी के साथ साहचर्य को तय करने में समर्थ बनाती है । यह क्षेत्र में आने वाली समस्याओं की समस्या समाधान रणनीति प्रदान करती है । इसके ये चरण हैं

8.8.3.1 साक्षात्कार अथवा केस अध्ययन

एक कुशल साक्षात्कारकर्ता अपने कौशल एवं अनुभव से अधिकतम उपयोगी आँकड़ों एवं जानकारियों को प्राप्त कर सकता है । उसे व्यावसायिक वस्तुनिष्ठता बनाए रखनी चाहिए । इस तरह साक्षात्कार के द्वारा व्यक्तिगत जानकारियां एकत्रित की जा सकती हैं ।

8.8.3.2 नैदानिक अवलोकन

नैदानिक अवलोकन का प्रयोग प्रेरक समन्वयकरण और विकास एवं व्यक्तिगत समायोजन करने के लिए किया जा सकता है ।

8.8.3.3 औपचारिक मानकीकृत परीक्षण

औपचारिक मानकीकृत परीक्षणों का उपयोग व्यवहार के विभिन्न पक्षों के परीक्षण के लिए किया जाता है । इसके अन्तर्गत बुद्धिमत्ता परीक्षण, अवधान परीक्षण आदि किए जाते हैं ।

8.8.3.4 अनौपचारिक परीक्षण

व्यवहार के अनौपचारिक परीक्षण और अवलोकन, नैदानिक अवलोकन और साक्षात्कार से प्राप्त निष्कर्षो को परिपुष्ट करने का मार्ग प्रदान करते हैं ।

8.8.4 प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प

प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प प्रयोग की अवधारणा पर आधारित हैं । मूलतः प्रयोग एक नियंत्रित खोज है । शोधार्थी प्रयोग में न केवल चरों पर नियंत्रण करता है अपितु वह इच्छानुसार उन्हें घटा बढ़ा सकता है । इसके अन्तर्गत शोधार्थी स्वतंत्र चरों के घटाने एवं बढ़ाने के द्वारा आश्रित चरों में आए परिवर्तनों का मापन करता है । प्रयोगात्मक अभिकल्प के तीन मूलभूत सिद्धांत हैं, जो इस प्रकार हैं-

8.8.4.1 प्रत्युत्तर का सिद्धांत (The principle of replication)

8.8.4.2 यादृच्छिकता का सिद्धांत (The principle of randomisation)

8.8.4.3 स्थानीय नियंत्रण का सिद्धांत (The principle of Local control)

8.8.4.1 प्रत्युत्तर का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार एक प्रयोग को पुनः-पुनः किया जाना चाहिए । पुनः-पुनः प्रयोगों से प्राप्त परिणाम ज्यादा विश्वसनीय होते हैं । ये परिणाम उन परिणामों से ज्यादा विश्वसनीय होते हैं जिन्हें पुनः-पुनः दोहराया नहीं गया है । अतः इस प्रत्युत्तर सिद्धान्त का परीक्षण करते समय विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ।

8.8.4.2 यादृच्छिकता का सिद्धांत

यह सिद्धांत हमें यादृच्छिकता के द्वारा बाहरी तत्वों के प्रभावों के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करता है । इसमें हमें प्रयोग करते समय यादृच्छिक नमूना तक्नीक को अपनाना चाहिए । इससे लाभ यह है कि हम यादृच्छिकता सिद्धांत का अनुप्रयोग करते हैं तो बाहरी तत्वों के प्रभाव से स्वयं को बचा सकते हैं ।

8.8.4.3 स्थानीय नियंत्रण का सिद्धांत

स्थानीय नियंत्रण के सिद्धांत की सहायता से प्रयोगात्मक दोष जो कि बाहरी तत्वों की परिवर्तनशीलता के कारण आता है उसे दूर कर सकते हैं ।

शोध अभिकल्प शोध प्रक्रिया का एक प्रमुख चरण है । किस शोध अभिकल्प का चयन किया जाए, यह शोधार्थी के द्वारा चयनित समस्या, समस्या की प्रकृति, उपादेयता और शोधार्थी की क्षमता पर आधारित होता है । एक शोध अभिकल्प या शोध अभिकल्पों के संयोजन का चयन इस बात पर विशेष रूप से निर्भर करता है कि वे लिए गए शोध समस्या का उपयुक्त एवं सही हल निकालने की क्षमता रखती हैं । इसलिए शोधार्थी को शोध अभिकल्प का चयन बहुत सावधानीपूर्वक करना चाहिए । शोधार्थी को शोध में प्रत्येक चरण पर पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है ।

बोध प्रश्न- 2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. शोध अभिकल्पों के प्रकार बताइये ।

   ....

   ....

2. वर्णात्मक शोध अभिकल्प क्या हैं?

....

....

3. निदानात्मक शोध अभिकल्प के चरण बताए ।

....

....

4. निदानात्मक शोध में आंकड़ा का संग्रहण कैसे किया जाता है ?

....

....

8.9 सारांश (summary)

नया ज्ञान शोध गतिविधियों का परिणाम है । शोध के सभी चरणों में तारतम्य बना रहे और शोध कार्य निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हो सके इसके लिए शोध अभिकल्प अत्यंत सहायक है । शोधार्थी शोध अभिकल्प की सहायता से न केवल शोध के सभी चरणों को निर्विघ्न रूप से सम्पन्न करता है वरन् अपने शोध कार्य को समय पर पूरा भी करता है ।

इस इकाई में शोध अभिकल्प क्या है, इसकी विस्तृत परिभाषाओं के साथ- साथ आवश्यकताएं भी प्रतिपादित की गई हैं । शोध अभिकल्प की विशेषताओं एवं उद्देश्यों को विस्तार से समझाया गया है । शोध अभिकल्प चार प्रकार के होते हैं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प, अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प निदानात्मक शोध अभिकल्प एवं प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प इस इकाई में इन सभी प्रकारों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है ।

8.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. शोध अभिकल्प क्या है इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालिए ।
2. शोध अभिकल्प को परिभाषित कीजिए । इसकी विशेषताएँ एवं उद्देश्यों को समझाइए ।
3. वर्णनात्मक शोध अभिकल्प एवं अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प को सोदाहरण समझाइए ।
4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए -
   अ. निदानात्मक शोध अभिकल्प
   ब. प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प

8.11 प्रमुख शब्द (Key Words)

अनुभव सर्वेक्षण (Experience Survey)	:	इसमें अध्ययन की जा रही शोध समस्या पर प्रायोगिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियो का सर्वेक्षण किया जाता है । इस सर्वेक्षण का प्रमुख उद्देश्य चरों और शोध समस्या से सम्बंधित नए विचारों के मध्य अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना है ।
व्यक्तिगत प्रलेख (Individual	:	इसमें एक व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन अथवा उसका आंशिक भाग अथवा विशिष्ट घटना या प्रकरण से सम्बंधित लेखा जोखा रहता है । ये व्यक्तिगत प्रलेख आत्मवृत्त, डायरियों, पत्रों आदि के रूप में हो सकते

Document)	हैं ।
शोध अभिकल्प : (Research Design)	यह शोधार्थी के द्वारा शोध के दौरान किए जाने वाले कार्यो की योजना या रणनीति है । शोध अभिकल्प यह बताते है कि शोधार्थी शोध के किस-किस चरण में क्या, कैसे निर्णय लेगा इसका विवरण शोध अभिकल्प में प्रतिपादित किया जाता है ।
सहभागी अवलोकन : (Participiant bservation)	शोधार्थी सहभागी अवलोकन में अध्ययन/अवलोकन किए जा रहे समूह का सदस्य बनकर समूह के व्यवहार का अवलोकन करता है । इसमें शोधार्थी अवलोकन की जा रही विषयवस्तु एवं गतिविधि का विश्लेषण एवं उसे समझने का प्रयास करता है ।

8.12 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Readings)

1. एस.पी. सूद, ज्ञान जगत एवं विषय जगत, जयपुर : राज पब्लिशिंग हाउस, 1998, पेज 151-155.
2. Krishan Kumar, Research methods in library and information science, New Delhi : Vikas Publishing House Pvt. Ltd., 1992, Page 271-278.
3. Abdel Baset I.M.Masouneh, Research methodology, Jaipur : Sublime Publications, 2003, page 33-43.
4. Fred. N. Kerlinge, Foundations of behavioral research, Delhi : Surjeet Publications, 2002, page 300-313.
5. Kothari, C.R., Research methodology : Methods and techniques, New Delhi : Wishwa Prakashan, 2001, page 39-65.
6. IGNOU, Research methodology, [MLIE-102], 2005, page 241-251.

इकाई-9

उपकरण एवं प्रविधियाँ

Tools and Techniques

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 विशेषताएँ
9.3 प्रश्नावली
9.4 अनुसूची
9.5 निर्धारण मापनी
9.6 अवलोकन
9.7 साक्षात्कार
9.8 अभिलेखों के प्रकार एवं उपयोग
9.9 सारांश
9.10 अभ्यासार्थ प्रश्न
9.11 प्रमुख शब्द
9.12 विस्तृत अध्ययनार्थ नन्थंसूची

9.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

1. उपकरणों एवं प्रविधियों के अर्थ को समझाना ।
2. उपकरणों एवं प्रविधियों की विशेषताओं से अवगत करवाना ।
3. प्रमुख प्रकार के उपकरणों की जानकारी देना ।
4. शोध उपकरणों के उपयोग एवं मुख्य दोषों से परिचय करवाना ।

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

अनुसंधान समस्या में सम्बन्धित परिकल्पना की रचना के पश्चात उसके परीक्षण के लिए आवश्यक तथा तर्क संगत आँकड़ों के संकलन की आवश्यकता होती है । आंकड़ें दो प्रकार के होते हैं-प्रथम प्रकार के आंकड़े वह होते हैं जो अनुसंधानकर्ता के द्वारा स्वयं अपने अध्ययन से सम्बन्धित परिकल्पना के परीक्षण के लिए संकलित किये जाते हैं । इस प्रकार के आँकड़ों का स्वरूप प्रत्यक्ष तथा मौलिक होता है तथा इनको प्राथमिक आँकड़े कहते हैं । वैज्ञानिक अध्ययन का आधार प्राथमिक आँकड़े ही होते हैं । इनका संकलन स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा वैज्ञानिक प्रक्रियाओं के माध्यम से वैज्ञानिक उपकरणों (Tools) के उपयोग से किया जाता है ।

दूसरे प्रकार के आँकड़ों का अध्ययनकर्ता स्वयं संचालन नहीं करता बल्कि उनका अपनी अनुसंधान समस्या के विश्लेषण तथा विवेचन में प्रयोग करता है । वास्तव में ऐसे आंकड़े किसी अन्य व्यक्ति, एजेन्सी तथा संस्था द्वारा प्राय: अपने निजी उपयोग के लिए संकलित किये जाते हैं । इससे सम्बन्धित व्यक्ति, संस्था तथा एजेन्सी का स्वरूप सरकारी, अर्द्धसरकारी तथा निजी कुछ भी हो सकता है । इस प्रकार के आँकड़े विद्वानों व वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किये गये संस्मरण तथा अप्रकाशित प्रतिवेदनों, प्रकाशित पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में उपलब्ध रहते हैं । कभी-कभी ऐसे आँकड़े अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों (जैसे-UNESCO) द्वारा भी समय समय पर प्रस्तुत किये जाते हैं । इस इकाई में उपकरण एवं प्राविधियों की विस्तार से चर्चा की गई है ।

9.2 विशेषताएँ (Characterstics)

किसी भी सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य एक घटना विशेष के सम्बन्ध में वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना होता है, वैज्ञानिक निष्कर्ष कल्पनाओं पर आधारित नहीं होता वरन्, वास्तविक तथ्यों पर आधारित यथार्थ व निश्चित निष्कर्ष होता है । इसके लिए तो कुछ प्रमाणसिद्ध तरीकों का होना आवश्यक है । सामाजिक अनुसंधान के लिए आवश्यक वास्तविक तथ्यों को एकत्रित करने के लिए काम में लाये गये निश्चित तथा प्रमाण सिद्ध तरीकों को ही प्रविधि कहते हैं तथा जिस प्रकार एक मेकैनिक को एक इन्जिन या मशीन को ठीक करने के लिए अपने यंत्र बक्स में से एक उपयुक्त यंत्र की खोज करनी होती है, ठीक वैसे ही वैज्ञानिक अनुसंधान के अन्तर्गत एक समस्या के अध्ययन के लिए एक अनुसंधानकर्ता को ऐसे वैज्ञानिक उपकरण अथवा वैज्ञानिक प्रक्रिया का चयन करना पड़ता है । जिसके आधार पर मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके अर्थात् जिन माध्यमों से अनुसंधानकर्ता अपने निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति वैज्ञानिक निष्कर्षो के आधार पर करता है - टूल्स अथवा उपकरण कहलाते हैं ।

प्रो. मोजर ने लिखा है, - "प्रविधियाँ तथा उपकरण एक सामाजिक वैज्ञानिक के लिए वे गन्ध व सुव्यवस्थित तरीके हैं जिन्हें वह अपने अध्ययन विषयों से संबन्धित विश्वसनीय तथ्यों को प्राप्त करने के लिए उपयोग में लाता है ।"

इसको और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नलिखित विशेषताओं को ध्यान में रखना लाभदायक होगा ।

(i) प्रविधि अध्ययन विषय से सम्बन्धित विश्वसनीय तथ्यों, सूचनाओं या आंकड़ों एकत्रित करने का तरीका है ।

(ii) प्रविधि व उपकरण मनमाने ढंग सें अपनाया गया तरीका नहीं बल्कि एक सुव्यवस्थित व परीक्षित तरीका होता है ।

(iii) प्रविधि व टूल्स का सम्बन्ध सम्पूर्ण अनुसंधान से नहीं होता इसका सम्बन्ध तो वहीं तक सीमित होता है, जहाँ तक कि निर्भर योग्य तथ्यों, सूचनाओं आदि को एकत्रित किया जाता है ।

(iv) प्रविधि व उपकरण सभी विज्ञानों के लिए समान नहीं होता । प्रत्येक विज्ञान अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार अलग-अलग उपकरण एवं प्रविधियों को अपनाता है, ।

(v) प्रविधि कोई स्थिर तरीका नहीं है । समय-समय पर किसी भी मौजूदा प्रविधि में आवश्यक परिवर्तन व परिमार्जन हो। सकता हैं अथवा नई प्रविधियों को जन्म दिया जा सकता है ।

9.3 प्रश्नावली (Questionnaire)

अनुसंधानकर्ता के लिए आवश्यक है कि उसे उपकरणों विधियों एवं यंत्रों का व्यापक ज्ञान हो। उसे यह भी ज्ञात होना चाहिए कि इन उपकरणों से किस प्रकार के आँकड़े प्राप्त होंगे । उनकी क्या विशेषताएँ तथा सीमायें हैं ? किन आवश्यकताओं पर इनका उपयोग आधारित है तथा उनकी विश्वसनीयता, वैधता एवं वस्तुनिष्ठता क्या है ? इसके साथ ही इसमें उपकरणों के बनाने, प्रयोग करने तथा उनसे प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण करने का कौशल भी होना चाहिए ।

प्रश्नावली किसी निश्चित विषय पर किये जाने वाले प्रश्नों की एक ऐसी तालिका है जिसके माध्यम से अकेले में अथवा समूह में एक साथ, व्यक्तिगत रूप से मिलकर अथवा डाक से भेजकर उत्तरदाता से लिखित में तथ्यात्मक सूचनाएं प्राप्त की जाती है ।

लुण्ड वर्ग के अनुसार - "मूल रूप में प्रश्नावली उत्तेजनाओं का समूह है । जिनके प्रति शिक्षित व्यक्तियों को दिखाया जाता है । जिससे इन उत्तेजनाओं के प्रति उनके मौखिक व्यवहार का निरीक्षण किया जा सके ।"

बौर्गाडस के अनुसार - "प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियों को उत्तर देने हेतु दी गयी प्रश्नों की एक तालिका हैं इससे निश्चित प्रमापीकृत परिणाम प्राप्त होते हैं जिनका सारणीयन किया जा सकता है तथा सांख्यिकीय उपयोग भी संभव होता है ।"

उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट होता हैं कि प्रश्नावली प्रश्नों की एक उद्देश्यपूर्ण सुनियोजित तालिका है जो उत्तर प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरक का कार्य करती है तथा उससे प्राप्त उत्तरों का व्यवस्थापन एवं सॉख्यिकीय विश्लेषण संभव है । अत: यह कहना युक्तिसंगत है कि यह परिस्थितियों के सर्वेक्षण का सबसे सुगम साधन है वास्तव में आंकड़ें प्राप्त करने के उपकरण के रूप में शिक्षा मनोविज्ञान, समाज विज्ञान एवं पुस्तकालय विज्ञान आदि में इनका खूब प्रयोग किया जाता है तथा इसकी निन्दा भी खूब होती है लेकिन यह ध्यान देने की बात है कि इसकी आलोचना उपयोग की नहीं दुरूपयोग की होती है ।

9.3.1 प्रश्नावली के गुण

(i) प्रश्नावली के द्वारा विस्तृत क्षेत्र से सूचना प्राप्त कर सकते हैं ।

(ii) इसके द्वारा भौगोलिक क्षेत्र के अन्य उन व्यक्तियों से भी सूचना ले सकते हैं जिससे सम्पर्क नहीं हो सकता है ।

(iii) गोपनीयता की रक्षा करते हुए वे सूचनायें भी प्राप्त कर सकते हैं जो अन्य माध्यम से प्राप्त नहीं हो सकती हैं ।

(iv) पर्याप्त समय मिलने से लोग सोच-विचार कर उत्तर देते हैं ।

(v) साक्षात्कार के दोषों से बचाव होता है ।

(vi) एक अच्छी प्रश्नावली व्यापक क्षेत्र को समेटते हुए भी संक्षिप्त होती है ।

(vii) इसकी छपाई आदि आकर्षक होती है ।

(viii) इसमें पूर्ण स्पष्ट निर्देश दिये हुए होते हैं ।

(ix) महत्वपूर्ण प्रश्न स्पष्ट रूप से विश्लेषित होते हैं तथा एक प्रश्न में एक ही विचार निहित होता है ।

(x) समुचित व्यवस्थापन एव विश्लेषण की सुविधा के लिए प्रश्न श्रेणियों में विभक्त होते हैं ।

(xi) अच्छी प्रश्नावली के प्रश्न वस्तुनिष्ठ होते हैं ।

(xii) प्रश्नों का क्रम सरल से कठिन तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर होता है ।

(xiii) प्रश्न ऐसे होते हैं जिससे उत्तरदाता क्षुब्ध न हो उठे ।

(xiv) अच्छी प्रश्नावली विश्वसनीय एवं वैध होती है ।

9.3.2 प्रश्नावली के दोष

(i) बहुधा प्रश्नावली काफी विस्तृत होती है ।

(ii) प्रश्नावली की शब्दावली भ्रमपूर्ण होती है ।

(iii) प्रश्न अधिकांश में वस्तुनिष्ठ नहीं होते हैं ।

(iv) प्रश्नों का क्रम संगत नहीं होता है ।

(v) प्रश्नों की छपाई ठीक नहीं होती ।

(vi) प्रश्नों में व्यापकता का अभाव होता है ।

(vii) प्रश्नों का क्रम ऐसा होता है कि आंकलन एवं मूल्यांकन कठिन होता है ।

9.3.3 प्रश्नावली के उपयोग में सुविधाएं

(i) इससे संसार के कोने-कोने की सूचना घर बैठे ले सकते हैं ।

(ii) सूचना एक साथ हजारों लोगों को दे सकते हैं ।

(iii) इसके प्रयोग से समय, श्रम तथा धन की बचत होती है ।

(iv) तुलनात्मक दृष्टि से सूचनायें अधिक वस्तुनिष्ठ एवं वैध होती हैं ।

(v) इसका बनाना, प्रशासन करना एवं अंक देना सरल होता है ।

9.3.4 प्रश्नावली के उपयोग में असुविधाएं

(i) प्रश्नों में यदि कोई भ्रम है तो इसका निवारण कठिन होता है ।

(ii) प्रश्नकर्ता की अपेक्षानुसार उत्तर न मिलकर कुछ और उत्तर होता है ।

(iii) कभी-कभी उत्तर देना उत्तरदाता की सामर्थ्य के बाहर होता है ।

(iv) कुछ उत्तरदाता ठीक उत्तर देना ही नहीं चाहते ।

(v) कुछ प्रश्न छूट जाते हैं जिनकी पूर्ति असंभव होती है ।

(vi) बच्चों पर तथा निरक्षरों पर इसका प्रयोग नहीं कर सकते ।

(vii) संवेगात्मक बातों को जानना कठिन होता है ।

(viii) उत्तर स्वाभाविक नहीं होते ।

(ix) अनेक बार प्रार्थना करने पर भी कुछ लोग लौटाते नहीं हैं ।

9.3.5 विधियाँ

प्रश्नावली के प्रयोग की सामान्यता दो विधियाँ हैं.

I. प्रत्यक्ष विधि

जब सम्पूर्ण जनसंख्या एक ही स्थान पर हो तो अनुसंधानकर्ता उनसे सम्पर्क स्थापित करके उन्हें प्रश्नावली देता है उसके महत्व को स्पष्ट करता है तथा यदि कोई शंका होती है तो उसे दूर कर देता है ।

II. डाक द्वारा भेजकर

जब जनसंख्या एक स्थान पर उपलब्ध नहीं होती है तो डाक द्वारा भेजकर उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करते हैं । लेकिन अधिकांश अनुसंधानकर्ता यह शिकायत करते हैं कि लोग सहयोग नहीं करते या उत्तर लापरवाही से देते हैं या उत्तर देते ही नही हैं ।

9.3.6 प्रश्नावली के प्रकार

प्रश्नावली अनेक प्रकार की होती हैं । इनको हम निम्नलिखित शीर्षकों में विभक्त कर सकते हैं:

(i) प्रतिबन्धित प्रश्नावली

इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों की व्यवस्था इस प्रकार की होती है कि उत्तरदाता नियंत्रित रूप में ही उत्तर दे सकता है । उत्तरदाता को ही या नहीं में से एक को काटना होता है । किसी उत्तर पर निशान लगाना होता है या एक को काटना होता है ।

(ii) खुली प्रश्नावली

खुली प्रश्नावली में उत्तरदाता अपने शब्दों में अपने विचारानुकूल उत्तर देने के लिए स्वतंत्र होता है । इसमें उत्तरदाता को अपनी प्रेरणा तथा प्रवृत्ति को व्यक्त करने का अवसर मिलता है तथा उन परिस्थितियों को भी सूचित करना होता है जिन पर उत्तर आधारित होता है ।

(iii) चित्ररूपी प्रश्नावली

कुछ प्रश्नावली में प्रश्नों के स्थान पर चित्र दिये होते हैं जिनसे उत्तर दाता को उत्तर चुनने होते हैं । उन्हें मौखिक निर्देश भी दिये जा सकते हैं । इस प्रकार की प्रश्नावली विशेष रूप से बच्चों तथा कम पढ़े लिखे लोगों के लिए उपयोगी रहती है । चित्र ध्यान को शीघ्र आकर्षित कर लेते हैं तथा उत्तर देने के लिए प्रेरित करते हैं ।

(iv) मिश्रित प्रश्नावली

इसमें पहले दोनों प्रकार के प्रश्न रखे जाते हैं अत: दोनों के दोषों से बचाव हो जाता है ।

9.3.7 प्रश्नावली का निर्माण

प्रश्नावली के निर्माण में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है

(क) उद्देश्य एवं स्वरूप निर्धारण

i. प्रश्नावली बनाने से पूर्व उद्देश्य को स्पष्ट रूप से लिखकर उसके विभिन्न अंशों की विस्तृत सूची तैयार करनी चाहिए । यह विश्लेषणात्मक सूची जितनी विचारपूर्ण एवं विस्तृत होगी प्रश्नावली उतनी ही अच्छी होगी ।

ii. प्रश्नावली का प्रकार निश्चित कर लें कि वह किस प्रकार की होगी ।

(ख) प्रश्नावली लेखन

(i) प्रश्नावली अधिक लम्बी न हो ।

(ii) प्रश्नावली में केवल आवश्यक प्रश्न रखे जायें ।

(iii) प्रश्नावली के प्रत्येक भाग के लिए स्पष्ट निर्देश हों ।

(iv) प्रश्न सरल से कठिन तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर हों ।

(v) प्रतिबन्धित तथा खुली दोनों प्रकार की प्रश्नावलियों का मिश्रण हो ।

(vi) भ्रमपूर्ण एवं कठिन भाषा का प्रयोग न किया जाये ।

(vii) दुहरे प्रश्न न किये जायें ।

(viii) नकारात्मक प्रश्नों से बचना चाहिए ।

(ix) प्रश्न अपरिचित धारणा पर आधारित न हों ।

(x) यदि किसी शब्द पर विशेष बल देना हो तो उसे रेखांकित कर दें ।

(ग) सहयोगियों तथा विशेषज्ञों से परामर्श

प्रश्नों का गठन करने के बाद सहयोगियों तथा विशेषज्ञों से उनके बारे में राय ले लेनी चाहिए। इस चर्चा से प्रश्नों में सुधार, कमी अथवा विस्तार किया जा सकता है ।

(घ) प्राथमिक परीक्षण

प्रश्नावली तैयार कर लेने के बाद एक छोटा प्रतिदर्शन लेकर उस पर प्रयोग करके यह निश्चित कर लेना चाहिए कि प्रश्न कहाँ तक समझ में आते हैं तथा उत्तर कैसे प्राप्त होते हैं, एवं क्या कठिनाईयॉ आती हैं ।

(ङ) प्रश्नावली की छपाई

निर्देश तथा मुख्य पृष्ठ आदि का निश्चिय कर लेने के बाद प्रश्नावली को आकर्षक एवं शुद्ध छपा लेना चाहिए ।

9.4 अनुसूची (Schedule)

अनुसंधान कार्य में सूचना एकत्र करने के परोक्ष साधनों की अपेक्षा प्रत्यक्ष साधनों का महत्व बढ़ता जा रहा है । समस्या के प्रत्यक्ष अवलोकन द्वारा संचित सूचनायें अत्यधिक उपयोगी एवं विश्वसनीय होती हैं, इस दृष्टि से अनुसूची विशेष महत्वपूर्ण है ।

अनुसूची का प्रयोग करने वाला अनुसंधानकर्ता अध्ययन क्षेत्र में स्वयं उपस्थित होकर प्रश्न करता है तथा अनुसूची भरता जाता है । प्रश्नावली भी एक प्रकार की अनुसूची ही है परन्तु दोनों में अन्तर उनके प्रयोग के ढंग में निहित है । जब सूचनायें दूर-दूर से व्यापक क्षेत्र से लेनी होती हैं तो प्रश्नावली का प्रयोग करते हैं । उन्हें डाक से भी भेज सकते हैं और जब सूचनायें पास से लेनी होती हैं तो क्षेत्र में स्वयं जाकर सूचना प्राप्त करते हैं और अनुसूची का प्रयोग करते हैं । प्रश्नावली में अनेक प्रश्न छूट जाते हैं परन्तु अनुसूची में इसकी संभावना नहीं रहती है । व्यक्तिगत प्रयोग के कारण अनुसूची प्रश्नावली से अच्छा उपकरण है ।

गुड तथा हैट के अनुसार - "अनुसूची प्रश्नों के एक समूह के लिए प्रयुक्त नाम होता है जो साक्षात्कार करने वाले के द्वारा दूसरे व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछी और भरी जाती है।"

बोगार्डस के अनुसार - "अनुसूची संक्षिप्त प्रश्नों की एक रचना है जिसे सामान्यत: सर्वेक्षणकर्ता स्वयं रखता है और अपने अन्वेक्षण में अग्रसर होने के साथ-साथ भरता जाता है ।"

प्रश्नावली तथा अनुसूची में समानता यह है कि दोनों में से सभी उत्तरदाताओं के लिए प्रश्नों की शब्दावली समान होती है ।

9.4.1 अनुसंधान में अनुसूची का महत्त्व

अनुसंधान में अनुसूची का महत्त्व निम्नवत् है

(i) इसके प्रयोग से वास्तविक तथ्यों की प्राप्ति होती है ।

(ii) अस्पष्ट प्रश्नों का स्पष्टीकरण हो जाता है तथा उत्तर सही मिल जाता है ।

(iii) आवश्यकतानुसार प्रश्न परिवर्तन का पर्याप्त अवसर होता है ।

(iv) विषयवस्तु की पृष्ठभूमि का भी अध्ययन किया जा सकता है ।

(v) आवश्यक अध्ययन एवं विस्तार से भी बचाव होता है ।

(vi) प्रामाणिक अवलोकन द्वारा विश्वसनीय सूचना मिलती है ।

9.4.2 अच्छी अनुसूची की विशेषतायें

एक अच्छी अनुसूची में निम्नलिखित विशेषतायें होती हैं.

(i) प्रश्न स्पष्ट एवं सरल होते हैं ।

(ii) प्रश्न संक्षिप्त होते हैं ।

(iii) एक अच्छी अनुसूची विश्वसनीय, वैध, वस्तुनिष्ठ तथा व्यापक होती है ।

(iv) प्रश्न परस्पर पुष्टि करने वाले होते हैं ।

(v) प्रश्न इस प्रकार आयोजित होते हैं कि एक वर्ग के उत्तर दूसरे से सम्बन्धित हो सकें ।

(vi) प्रश्नों का स्वरूप क्रमबद्ध, वस्तुपरक तथा तर्कसंगत होता है ।

(vii) अनुसूची का भौतिक स्वरूप सर्वमान्य तथा आकर्षक होता है ।

(viii) अनुसूची का स्वरूप संरचित होता है ।

9.4.3 अनुसूची से लाभ

अनुसूची से अनेकानेक लाभ हैं जिनको हम निम्न प्रकार से बिन्दुवत स्पष्ट कर सकते हैं

(i) अनुसंधानकर्ता तथा उत्तरदाता में अच्छा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है ।

(ii) अनुसूची में सभी प्रश्नों के उत्तर भरे जा सकते हैं ।

(iii) उत्तरदाता को प्रेरित करना सरल होता है ।

(iv) कार्य सरल एवं सुगमता से शीघ्र पूरा हो जाता है ।

(v) श्रम एवं धन की बचत होती है ।

(vi) अनुसूची द्वारा वस्तुपरक आँकड़े प्राप्त होते हैं ।

(vii) अनुसूची द्वारा यथार्थ तथा गहन जानकारी प्राप्त होती हैं ।

(viii) प्रशिक्षित व्यक्तियों के अध्ययन में सम्मिलित होने की संभावना बढ़ जाती है ।

(ix) तुलनात्मक तथा विश्वसनीय आँकड़ों की प्राप्ति होती है ।

(x) प्राप्त प्रति उत्तरों की वैधता का स्तर उच्च होता है ।

9.4.4 अनुसूची की सीमायें

(i) दूर-दूर से सूचना प्राप्त करना कठिन होता है ।

(ii) अनुसंधानकर्ता की उपस्थिति उत्तरदाता को प्रभावित करती है ।

(iii) अनुसूची के प्रशासनिक सयंत्र की व्यवस्था करने में कठिनाई का अनुभव होता है ।

(iv) सार्वभौमिक प्रश्नों की संरचना में कठिनाई आती है ।

(v) व्यक्तिगत पक्षपात की अधिक संभावना रहती है ।

(vi) अपूर्ण तथा अपर्याप्त उत्तरों की प्राप्ति होती है ।

(vii) इसमें कुशल तथा प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ती है ।

(viii) यह अध्ययन की अधिक खर्चीली पद्धति है ।

(ix) उद्देश्य प्राप्ति की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक काम करना पड़ता है ।

9.4.5 अनुसूची के प्रकार

1. **अवलोकन अनुसूची (Observation Schedule)**

   इसे निरीक्षण अथवा किसी घटना के अवलोकन हेतु प्रयोग करते हैं ।

2. **साक्षात्कार अनुसूची (Interview Schedule)**

   इसका उपयोग साक्षात्कार के लिए किया जाता है जबकि आंकड़ें गुणात्मक हों । यह सामाजिक अनुसंधानों में अधिक प्रचलित है । इसमें प्रश्नों के आगे रिक्त स्थान होते हैं । साक्षात्कारकर्ता उनकी पूर्ति स्वयं करता है ।

3. **लेख सम्बन्धी अनुसूची (Document Schedule)**

   इसमें पूछने की आवश्यकता नहीं पड़ती । अभिलेखों से प्राप्त आंकडों के आधार पर अनुसूची की पूर्ति करते जाते हैं । यह ऐतिहासिक, विकासात्मक तथा सर्वेक्षण प्रकार के अनुसंधान के लिए अधिक उपयोगी है ।

4. **निर्धारण अनुसूची (Rating Schedule)**

   इसका प्रयोग वहाँ करते हैं जहाँ अनुसूची के आधार पर मूल्यांकन गुण निर्धारण अथवा उसकी तुलनात्मक क्षमता का निर्धारण करना होता है । अभिवृत्ति, मत, प्रथा, फैशन, गुणादि के बारे में अध्ययन करने हेतु इसका प्रयोग सफलता से किया जाता है ।

5. **संस्था सर्वेक्षण अनुसूची (Institution Survey Schedule)**

   इस प्रकार की अनुसूची का प्रमुख उद्देश्य एक विशेष संस्था की सामान्य समस्याओं का सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन करना होता है । इसमें संस्था से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं के विभिन्न पहलुओं का क्रमबद्ध तथा विशिष्ट रूप से अध्ययन किया जाता है ।

9.4.6 अनुसूची के उद्देश्य

अनुसूची द्वारा एक अनुसंधान समस्या का अध्ययन अपेक्षाकृत अधिक क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित । अनुसूची के उपयोग के अनेक उद्देश्य रहते हैं । मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. अनुसूची के उपयोग का मुख्य उद्देश्य वस्तुपरक आँकड़ों का संक्लन करना होता है ।
2. अनुसूची के उपयोग का दूसरा मुख्य उद्देश्य निश्चित, क्रमबद्ध तथा तर्कसंगत आँकड़ों का संकलन करना होता है ।
3. अनुसूची द्वारा अध्ययन में यह भरसक प्रयास किया जाता है कि अध्ययन से सम्बन्धित कोई आवश्यक पहलू छूट न जावे । अत: अध्ययन के अन्तर्गत समस्या का सम्पूर्ण अध्ययन किया जाता है ।
4. अनुसूची के उपयोग का एक अन्य उद्देश्य तुलनात्मक तथा विश्वसनीय आँकड़ों का संकलन होता है ।
5. अनुसूची का मुख्य ध्येय केवल सम्बन्धित समस्या के प्रति रचित प्रश्नों के बाहरी उत्तरों को प्राप्त करना ही नहीं होता है बल्कि अनुसूची के उपयोग में साक्षात्कार के अन्तर्गत अध्ययनकर्ता द्वारा सूचनादाता की वास्तविक मनोवृतियों, अभिवृतियों व प्रतिक्रियाओ के आधार पर वैध उत्तर प्राप्त करना भी होता है ।

9.4.7 अनुसूची बनाने की पद्धति

अनुसूची बनाने में निम्नलिखित स्तर होते हैं :

1. प्रत्येक अंग के लिए वांछित सूचना के प्रकार का निर्धारण करना ।
2. अध्ययन के क्षेत्र का विश्लेषण करके प्रत्येक अंग को अंकित करना ।
3. प्रत्येक अंग के लिए महत्व निश्चित करना ।
4. विशिष्टीकरण तालिका का निर्माण करना ।
5. प्रश्नों का निर्माण ।
6. प्रश्नों का आयोजन एवं व्यवस्थापन ।
7. विशेषज्ञों की राय जानना ।
8. पूर्व परीक्षण ।
9. अन्तिम रूप प्रदान करना ।
10. प्रयोग ।

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. प्रश्नावली क्या है ?

   ....

   ....

2. अनुसूची क्या है ?

   ....

	....
3.	अनुसूची के प्रमुख प्रकार बताइये ।
	....
	....
4.	अनुसूची के प्रमुख उद्देश्य बताइये ।
	....
	....

9.5 निर्धारण मापनी (Rating Scale)

निर्धारण मापनी एक बहु-प्रचलित उपकरण है जिसमें किसी वस्तु, घटना, समायोजन, नेतृत्व, मूल्य या स्थिति के सीमित पक्षों का गुणात्मक वर्णन या मूल्यांकन किया जाता है । किसी वस्तु, स्थिति या घटना का संख्यात्मक वर्णन और मूल्यांकन तो सरल होता है परन्तु गुणात्मक वर्णन या मूल्यांकन मानवीय निर्णय पर आश्रित होने के कारण बहुत कठिन होता है । उपकरण निर्धारण मापनी मूल्यांकन के क्षेत्र में व्यवहार में आने वाले उपकरणों में सबसे अधिक प्रचलित है । यह अनेक रूपों में पायी जाती है ।

गुड तथा स्कैट्स के अनुसार - यह उपकरण मूल्यांकन की जाने वाली वस्तु के विभिन्न अंगों की ओर ध्यान आकर्षित करती है । किन्तु इसमें उतने प्रश्न अथवा खण्ड नहीं होते जितने चैकलिस्ट अथवा स्कोर-कार्ड में होते हैं ।

वानहैलेन के अनुसार - निर्धारण मापनी किसी चर की श्रेणी उसकी गहनता महत्व अथवा बारम्बारता को निश्चित करती है ।

जॉन डब्लू वैस्ट के अनुसार - निर्धारण मापनी किसी व्यक्ति के गुणों अथवा वस्तु के सीमित पक्षों का गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करती है ।

निर्धारण मापनी दो मूल अवधारणाओं पर आधारित होती है

(i) सातत्य की स्थिति और

(ii) उस सातत्य का प्रतिनिधित्व

पहले की जाँच अन्तिम विवरण के अध्ययन से तथा दूसरे की जाँच परीक्षण की वैधता से होती है ।

9.5.1 निर्धारण मापनी (Rating Scale) का वर्गीकरण

(i) सामाजिक अन्तर मापनी (Social Distance Scale)

सामाजिक अन्तर की धारणा एक सातत्य को सूचित करती है । जिस समूह का सामाजिक अन्तर मापनी हो उसे एक सातत्य पर रखते हैं । इस निर्धारण मापनी के प्रणेता बोगार्डस थे।

(ii) प्रत्यय भिन्नता मापनी (The Semantic Differential Scale)

इसके अन्तर्गत् अनेक सप्त इकाई, दो ध्रुवीय ग्राफ सम्बन्धी मापनी होती है । वास्तव में इसका प्रयोग किसी प्रत्यय के अर्थ में भिन्नता को मापने हेतु किया जाता है । किन्तु अन्य क्षेत्रों में भी इसका प्रयोग हो सकता है ।

(iii) क्यू विधि (Q - Techniques)

इस विधि की खोज इस्टीफेंसन ने 1953 में की थी क्यू से तात्पर्य प्राप्तांकों के सह सम्बन्ध से नहीं है, अपितु आन्तरिक एवं पारस्परिक सह सम्बन्ध से है । इस विधि में 50 से 100 कथन तक संगृहीत किये जाते हैं तथा उन्हें अलग-अलग कार्डो पर छाप देते हैं । विषयी कार्डो को 7,9,11 के क्रम में एक सातत्य पर छांटता है जिसके एक सिरे पर पूर्णत: व्यवहार्य एवं दूसरे सिरे पर पूर्णत: अव्यवहार्य होता है । प्रत्येक ढेर में कार्डो की संख्या ही उस सातत्य पर अंकों को सूचित करती है ।

(iv) आत्म निर्धारण विधि (Self-anchoring Techniques)

यह एक अशाब्दिक निर्धारण मापनी है जिसका निर्माण किलपैट्रिक तथा कन्ट्रिल ने 1960 ई. में किया । इसमें विषयी से पूछा जाता है कि उसके लिए कौन से जीवन शैली सवन्तिम होगी तथा कौन सी जीवन शैली सर्वोत्तम होगी तथा कौनसी सबसे खराब होगी । शब्दशः उत्तर लिख लिया जाता है । इसके बाद उसके सामने एक चित्र रूप में मापनी प्रस्तुत की जाती है । जिसमें एक सीढ़ी के दोनों किनारे होते हैं । एक सबसे अच्छा और दूसरा बुरे का प्रतीक होता है । विषयी से यह प्रदर्शित करने के लिए कहा जाता है कि वह इस समय अपने को किस खण्ड में स्थित समझता है ।

(v) आन्तरिक संगत मापनी है (Internal Consistancy Scale)

यह थर्स्टन की एटीट्यूट स्केलिंग में सुधार का फल है । इसके अन्तर्गत संगत प्रश्नों को उसी मूल्य के अन्य प्रश्नों के साथ रखते हैं ।

(vi) गुप्त संरचना विश्लेषण (Latent Structure Scale)

यह गुणात्मक आँकड़ों के तत्व विश्लेषण की एक प्रमुख विधि है । यह मापन में उपयोगी हैं परन्तु, जटिल है ।

(vii) स्थिति मापनी (Ranking Scale)

निर्णायकों के ऊपर निर्भर होने के कारण यह भी निर्धारण मापनी के ही समान हैं एक निरपेक्ष मापनी पर निर्णय किये जाते हैं । उत्तेजना की पूरी श्रृंखला में तुलना की जाती है । इसे युग्मित तुलना विधि या समान अन्तर प्रदर्शिका विधि द्वारा करते हैं ।

(viii) निर्धारण मापनी (Rating Scale)

यह बहुत प्रचलित है । निर्धारण मापनी के सम्बन्ध में अपने सर्वे पर व्यक्त करते हुए गुड ने लिखा है कि यह एक व्यवस्थित पद्धति के अनुसार किसी वस्तु अथवा व्यक्ति में निहित विशेषताओं की सीमाओं का आकलन है । जिसे गुणात्मक अथवा परिमाणात्मक विधि द्वारा प्रदर्शित करते हैं ।

9.5.2 निर्धारण मापनी के प्रकार

निर्धारण मापनी का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है । यही पर गिलफोर्ड का वर्गीकरण जो अधिकांश लोगों द्वारा स्वीकृत है, दिया जा रहा है ।

1. सांख्यिक मापनी (Numerical Scale)
2. ग्राफ मापनी (Graphic Scale)
3. स्तर मापनी (Standards Scale)
4. संचित बिन्दु मापनी (Cumulate Point Scale)
5. बाध्य विकल्प मापनी (Forced Choice Scale)

1. सांख्यिक मापनी (Numerical Scale)

इसके अन्तर्गत पूर्व विश्लेषित अंकों की एक तालिका मापन करने वाले के समक्ष प्रस्तुत की जाती है । वह अपने निर्णयानुसार प्रत्येक वस्तु अथवा व्यक्ति को एक उचित अंक प्रदान करता है । इसमें अंक 1 से 11,1 से 7, अथवा 1 से 5 तक होते हैं जिसके दोनों अन्तिम अंक (पहला तथा आखिरी) अत्यन्त एवं अनुकूल एवं अत्यन्त प्रतिकूल को तथा बीच के अंक अनिश्चय को सूचित करते हैं ।

2. ग्राफ मापनी (Graphic Scale)

इनमें बड़ी भिन्नता हैं तथा यह बहु त प्रचलित है । इसके अन्तर्गत किसी गुण से सम्बन्धित दोनों अति सूचक शब्द सातत्य के दोनों किनारों पर होते हैं । इसकी पंक्तियाँ खडी या पड़ी दोनों प्रकार की हो सकती हैं । इसमें निम्नलिखित बातें विचारणीय हैं:

1. प्रत्येक गुण के लिए एक पृष्ठ हो ।
2. रेखा 5 इंच लम्बी हो ।
3. संकेत एक बिन्दु पर केन्द्रित हो ।
4. कम प्रयोग में आने वाले संकेतों से बचना चाहिए ।
5. अंक देने के लिए स्टेन्सिल का प्रयोग करना चाहिए ।

3. स्तर मापनी (Standards Scale)

इसके अन्तर्गत स्तरों की एक वर्ग सूची मापनकर्ता के समक्ष प्रस्तुत की जाती है । यह सूची शाब्दिक संकेतों के स्थान पर होती है । मापनकर्ता नये न्यादर्शों को उस स्तर की तुलना में निश्चित करता है । यह मापनी दो प्रकार की होती है ।

(1) व्यक्ति-व्यक्ति मापनी (2) चित्र तुलना मापनी ।

4. संचित बिन्दु मापनी (Cumulate Point Scale)

(क) चिन्हांकन सूची विधि (Check List Method)

इसके अन्तर्गत अनुकूल तथा प्रतिकूल गुणों की एक सूची प्रदान की जाती है । मापनकर्ता प्रत्येक प्रश्न की जांच करता है । जिसे वह मापन के लिए उचित समझता हैं । चिन्हांकन सूची सत्य-असत्य बहु विकल्प प्रकार तथा मापनी प्रकार की हो सकती है । यह विधि मापन करने तथा अंक देने में सरल होती है ।

(ख) बूझो कौन विधि (Guesss who method)

इसे हार्टशार्न तथा मैके द्वारा बच्चों के लिए बनाया गया था परन्तु युवकों पर भी इसका प्रयोग कर सकते हैं । इसमें संक्षिप्त शाब्दिक चित्र निर्मित होते हैं । बच्चों से कहा जाता है कि वह अपने समूह के उन सभी बच्चों की सूची बनायें जो उस विवरण के अनुकूल हों । श्रेणी प्रदान करने वालों को उनके समूह के सदस्यों के नाम की एक सूची प्रदान कर दी जाती है । चयन अथवा मूल से दोष आ जाता है ।

5. बाध्य विकल्प मापनी (Forced Choice Scale)

इस हार्स्ट द्वारा स्तर मापनी के दोषों को दूर करने हेतु बनाया गया था । बेरी ने इसका प्रयोग व्यक्तित्व तालिका के रूप में किया था ।

9.5.3 निर्धारण मापनी (Rating Scale) का निर्माण

निर्धारण मापनी में 3 महत्वपूर्ण तत्व होते हैं :-

I. निर्णायक (Judge of Rater)

II. विषयी (Subject)

III. सातत्य (Continuum)

I. निर्णायक (Judge of Rater)

एक की अपेक्षा अनेक लोगों द्वारा किया गया निर्णय सदैव उत्तम रहता है । गिलफोर्ड ने निर्णायकों की 33 विशेषतायें बतायीं हैं जिनका प्रभाव निर्णय पर पड़ता है । उनमें से कुछ प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं:

1. निर्णय क्षमता में लोगों में व्यक्तिगत भिन्नता होती है ।
2. एक ही परिस्थितियों में विषयी को न जानने के कारण उनमें भिन्नता हो सकती है ।
3. निर्णय पर सतत् त्रुटियों का प्रभाव पड़ता है ।
4. निर्णय पर प्रेरणा तथा रूचि का प्रभाव भी पडता है ।
5. जो स्वयं के लिए निर्णय कर सकता है । वह दूसरों का भी कर सकता है ।
6. प्रशिक्षण से निर्णायक अच्छा कार्य करते है ।
7. निकट सम्बन्धी के बारे में उच्च निर्णय दे दिया जाता है ।
8. माँ-बाप अपने बच्चों को उच्च निर्धारित करते हैं ।
9. निर्णय का उद्देश्य ज्ञात होना भी निर्णय को प्रभावित करता है ।
10. बुद्धिमान व्यक्ति का निर्णय अधिक अच्छा होता है ।

II. विषयी (Subject)

दूसरा महत्वपूर्ण भाग विषयी अथवा गुण है जिसके बारे में निर्धारण करना है । जिस विषयी अथवा गुण का निर्धारण करना है उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित होना चाहिए तथा उसके लिए वस्तुनिष्ठ संकेत मिलने चाहिए । गिलफोर्ड ने इसके लिए निम्न विशेषताओं का होना आवश्यक माना है ।

1. इसका वस्तुनिष्ठ तथा विशिष्ट वर्णन हो ।
2. प्रत्येक गुण की अलग-अलग सत्ता हो ।
3. उनका वर्गीकरण निर्धारण की शुद्धता एवं सहूलियत पर आधारित हो ।
4. सामान्य पदों का प्रयोग न किया जावे ।
5. विषय का निर्णय उसकी मूलभूत अथवा वर्तमान स्थिति से किया जाये ।

6. जहाँ पर और भी वस्तुनिष्ठ उपकरण हो वही निर्धारण मापनी का प्रयोग न किया ।

III. सातत्य (Continuum)

सातत्य का निर्धारण अत्यन्त सावधानी से करना चाहिए तथा इसके लिए समुचित संकेत देने चाहिए समुचित निर्णय देने के लिए इनका पांच से सात श्रेणियों में विभाजन किया जा सकता हैं ।

1. प्रतिभा सम्पन्न - बहुत अच्छा - सदैव ।
2. सामान्य से उपर - अच्छा - बहुधा ।
3. सामान्य - सामान्य - कभी-कभी ।
4. सामान्य से कम - सामान्य से कम- बहुत कम ।
5. हीन - बुरा - कभी नहीं ।

इसके अन्तर्गत गुण प्रकट करने वाले शब्दों को बाये से दायें आरोही अथवा अवरोही क्रम में रख सकते हैं । जो भी पद दिये जायें उनकी वस्तुनिष्ठ व्याख्या से निर्णय भी वस्तुनिष्ठ होगा ।

9.5.4 निर्धारण मापनी के गुण

1. इसमें छात्रों की आश्यकताओं को जानने में सरलता रहती है ।
2. यह छात्रों के सम्बन्ध में अन्य साधनों द्वारा प्राप्त ज्ञान की पूर्ति करती है ।
3. इसके आधार पर अभिलेखों की रिपोर्ट देना सरल होता है ।
4. छात्र प्रवेश में सहायता मिलती है ।
5. नौकरी के लिए संस्तुति करना सरल होता है ।
6. इसमें कम समय लगता है तथा प्रयोग आसान होता है ।
7. शैक्षिक परखों की वैधता ज्ञात करने में शिक्षक निर्धारण मापनी का प्रयोग किया जाता है ।

9.5.5 निर्धारण मापनी के दोष

निर्धारण मापनी के उपयोग में निम्नलिखित त्रुटियां आती हैं:

1. उदारता सम्बन्धी त्रुटि ।
2. पूर्ण प्रभाव सम्बन्धी त्रुटि ।
3. केन्द्रीय प्रवृति सम्बन्धी त्रुटि ।
4. प्रतिकूलता सम्बन्धी त्रुटि ।
5. तार्किक त्रुटि ।

इस विधि का उपयोग शिक्षा शास्त्र के शोध में बहुतायत से किया जाता है ।

9.6 अवलोकन (Observation)

हम अपने दैनिक जीवन में व्यक्तियों के व्यवहार, घटनाओं तथा परिस्थितियों को देखते रहते हैं । दूसरे शब्दों में उनका अवलोकन करते रहते हैं परन्तु इस सामान्य ढंग से किये जाने वाले अवलोकन और शोध कार्य हेतु एक विशिष्ट तकनीक के रूप में किये जाने वाले अवलोकन में बहुत अंतर होता है । शोध कार्य हेतु किये जाने वाला अवलोकन सुनिश्चित और व्यवस्थित होता है, जिसके उद्देश्यों और अभिलेखन प्रक्रिया को पूर्व में निर्धारित कर लिया जाता है । साथ ही इसमें यथार्थता, वैधता और विश्वसनीयता का पूरा ध्यान रखा जाता है । अवलोकन हमारे दैनिक जीवन की एक महत्वपूर्ण क्रिया

ही नहीं है बल्कि वैज्ञानिक जानकारी का एक प्रमुख साधन भी है । यह एक वैज्ञानिक विधि बन जाती है, यदि -

1. यह अनुसंधान की समस्या के निर्धारण में सहायक होते हैं ।
2. इसका नियोजन व्यवस्थित हो ।
3. यह वैधता एवं विश्वसनीयता की जाँच का साधन हो ।

वास्तव में अनुसंधान में एक उपकरण के रूप में इसका सम्बन्ध व्यक्ति के बाह्य व्यवहार से है । इसका सम्बन्ध न तो लिखित अभिव्यक्ति से, न साक्षात्कार में उसके द्वारा दिये गये उत्तर से होता है । अपितु स्वाभाविक परिस्थिति में उसके निरीक्षण से होता है ।

गुड तथा हैट (Good & Hatt) के अनुसार - 'विज्ञान का प्रारम्भ अवलोकन से होता है तथा इसकी पुष्टि के लिए अवलोकन में ही लौटना पड़ता है ।'

अवलोकन की अब से प्राचीनतम तथा आधुनिकतम प्रणाली के रूप में वैज्ञानिक अवलोकन में निम्नलिखित विशेषतायें होनी आवश्यक हैं:

1. कुशलता से किया गया अवलोकन ।
2. उद्देश्य पूर्ण अवलोकन ।
3. व्यवस्थित अवलोकन ।
4. सावधानी से किया गया अवलोकन ।
5. सावधानी से किया गया शुद्ध, वैध, तथा विश्वसनीय अवलोकन ।

उपर्युक्त विशेषतायें होने पर ही अवलोकन वैज्ञानिक अनुसंधान का आधार बनता है ।

9.6.1 विशेषतायें

1. यह वर्णात्मक अनुसंधान का प्रमुख साधन है ।
2. व्यक्तित्व के विशेष गुणों को जितनी अच्छाई के साथ इस प्रत्यक्ष प्रणाली के साथ जाना जा सकता है अन्य से नहीं ।
3. पाठ्यक्रम सहभागी क्रियाओं के निरीक्षण के द्वारा अनेक तथ्य प्राप्त किये जा सकते हैं । कक्षा में छात्रों के व्यवहार समूह में उनकी स्थिति तथा उत्तेजना की प्रतिक्रिया को स्वाभाविक रूप से जान सकते हैं ।
4. कक्षा में छात्रों के व्यवहार समूह में उनकी स्थिति तथा उत्तेजना की प्रतिक्रिया को स्वाभाविक रूप से जान सकते है ।
5. अन्य भाषा-भाषी तथा जो लिख-पढ और बोल नहीं सकते उन व्यक्तियों के अध्ययन का प्रमुख साधन है ।

9.6.2 अवलोकित आँकड़ों का लेखन

अवलोकित सामग्री के व्यवस्थित लेखन के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग करते है।

1. चिहांकन सूची
2. निर्धारण मापनी
3. रिक्त स्थान पूर्ति-पत्र
4. प्राप्तांक कार्ड

अनुसंधानकर्ता समस्या के स्वरूप तथा उद्देश्य के अनुसार इनमें से किसी का भी उपयोग कर सकता है ।

9.6.3 अवलोकन के आवश्यक तत्व

अच्छे अवलोकन के चार महत्वपूर्ण तत्व है:

1. समुचित नियोजन

समुचित नियोजन की मूलभूत आवश्यकतायें निम्नांकित हैं

क. अवलोकन सम्बन्धी व्यवहार का विश्लेषण(कौन सा व्यवहार ?)

ख. प्रतिदर्श का निर्धारण (कि. का अवलोकन ?)

ग. अवलोकन क्षेत्र (व्यक्ति का अथवा समूह का ?)

घ. अवलोकन के लिए समय का निश्चिय ।

ङ. अवलोकन के लिए उपकरणों का निश्चय ।

च. विशेष परिस्थितियों का निश्चय जिनकी व्यवस्था करनी है ।

छ. अवलोकन के लिए आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था ।

2. व्यवस्थित संचालन

इसके लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है समुचित परिस्थितियों का निर्माण।

क. समुचित परिस्थितियों का निर्माण ।

ख. विशेष क्रिया के विशेष पक्ष पर ध्यान का केन्द्रीकरण ।

ग. प्रत्यक्ष निरीक्षण तथा अनेक बार निरीक्षण ।

घ. लेखन उपकरण का उचित उपयोग ।

ङ. बाधारहित वातावरण में सजग अवलोकन उत्तम रहेगा ।

3. समुचित लेखन

यह लेखन अवलोकन के साथ-साथ भी हो सकता है तथा बाद में भी । साथ-साथ अवलोकन करना अच्छा रहता है क्योंकि बाद में अनेक बातें भूल जाते हैं ।

4. वैज्ञानिक विश्लेषण

अवलोकित सामग्री का सारणीकरण व्यवस्थापन तथा विश्लेषण वैज्ञानिक रूप में करके ही उचित फल प्राप्त कर सकते हैं ।

9.6.4 अवलोकन के प्रकार

अवलोकन दो प्रकार का होता है:

1. प्रत्यक्ष अवलोकन

यह दो प्रकार का होता है:

क. सहभागिक अवलोकन ख. असहभागिक अवलोकन

क. सहभागिक अवलोकन

विस्तृत सूचनाओं की प्राप्ति इस विधि से संभव है इसमें सामुदायिक व्यवहार का प्रत्यक्ष एवं स्वाभाविक ज्ञान होता है तथा यह विधि अल्प व्यय से साध्य है ।

इसके द्वारा उन गहन सूचनाओं को भी प्राप्त किया जा सकता है । जो अन्य विधि से संभव नहीं है ।

ख. असहमागिक अवलोकन

इसमें अवलोकनकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह के मध्य केवल उपस्थित रहता है । किन्तु समुदाय के क्रिया कलाप में भाग नहीं लेता । इसका प्रयोग बच्चों शिशुओं तथा असामान्य व्यक्तियों के अध्ययन में किया जाता है । अवलोकनकर्ता ऐसे स्थानों का निरीक्षण करता है जिससे समूह प्रभावित न हो सके ।

अवलोकनकर्ता अवलोकन का वर्गीकरण नियमित तथा अनियमित अवलोकन के रूप में भी करते हैं । परिस्थितियों का निर्माण कर वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक उपकरण की सहायता से अवलोकन एवं लेखन करते जाते है ।

9.7 साक्षात्कार (Interview)

साक्षात्कार शैक्षिक अथवा मनोवैज्ञानिक स्तर पर सम्पन्न की गयी वह प्रक्रिया हैं, जिसमें दो अपरिचित एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं । गुड तथा हैट ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है कि विश्वसनीयता तथा विस्तार को तब तक नहीं पाया जा सकता जब तक कि मस्तिष्क में यह स्पष्ट न हो जाये कि साक्षात्कार अनुसंधान की कोई पृथक प्रणाली नहीं है । अपितु आँकडें प्राप्त करने का एक प्रमुख पूर्ण उपकरण है, जो अन्य उपकरणों का पूरक है ।

जॉन डब्ल्यू वैस्ट के अनुसार - "साक्षात्कार एक प्रकार से एक मौखिक प्रकार की प्रश्नावली है । इसके अन्तर्गत उत्तर लिखने के बजाय आमने-सामने की स्थिति में विषयी मौखिक उत्तर देता है ।"

9.7.1 साक्षात्कार की श्रेष्ठता के कारण

1. लोग लिखने की अपेक्षा बात करना अधिक पसन्द करते हैं ।
2. साक्षात्कार में मित्रवत् व्यवहार कर गोपनीय सूचना भी प्राप्त की जा सकती है ।
3. यदि विषयी ने किसी प्रश्न का गलत अर्थ लगा लिया है तो साक्षात्कारकर्ता पूरक प्रश्न द्वारा स्पष्टीकरण कर सकता है ।
4. साक्षात्कार के द्वारा बच्चों, अशिक्षितों, भाषा की कम क्षमता रखने वाले तथा कम बुद्धि वालों से भी सूचना प्राप्त कर सकते हैं ।
5. साक्षात्कार से प्राप्त सूचना विश्वसनीय, वैध, वस्तुनिष्ठ तथा अनुसंधान के लिऐ उपयोगी होती है ।

9.7.2 साक्षात्कार की सीमायें

साक्षात्कार की निम्नलिखित सीमायें हैं:

1. साक्षात्कार में अनुसंधानकर्ता को विषयी की मौखिक रिपोर्ट पर बहुत अधिक आश्रित रहना पडता है ।
2. बोलने में कठिनाई आदि होने पर सूचनायें प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है ।
3. विषयी जानबूझ कर कुछ सूचनायें छिपा सकता है ।
4. विषयी के पक्षपातपूर्ण विचार से भी ठीक सूचना नहीं मिलेगी ।
5. साक्षात्कार में विषयी की स्मरणशक्ति पर निर्भर रहना पड़ता है ।

6. साक्षात्कारकर्ता का व्यवहार उसकी अभिवृत्ति तथा उपस्थिति भी उत्तर देने में बाधा डालती है ।

9.7.3 साक्षात्कार के प्रकार

साक्षात्कार अनेक प्रकार का हो सकता है । इसका वर्गीकरण निम्नवत् है:

I. उपयोगानुसार (According to Function)

इसके तीन भाग हैं:-

अ. निदानात्मक (diagnostic)

ब. उपचार (Treatment)

स. अनुसंधान (Research)

II. भाग लेने वाले के अनुसार (According to Participant)

(क) व्यक्तिगत (Individual)

(ख) सामूहिक (Group)

III. सम्पर्क की अवधि के अनुसार -(According to lenth of contact)

क. अल्पकालीन सम्पर्क (Short Contact)

ख. दीर्घकालीन सम्पर्क (Plolonged contact)

IV. साक्षात्कारकर्ता और विषयी के सम्बन्ध में अत: क्रिया के अनुसार इसको स्पष्ट कर सकते है :

(क) अनिर्देशित साक्षात्कार

इसमें प्राय: प्रत्यक्ष एवं पूर्ण निर्धारित प्रश्नों का उपयोग नहीं किया जाता है । सामान्य वार्तालाप के माध्यम से सूचनादाता को अपनी सूक्ष्म अनुमिति को प्रकट करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है ।

(ख) केन्द्रित साक्षात्कार

इसको गहन साक्षात्कार भी कहते हैं । इसका उद्देश्य परिकल्पना के उस औचित्य का परीक्षण करना होता है । जिसकी प्रतिस्थापना मानव व्यवहार की पूर्ण विश्लेषित व्यवस्था के आधार पर हुई हो । इसके अन्तर्गत प्रेरणा के स्रोत तथा अन्य गहन बातों पर ध्यान केन्द्रित होता है ।

(ग) पुनरावृत्ति साक्षात्कार

इसका प्रयोग उन प्रगतिशील कार्य तथा दृष्टिकोणों के अध्ययन हेतु किया जाता है । जो किसी मनुष्य के किसी व्यवहार विशेष को निर्धारित करते हैं । इसकी सहायता से प्रगतिशील क्रियाओं तथा घटनाओं का अध्ययन सरलता से किया जाता है तथा यह विश्वसनीयता निश्चित करते हैं ।

9.7.4 साक्षात्कार के विभिन्न स्तर पर महत्वपूर्ण बातें

1. साक्षात्कार के पूर्व तैयारी

साक्षात्कार से पूर्व साक्षात्कार का क्षेत्र, उद्देश्य का निर्धारण, सूचनायें जो प्राप्त करनी हैं, साक्षात्कार का प्रकार तथा साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं की लेखन विधि आदि को पूर्व में ही निश्चित कर लेना चाहिए ।

2. अनुकूल अवसर तथा उपयुक्त स्थान

साक्षात्कार के लिए उपयुक्त स्थान एवं अनुकूल अवसर का सटीक चुनाव साक्षात्कार की सफलता की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक होता है ।

3. पारस्परिक परिचय

साक्षात्कार के लिए आने के बाद सबसे पहला कार्य सुदृढ़ आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने के लिए पारस्परिक परिचय कर लेना चाहिए ।

4. साक्षात्कार का संचालन

सारी व्यवस्था हो जाने पर आत्मीय सम्बन्ध हो जाने के बाद साक्षात्कार प्रारम्भ होगा । साक्षात्कार के लिए प्रश्न करने में निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक 'है :

1. प्रश्नक्रम वृहद् न हो ।
2. प्रश्न सरल तथा स्पष्ट हों ।
3. भावात्मक प्रश्नों से बचना चाहिए ।
4. यदि उत्तरदाता मूलविषय से हटकर साक्षात्कारकर्ता को दूर ले जाये तो ऐसी स्थिति में उसे सावधान रहकर उद्देश्य पर ही ध्यान केन्द्रित करना होगा ।

5. उत्तर लेखन तथा विश्लेषण

उत्तर लेखन की सबसे महत्वपूर्ण विधि टेपरिकॉर्डर में सम्पूर्ण वार्तालाप को रिकार्ड कर लेना हैं किन्तु यदि टेपरिकॉर्ड उपलब्ध न हो तो इसे दो प्रकार से लिख लेते हैं.

क. साक्षात्कार के साथ-साथ लिखते जायें ।

ख. साक्षात्कार की समाप्ति के बाद लिख लें ।

9.7.5 साक्षात्कार की समाप्ति

अन्त में धन्यवाद के दो शब्दों के साथ प्रसन्नतापूर्ण वातावरण में साक्षात्कार समाप्त कर देना चाहिए ।

9.8 अभिलेखों के प्रकार एवं उपयोग (Types and use of Documents)

वह सामग्री जिसे अनुसंधानकर्ता दूसरों के प्रयोग अथवा अनुसंधान से प्राप्त कर लेता है । यह सामग्री स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा प्राप्त नहीं की जाती अपितु अन्य स्रोतों से प्राप्त होती है । इस प्रकार के आँकड़े का एक बार साँख्यिकीय विश्लेषण हो चुका होता है तथा उससे कुछ निष्कर्ष निकाले जा चुके होते हैं ।

अप्रत्यक्ष एवं लिखित सामग्री के रूप में अभिलेख का महत्वपूर्ण स्थान है । इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास सम्बन्धी जानकारी विद्‌यमान होती है । दूसरे शब्दो में एक अभिलेख व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास की प्रकृति को स्पष्ट करता है ।

9.8.1 अभिलेखों के प्रकार

अभिलेख निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं:

1. व्यक्तिगत पत्र (Personal Letters)

2. जीवनवृत (Life Histories)
3. दैनन्दिनी (Diaries)

1. व्यक्तिगत पत्र (Personal Letters)

भावपूर्ण अभिलेखों में व्यक्तिगत पत्रों का प्रमुख स्थान है। इनके द्वारा व्यक्ति की आन्तरिक भावनाओं को सरलता से ज्ञात किया जा सकता है।

2. जीवनवृत (Life Histories)

इस प्रकार के अभिलेखों का प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ताओं द्वारा किया जाता है।

3. दैनन्दिनी (Diaries)

इनके द्वारा व्यक्ति उन सभी गुप्त सूचनाओं को प्राप्त करते हैं जिन्हें वह स्वयं किसी के समक्ष प्रकट नहीं करता, किन्तु शोधकार्य की दृष्टि से वे अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं। उपर्युक्त स्रोतों का उपयोग करने में अनुसंधानकर्ता को अत्यधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है। अन्यथा वह धोखे में पड़ सकता है।

9.8.2 अभिलेखों की उपयोगिता

अभिलेखों के अन्तर्गत न्यायालय के अभिलेख, विभिन्न आयोगों की कार्यवाही, समाचारपत्रों में लेख आदि आते हैं। अभिलेखों की सामग्री प्रकाशित एवं अप्रकाशित दोनों प्रकार की हो सकती है। प्रकाशित सामग्री में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों के प्रकाशन, आयोगों एवं समितियों के प्रतिवेदन, अनुसंधान संस्थाओं के प्रकाशन, व्यक्तिगत अनुसंधानकर्ताओं के प्रकाशन, अनुसंधान लेख आदि उल्लेखनीय हैं उन अप्रकाशित सामग्री के अन्तर्गत सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थागत अथवा व्यक्तिगत रूप में किये गये कार्य और उनके संकलन प्रमुख हैं।

इसके अतिरिक्त अभिलेखों की उपयोगिता अनेक प्रकार से होती हैं। जैसे:

1. प्रमाणिक आँकड़ों का संग्रह करने में।
2. सूचनायें प्रदान करने वाले व्यक्तियों को ज्ञान प्राप्त करने में।
3. उपयोगी सामग्री का मूल्यांकन करने में।
4. उद्देश्यपूर्ण सामग्री का संग्रह करने में।

बोध प्रश्न- 2

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें।

1. साक्षात्कार का अर्थ बताइये ?

   ....

   ....

2. साक्षात्कार के प्रकार कौन-कौन से हैं ?

   ....

   ....

3. अभिलेखों के प्रकार बताइयें ?

   ....

……………………………………………………………………………

4. निर्धारण मापनी क्या है ?

……………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………

9.9 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में शोध उपकरण एवं प्रविधियों की विस्तार से जानकारी दी गयी है । शोध के विभिन्न उपकरणों- प्रश्नावली, अनुसूची, निर्धारण मापनी, अवलोकन, साक्षात्कार आदि के बारे में विस्तार से चर्चा की गयी है साथ ही अभिलेखों के प्रकार एवं उपयोग पर प्रकाश डाला गया है ।

9.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question)

1. अनुसंधान के उपकरण से क्या तात्पर्य है ? उपकरणों के चयन में किन-किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है ?
2. प्रश्नावली क्या है ? इसके गुण तथा दोषों की विवेचना कीजिए ।
3. अनुसूची से आप क्या समझते हैं ? प्रश्नावली व अनुसूची में क्या अन्तर है ? आप इन दोनों में से किसे श्रेष्ठ समझते हैं ? और क्यों?
4. अवलोकन के महत्व, विधि तथा सीमाओं की व्याख्या कीजिये ? अच्छे अवलोकन की क्या विशेषतायें हैं?
5. साक्षात्कार एक प्रकार की मौखिक प्रश्नावली है, इस कथन की समीक्षा कीजिए तथा साक्षात्कार में किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

9.11 प्रमुख शब्द (Key Words)

प्रश्नावली (Questionnaire)	:	प्रश्नावली किसी निश्चित विषय पर किये जाने वाले प्रश्नों का एक ऐसा सैट है, जिसके माध्यम से अकेले में, समूह में, एक साथ, व्यक्तिगत रूप से मिलकर अथवा डाक से भेजकर उत्तरदाता से लिखित में तथ्यात्मक सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं।
अनुसूची (Schedule)	:	अनुसूची संक्षिप्त प्रश्नों की रचना है जिसे सामान्यत: सर्वेक्षणकर्ता स्वयं रखता है और अपने अन्वेक्षण में अग्रसर होने के साथ साथ भरता जाता है ।
निर्धारण पनी (Rating Scale)	:	निर्धारण मापनी किसी चर की श्रेणी, उसकी गहनता, उसका महत्व अथवा बारम्बारता को निश्चित करती है ।
साक्षात्कार (Interview)	:	यह एक प्रकार से मौखिक प्रकार की प्रश्नावली है इसके अन्तर्गत उत्तर लिखो की बजाय आमने-सामने की स्थिति में विषयी मौखिक उत्तर देता है ।

9.12 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रन्थसूची (References and Further Readings)

1. गोविन्द, शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, 1989 ।
2. पारसनाथराम एवं चाँद भटनागर, अनुसंधान परिचय, आगरा : लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 1988 ।
3. Best, J.W., Research in education, New Delhi : Prencice Hall of India(Pvt) Ltd., 1987 ।
4. Abdel Baset I.M.Masouneh, Research methodology, Jaipur : Sublime Publications, 2003.
5. Fred. N. Kerlinger, Foundation of behavioral research, Delhi : Surjeet Publications, 2002.
6. Kothari, C.R., Research methodology : Methods and techniques, New Delhi : Wishwa Prakashan, 2001.

इकाई- 10

आँकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन
Analysis and Interpretation of Data

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन हेतु अपेक्षित कार्य
10.3 विश्लेषण के प्रकार
10.3.1 गुणात्मक विश्लेषण
10.3.2 परिमाणात्मक विश्लेषण
10.4 सांख्यिकी विश्लेषण के अन्तर्गत मापों के प्रकार
10.4.1 सांकेतिक माप
10.4.2 क्रमसूचक माप
10.4.3 अन्तराल माप
10.4.4 अनुपात माप
10.5 आँकड़ों का संगठन एवं सारणीयन
10.6 आँकड़ों का बिन्दुरेखीय प्रदर्शन
10.7 बिन्दुरेखीय प्रदर्शन की विधियाँ
10.8 वर्णनात्मक सांख्यिकी द्वारा आँकड़ों का विश्लेषण
10.9 अनुमानपरक सांख्यिकी द्वारा आँकड़ों का विश्लेषण
10.10 सारांश
10.11 अभ्यासार्थ प्रश्न
10.12 प्रमुख शब्द
10.13 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

10.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के उद्देश्य निम्न हैं :

1. आँकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन का आशय स्पष्ट करना ।
2. विभिन्न प्रकार के विश्लेषणों से अवगत करवाना ।
3. सांख्यिकीय विश्लेषण में मापों के प्रकार से अवगत कराना ।
4. अनुमानपरक सांख्यिकी द्वारा आँकडों के विश्लेषण को समझाना ।

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

शोधार्थी द्वारा शोध समस्या का चयन, शोध विधि का चयन, परिकल्पना प्रतिपादन और शोध के लिए प्राथमिक आँकड़ों के संकलन के अनन्तर इन आँकडों का विश्लेषण एवं निर्वचन का कार्य किया जाता है क्योंकि मात्र आंकड़ें एवं साक्ष्य एकत्रित कर लेने से किसी समस्या समाधान की दिशा में नहीं बढ़ा जा सकता है । शोध में निष्कर्षो तक पहुंचने के लिए शोधार्थी अपने द्वारा संगृहीत किए गए आँकड़ों और तथ्यों का विश्लेषण करता है । इस प्रक्रिया में अव्यवस्थित आँकड़ों को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया जाता है जिससे उनका अर्थपूर्ण निर्वचन किया जा सके । आँकड़ों का निर्वचन गुणात्मक अथवा परिमाणात्मक अथवा दोनों ही प्रकार में किया जा सकता है । इस इकाई में आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन हेतु अपेक्षित कार्य, विश्लेषण के प्रकार, सांख्यिकी विश्लेषण के अन्तर्गत मापों के प्रकार एवं आँकड़ों का संगठन एवं सारणीयन आदि की विस्तार से चर्चा की गई है ।

10.2 आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन हेतु अपेक्षित कार्य (Work Expected for Data Analysis and Interpretation)

आँकड़ों की प्रकृति के अनुसार इनका विश्लेषण एवं निर्वचन करने से पहले शोधकर्ता को अधोलिखित पांच कार्य करने चाहिए :

1. **आँकड़ों को व्यवस्थित करना**

   इसमें शोध के लिए आवश्यक जो आंकड़ें या साक्ष्य संकलित किए जाते हैं, वे अपने मौलिक स्वरूप में अव्यवस्थित, असम्बद्ध और अधिक अर्थपूर्ण नहीं होते हैं । उन्हें संबंधित और अधिक अर्थपूर्ण बनाने के लिए किसी विशिष्ट क्रम और व्यवस्था के अनुसार व्यवस्थित करना पहला कार्य है ।

2. **व्यवस्थित आँकड़ों की शोध उद्देश्यों के साथ सुसंगति का आकलन**

   व्यवस्थित आँकड़ों को अनुसंधान के उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए सुसंगति का मूल्यांकन करना चाहिए, जिससे यह ज्ञात होता है कि वे किस सीमा तक उपयुक्तता और पर्याप्तता के मानदण्डों को सन्तुष्ट करते हैं ।

3. **आँकड़ों की प्रमुख विशेषताओं की पहचान करना**

   आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन से पूर्व आँकड़ों की प्रमुख विशेषताओं की पहचान करना आवश्यक है ।

4. **आँकड़ों की प्रमुख विशेषताओं के मध्य संबंधों का निर्धारण**

   इसके अन्तर्गत शोधार्थी आँकड़ों की प्रमुख विशेषताओं के मध्य सम्बंधों का निर्धारण करता है और उन्हें एक न्याय संगत क्रम में व्यवस्थित करता है ।

5. **आँकड़ों को विश्लेषण के उद्देश्य, के लिए शीर्षक और उप-शीर्षकों में प्रस्तुत करना** इस पांचवें चरण में शोधार्थी विश्लेषण के उद्देश्य के लिए आँकडों को शीर्षकों और उप-शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत करता है ।

10.3 विश्लेषण के प्रकार (Types of Analysis)

अनुसंधान के अन्तर्गत प्राय: दो प्रकार के विश्लेषण प्रयुक्त होते हैं । ये निम्नलिखित हैं

10.3.1 गुणात्मक विश्लेषण

10.3.2 परिमाणात्मक विश्लेषण

10.3.1 गुणात्मक विश्लेषण (Qualitative Analysis)

गुणात्मक विश्लेषण का अनुप्रयोग ऐसे आँकड़ों के लिए किया जाता है जो वाचिक साक्षात्कार, प्रेषण, व्यष्टि अध्ययनों के द्वारा एकत्रित किए जाते हैं ।

गुणात्मक विश्लेषण के स्वरूप (Form of Qualitative Analysis)

इसे तीन ढंग से प्राय: प्रयोग में लाया जाता है

1. आणविक विश्लेषण (Molecular Analysis)

इसमें आँकड़ों के मुख्य पक्षों को अलग-अलग विचार इकाईयों, तथ्यों एवं सम्प्रत्ययों में विभाजित कर उनके स्वरूपों एवं अर्थो का निर्धारण किया जाता है ।

2. वैचारिक विश्लेषण (Conceptual Analysis)

इसमें विश्लेषण एवं संश्लेषण दोनों ही पक्षों को महत्व दिया जाता है ।

गुणात्मक विश्लेषण में अपेक्षित सावधानियाँ

गुणात्मक विश्लेषण करते समय शोधार्थी को अधोलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए :

1. गुणात्मक विश्लेषण का मुख्य आधार तर्क की औपचारिक विधि से स्पष्टत: समर्थित होना चाहिए जिससे कि इसमें तार्किक दोषों का समावेश न हो सके ।
2. गुणात्मक विश्लेषण के अन्तर्गत शीर्षकों, उपशीर्षकों और उनके अन्तर्गत शामिल किए जाने वाले प्रमुख बिन्दुओं को स्पष्ट रूप से अंकित कर लेना चाहिए ।
3. आँकड़ों की विशिष्टता को ध्यान में रखते हुए गुणात्मक विश्लेषण में सूक्ष्मता एवं गहनता के अपेक्षित स्तर को सुनिश्चित कर लेना चाहिए ।
4. गुणात्मक विश्लेषण के तहत प्रयुक्त शब्दों, सम्प्रत्ययों एवं अनुच्छेदों में अर्थ की दृष्टि से किसी भी प्रकार की द्वयर्थता/द्वय अर्थता नहीं रहनी चाहिए ।
5. शोध की समस्या, उसके उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं एवं गुणात्मक विश्लेषण के अनुक्षेत्रों एवं विषय वस्तु का यथार्थपूर्ण विश्लेषण शोधकर्ता की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी होती है । इसमें किसी भी प्रकार की विसंगति शोध की गुणवत्ता पर प्रश्न चिन्ह लगा सकती है ।

10.3.2 परिमाणात्मक विश्लेषण (Quantitative Analysis)

शैक्षणिक अनुसंधानों में परिमाणात्मक विश्लेषण प्राय: दो रूपों में होता है. एक आवृत्ति गणना और दूसरा प्राचलिक परीक्षण ।

1. आवृत्ति गणना (Frequency Count)

आवृत्ति गणना में किसी घटना या दृश्य की आवृति का लेखा जोखा रखा जाता है अथवा गणना की जाती है । इसमें सांख्यिकीय विधियों जैसे अनुपात, प्रतिशत अथवा अन्य गणितीय सूत्रों की सहायता से आँकड़ों का विश्लेषण किया जाता है ।

2. प्राचलिक परीक्षण (Parametric Tests)

इसमें आँकडों को वर्णनात्मक एवं अनुमानपरक सांख्यिकी की सहायता से समझने एवं स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है ।

10.4 सांख्यिकी विश्लेषण के अन्तर्गत मापों के प्रकार (Types of Measures in Statistical Analysis)

सांख्यिकी विश्लेषण के लिए निम्न मापों का अनुप्रयोग किया जाता है उन्हें सामान्यत: चार वर्गों में रख सकते हैं जिनका वर्णन इस प्रकार है :

10.4.1 सांकेतिक माप (Nominal Measures)

यह निम्न स्तरीय मापन है जिसमें केवल 'समानता' एवं 'अन्तर' के आधार पर कथन दिए जाते हैं अर्थात् इसमें यह कहना सम्भव है कि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति से किसी गुण विशेष की दृष्टि से किस प्रकार समानता एवं भिन्नता रखता है । यह समानता लिंग, प्रजाति, उत्पत्ति आदि के आधार पर हो सकती है ।

10.4.2 क्रमसूचक माप (Ordinal Measures)

इस प्रकार के माप ऐसे गुणों के परिसूचक होते हैं जिनके द्वारा समूह के सदस्यों में केवल समानता एवं अन्तर के आधार पर ही नहीं अपितु उन्हें एक विशेष क्रम में भी कम से अधिक या अधिक से कम की ओर व्यवस्थित किया जाना सम्भव होता है जैसे योग्यता सूची में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय।

10.4.3 अन्तराल माप (Interval Measures)

ऐसे मापों में समानता एवं अन्तर तथा कम या अधिक के अतिरिक्त अन्तरालों की समानता के आधार पर कथन प्रस्तुत किए जाते हैं । इनमें वास्तविक शून्य की अपेक्षा यादृच्छिक (मनमाना) शून्य उपकल्पित होता है । उदाहरण के लिए भौतिक विज्ञानों में फारेनहाइट या सेंटीग्रेट में अभिव्यक्त तापक्रम ।

10.4.4 अनुपात माप (Ratio Measures)

इसके तहत अनुपातों की समानता के अलावा उपरिवर्णित तीनों प्रकार के मापों में जिस प्रकार के कथन सम्भव हैं उस प्रकार के दिए जा सकते हैं । ऐसे माप निरपेक्ष शून्य (absolute Zero) को उपरिकल्पित् करते हैं । उदाहरण के लिए दीर्घता, वजन तथा स्वराघात एवं प्रबलता के मापन के लिए प्रयुक्त मापनी द्वारा ज्ञात माप ।

बोध प्रश्न- 1

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. आँकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन हेतु अपेक्षित कार्य बताइए ।

   ....

   ....

2. विश्लेषण के प्रकार बताइये ।

   ....

....

3. गुणात्मक विश्लेषण करते समय क्या-क्या सावधानियाँ बरतनी चाहिये ।

....

....

4. सांख्यिकी विश्लेषण के अन्तर्गत मापों के प्रकार बताइये ।

....

....

10.5 आँकड़ों का संगठन एवं सारणीयन (Organisation and Tabulation)

शोध के दौरान मूल रूप से संकलित अव्यवस्थित आँकड़ों को प्राय: आवृति वितरण तालिकाओं एवं बिन्दुरेखीय प्रदर्शनों के माध्यम से संगठित किया जाता है । इन माध्यमों से आंकड़ें और तथ्य अपेक्षाकृत अधिक अर्थ पूर्ण और बोधगम्य बन जाते हैं जिनसे उनकी व्याख्या और विश्लेषण में सहायता मिलती है ।

10.5.1 क्रम एवं आवृत्ति वितरण तालिका (Rank and Frequency Distribution Table)

आँकड़ों के रूप में अव्यवस्थित मूल प्राप्तांकों को आरोही या अवरोही क्रम में रखा जाता है । इसे पंक्ति या क्रम वितरण भी कहते हैं । इन प्राप्तांकों को उनकी आवृति के अनुसार गणना करके प्रत्येक प्राप्तांकों के अन्तराल में उनकी आवृतियों की गणना की जाती है और उन्हें एक तालिका के रूप में प्रस्तुत किया जाता है तो इसे आवृत्ति वितरण तालिका (Rank and Frequency Distribution Table) की संज्ञा दी जाती है । अनेकश: शोधार्थी द्वारा यह संचयी आवृति (Commulative Frequency) एवं संचयी आवृति प्रतिशत (Commulative Frequency Percentage) के रूप में भी बनाई जाती है । तालिका 101 में इसका प्रारूप दिया गया है :

तालिका-10.1 पाठकों की शैक्षणिक स्थिति

क्रस्तर .	**आवृत्ति**	**सापेक्ष आवृत्ति (प्रतिशत)**
1. स्नातक	80	61.06
2. स्नातकोत्तर	28	21.37
3. एम.फिल.	16	12.21
4. पी.एच-डी .	6	4.58
5. डी.लिट.	1	0.76
योग	**131**	**99.98 (100%)**

10.6 आँकड़ों का बिन्दुरेखीय प्रदर्शन (Graphical Representation of Data)

शोध में आँकड़ों को कई तरह से प्रस्तुत कर सकते हैं। आँकड़ों का बिन्दुरेखीय प्रदर्शन महत्वपूर्ण तथ्यों को सहज और सरलता से दिखा सकता है। वस्तुत: यह एक ध्यानाकर्षक प्रविधि के साथ-साथ प्राप्त परिणामों को स्पष्ट, सरल, बोधगम्य एवं सजीव बनाने की दृष्टि से प्रभावी एवं मितव्ययी विधि है। रेखा चित्र, जटिल एवं नीरस विषय वस्तु को भी सरल एवं सजीव बना देते हैं। रेखाचित्रों की सहायता से जटिल विषयों को भी आसान रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

लाभ

1. यह सह-सम्बंधों को बताती है।
2. यह भविष्य का अनुमान लगाने में सहायता करती है।
3. दो या अधिक चरों अथवा परिस्थितियों की तुलना करने में सहायक है।
4. जटिल बातों को आसानी से समझाया जा सकता है।
5. अध्येताओं के लिए सुगम होती है।

10.7 बिन्दुरेखीय प्रदर्शन की विधियां (Methods of Graphical Representation)

बिन्दुरेखीय प्रदर्शन के लिए शोधार्थी स्वयं या कम्प्यूटर में एमएस एक्सेल के सहायता से अपने द्वारा संकलित डेटा का ग्राफीय प्रस्तुतीकरण कर सकता है। इसके लिए Chart Wizard का उपयोग कर सकता है। एमएस एक्सेल में यह अच्छी सुविधा है कि आँकड़ों का इनपुट करने पर वह तुरन्त ही किसी भी प्रकार का चार्ट अथवा ग्राफ का प्रदर्शन कर देता है। इसमें विभिन्न प्रकार के चार्ट इस प्रकार हैं :

- Columm
- Bar
- Line
- Pie
- XY (Scatter)
- Area
- Doughnut
- Lader
- Surface
- Bubble
- Stock
- -Cylinder
- Cone

– Pyramid

इनमें से कुछ का वर्णन निम्न प्रकार है :

10.7.1 रेखाचित्र (Line Graph)

इसे बनाना और प्रस्तुत करना आसान है । देखिए रेखाचित्र 10.1 इसमें पाठकों की शैक्षणिक स्थिति को रेखाचित्र में प्रदर्शित किया गया है ।

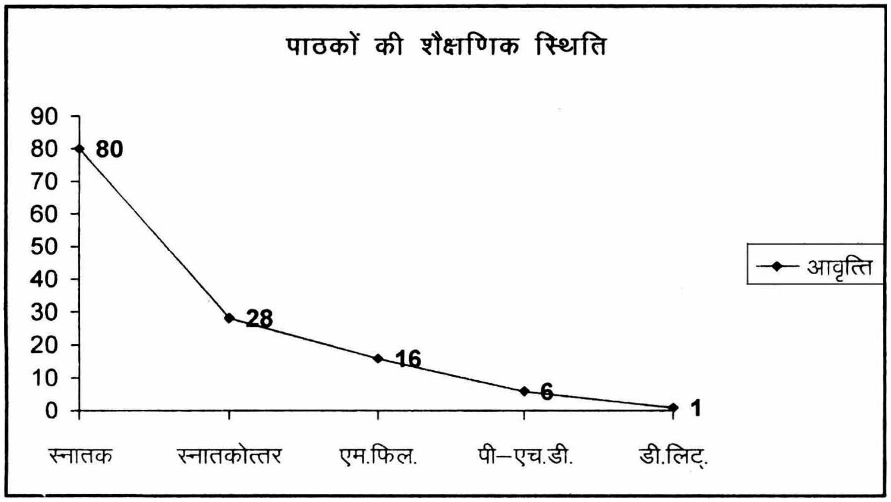

रेखाचित्र-10.1

10.7.2. वृत्त ग्राफ (Circle Graph or Pie Daigram)

इस तरह के डायग्राम का उपयोग ऐसे आँकड़ों को प्रदर्शित करने के किया जाता है जहाँ किसी सूचना को प्रतिशत के रूप में प्रदर्शित किया गया है । इसकी निर्माण विधि सरल चूंकि वृत्त 360 डिग्री का होता है । अत: प्रतिशत के रूप में पूरा वृत्त 100 के बराबर माना जाऐगा । उदाहरण देखिए रेखाचित्र 10.2

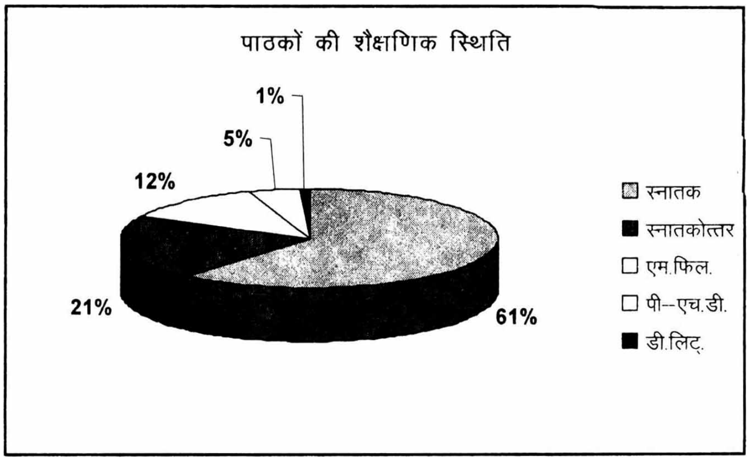

रेखाचित्र-10.2

10.7.3 बार आरेख (Column Chart)

बार के माध्यम से भी आँकड़ों को प्रदर्शित किया जाता है । इसमें बार से आशय पट्टी अथवा धारी से है । इसमें धारियां चरों के मूल्य के अनुपात में क्षैतिजिक (Horizontal) खींची जाती है । इसमें ध्यान यह रखना चाहिए कि बारों की चौड़ाई समान हो । कम्प्यूटर की सहायता से यह बहुत आसान हो जाता है । देखिए रेखाचित्र 10.3

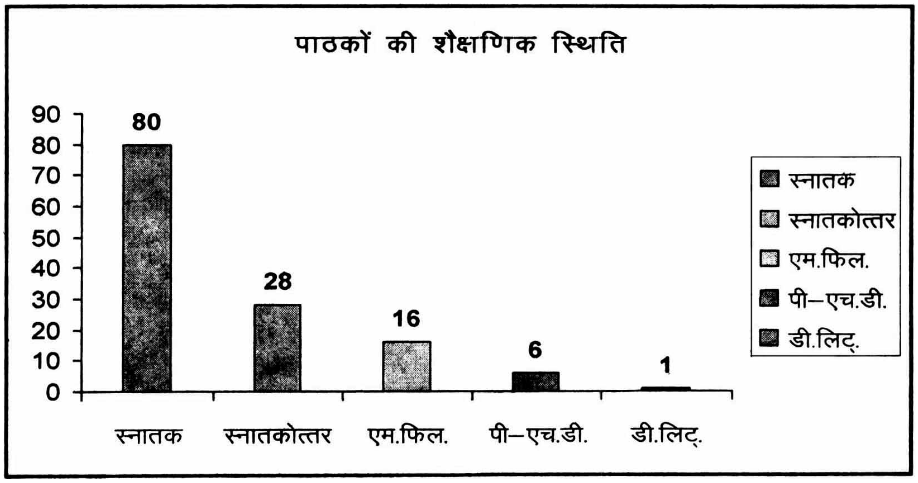

रेखाचित्र-10.3

10.8 वर्णनात्मक सांख्यिकी द्वारा आँकड़ों का विश्लेषण (Analysis of Data Through Descriptive Statistics)

वर्णनात्मक सांख्यिकी का उपयोग प्राय: प्रतिदर्शन द्वारा प्राप्त आँकड़ों और उसके द्वारा प्रस्तुत आवृत्ति विश्लेषणों हेतु किया जाता है । सांख्यिकीविदों ने आवृत्ति वितरण के पांच महत्वपूर्ण तत्वों का उल्लेख किया है । ये अधोलिखित हैं :

1. केन्द्रीय प्रवृत्ति या स्थिति (Central Tendency or Location)
2. सापेक्ष स्थान (Relative Position)
3. विचरणशीलता (Variability)
4. वैषम्य (Skewness)
5. वक्रता मात्रा (kurtosis)

1. केन्द्रीय प्रवृत्ति या स्थिति

केन्द्रीय प्रवृत्ति चर के उस मान का परिसूचक है जो आवृत्ति वितरण के केन्द्र के पास स्थित हो । यह मध्य बिन्दु होता है । केन्द्रीय प्रवृत्ति के प्रमापों को औसत (Average) के मान से भी पुकारा जाता है और ये प्रमुख रूप से पांच प्रकार के हैं :

(क) माध्य (Mean)

(ख) मध्यका (Median)

(ग) बहुलक (Mode)

(घ) गुणोत्तर माध्य (Geometric Mean)

(ङ) हरात्मक माध्य (Harmonic Mean)

2. सापेक्षिक स्थान

सापेक्षिक स्थान का तात्पर्य अंकों के वितरण के तहत उस बिन्दु से होता है जिसके नीचे कुछ सदस्य होते हैं । सापेक्षित स्थान के प्रमापों में मुख्य हैं : शतांश मान (Centiles) शतांश अनुपस्थितिया दशांश मान एवं चतुर्थांश मान ।

3. विचरणशीलता या विचलन

विचरणशीलता या विचलन का अर्थ है - केन्द्रवर्ती मान के इर्द-गिर्द प्राप्तांकों के गुच्छीकरण की मात्रा । यदि किसी समूह के प्राप्तांकों में से अधिकांश केन्द्रवर्ती मान के आसपास गुच्छ बनाये हुए हों तो विचलन या विचरणशीलता की मात्रा कम होगी । केन्द्रवर्ती मान से इन प्राप्तांकों की जितनी दूरी होती है, विचलन मान उतना ही अधिक होगा । इसके चार प्रमाप मुख्य हैं : विस्तार चतुर्थांश विचलन मान, मध्यमान विचलन तथा प्रामाणिक विचलन मान ।

4. वैषम्य

वैषम्य से आवृत्ति वितरण में विद्यमान सममिति या असममिति की सूचना मिलती है । जब कोई वितरण असममिति से ग्रस्त हो तथा अधिकांश आवृत्तियां स्केल के निचले छोर पर केन्द्रित हों तो इसे धनात्मक वैषम्य या विकृति का नाम दिया जाता है । इसके विपरीत जब अधिकांश आवृतियां स्केल के ऊपरी छोर पर केन्द्रित हो तो इसके ऋणात्मक वैषम्य या विकृति की संज्ञा दी जाती है ।

5. वक्रता मात्रा (Kurtosis)

वक्रता मात्रा (Kurtosis) से तात्पर्य है एक वितरण के तहत दूसरे की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक चपटेपन (Flatness) या कूटता का पाया जाना ।

सह-सम्बन्ध गुणक शोधों के अन्तर्गत दो या दो से अधिक चरों के मध्य सम्बंध निरूपित करने की प्राय: आवश्यकता पड़ती है । इसे सामान्यत: सह-सम्बंध या साहचर्य की संज्ञा दी जाती है । इसकी गणना हमेशा द्विचर आधार सामग्रियों (Bi-Variate data) के मध्य की जाती है । चरों के मध्य सम्बंधों की मात्रा के परिसूचक मान को सह-सम्बंध गुणक (Coefficient of Correlation) कहा जाता है ।

द्विचर आधार सामग्रियों के मध्य पाए जाने वाले सम्बंधों में तीन प्रकार की स्थितियां दृष्टिगोचर हो सकती हैं जो इस प्रकार हैं

1. एक चर में अभिवृद्धि दूसरे चर की समवर्ती अभिवृद्धि के रूप में पाई जा सकती है । इसे सकारात्मक (धनात्मक) सह-सम्बंध का नाम दिया जाता है ।
2. एक चर में अभिवृद्धि दूसरे चर की समवर्ती कमी (घटती) के रूप में अथवा एक चर में कमी (घटती) दूसरे चर की समवर्ती अभिवृद्धि के रूप में देखी जा सकती है । इसे नकारात्मक (ऋणात्मक) सह-सम्बंध कहा जाता है ।
3. एक चर में अभिवृद्धि या कमी दूसरे चर में अभिवृद्धि या कमी के रूप में किसी खास व्यवस्था के अनुसार नहीं पाई जाती । इसे शून्य सह-सम्बंध की संज्ञा दी जाती है ।

10.9 अनुमानपरक सांख्यिकी द्वारा आँकड़ों का विश्लेषण (Analysis of Data Through Interential Statistics)

सांख्यिकीविदों ने ऐसे अनुमानों के बारे में पता लगाने के लिए जिन साख्यिकी विधियों को विकसित किया है, उन्हें अनुमानपरक सांख्यिकी के नाम से पुकारा जाता है । इस प्रकार की सांख्यिकी में निहित तर्काधार यह है कि शोधकर्ता वास्तविक मान या पैरामीटर को प्रत्यक्षत: ज्ञात नहीं कर सकता है परन्तु प्रामाणिकता त्रुटि के माध्यम से इसके बारे में अत्यंत कुशल अनुमान लगा सकता है । प्रामाणिक त्रुटि को प्रतिदर्श वितरण (Sampling Distribution) के प्रामाणिक विचलन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है तथा इसे प्रतिदर्श द्वारा प्राप्त प्रामाणिक विचलन के माध्यम से अनुमानित करना सम्भव है ।

अनुमानपरक सांख्यिकी के तहत 'आवृत्ति वितरण' एवं 'प्रतिदर्श वितरण' की अवधारणाओं में विभेद किया जाता है । 'आवृति वितरण' किसी प्रतिदर्श विशेष के सन्दर्भ में उपलब्ध होता है जबकि 'प्रतिदर्श वितरण' एक ऐसा सैद्धान्तिक वितरण है जिसे समग्र द्वारा चयनित प्रतिदर्शो के जरिए उपकल्पित किया जाता है । इस प्रतिदर्श वितरण के विचलन मान को 'प्रामाणिक त्रुटि' का नाम दिया जाता है तथा इसे किसी सांख्यिकी विशेष द्वारा पैरामीटर के अनुमानित किए जाने सम्बन्धी विश्वसनीयता या सार्थकता का परिसूचक माना जाता है ।

अभी तक वर्णित सांख्यिकी के तहत मध्यमान मध्यांक मान, प्रामाणिक विचलन मान, चतुर्थाश विचलन मान एवं सह-सम्बंध गुणक की प्रामाणिक त्रुटियां ज्ञात की जा सकती हैं तथा उनसे सम्बंधित वास्तविक या पैरामीट्रिक मान को अनुमानिक करने में इनकी मदद ली जा सकती है ।

10.9.1 दो मध्यमानों के बीच अन्तर की सार्थकता का परीक्षण (Testing the Significance of Difference between Two Means)

शैक्षिक शोधों में बहुधा ऐसी परिस्थितियां उपस्थित हो सकती हैं जिसमे शोधकर्ता दो अलग-अलग प्रतिदर्शो या एक ही प्रतिदर्श को दो भिन्न-भिन्न सन्दर्भो में प्रेक्षित कर मध्यमान की गणना कर सकता है । ऐसी दशा में उसे दो मध्यमानों के अन्तरों के मध्य सार्थकता ज्ञात करने की आवश्यकता पड़ सकती है । वह सांख्यिकी जिसकी सहायता से यह सार्थकता परीक्षित होती है उसे 'टी' परीक्षण का नाम दिया गया है ।

'टी' का मान एक क्रान्तिक अनुपात का परिसूचक है जो दोनों मध्यमानों के बीच पाए जाने वाले अन्तरों को उनकी प्रामाणिक त्रुटि से भाग देकर मालूम किया जाता है । 'टी' मान के आधार पर नकारात्मक परिकल्पना (Null HJypothesis) स्वीकृत या अस्वीकृत होती है । 'टी' का मान सार्थक होने की स्थिति में नकारात्मक परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है, जबकि सार्थक न होने पर उसे स्वीकृत कर लिया जाता है तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है कि प्रेक्षित अन्तर संयोगवश है न कि उस चर के परिणामस्वरूप जिसके प्रभाव को मापित करने में शोधकर्ता की दिलचस्पी हो सकती थी ।

यह ध्यान देना होगा कि 'टी' का मान ज्ञान करने के लिए सर्वप्रथम मध्यमानों की प्रमाणिक त्रुटि एवं तदुपरांत मध्यमानों के अन्तरों की प्रामाणिक त्रुटि मालूम करनी पडती है । बडे एवं छोटे तथा

स्वतंत्र एव सम्बंधित समूहों के सन्दर्भ में मध्यमानों के अन्तरों की प्रामाणिक त्रुटि ज्ञात करने की विधियां थोडी भिन्नता रखती हैं तथा इनके लिए जो सूत्र प्रयुक्त होते हैं वे भी भिन्न-भिन्न होते हैं ।

10.9.2 सदिश एवं अदिश परीक्षण (Directional and Non-directional Tests)

जब दो मध्यमानों के अन्तर के सम्बंध में शोधकर्ता धनात्मक या ऋणात्मक किसी दिशा के बारे में अभिकथन नहीं करता तो इसे अदिश परीक्षण (Non-directional Tests) कहा जाता है । इस प्रकार के परीक्षण में अनुसंधानकर्ता को अध्ययन से पूर्व प्रभाव दिशा का आभास नहीं होता है । इसके तहत सामान्य वितरण वक्र के दोनों पुंछों से सम्बंधित सम्भावना को अनुमानित किया जाता है । इसे सांख्यिकी की भाषा में द्वि-पुंछीय परीक्षण (Two-tailed test) की संज्ञा दी जाती है । अधिकांश शैक्षिक शोधों के अन्तर्गत इसी तरह का परीक्षण अपेक्षित होता है ।

सदिश परीक्षण का अनुप्रयोग उस शोध परिस्थिति में किया जाता है । जहाँ शोधकर्ता को अध्ययन से पूर्व प्रभाव दिशा की जानकारी हो । इसके तहत सामान्य वितरण वक्र के केवल एक पुंछ का ही प्रयोग होता है । इसीलिए सांख्यिकी की भाषा में इसे एकल पुंछीय परीक्षण (One-tailed test) के नाम से पुकारा जाता है । शैक्षिक शोधों में इस प्रकार का परीक्षण प्राय: कम ही प्रयुक्त होता है । शोधकर्ता से यह अपेक्षा की जाती है कि आधार सामग्रियों के विश्लेषण की प्रक्रिया में 'टी' का मान ज्ञात कर लेने के बाद स्वातंत्र्य संख्या की सहायता से उसकी सार्थकता सुनिश्चित करें तथा नकारात्मक परिकल्पना के मान्य या अमान्य होने की घोषणा तदनुसार करें ।

10.9.3 त्रुटियों के प्रकार (Types of Error)

नकारात्मक परिकल्पना के सम्बंध में लिए जाने वाले निर्णयों के सन्दर्भ में शोधकर्ता प्राय: दो प्रकार की त्रुटियों का शिकार हो सकता है । ये इस प्रकार हैं :

1. किसी विकल्पात्मक परिकल्पना (H1) को सही मान लेने की त्रुटि जबकि नकारात्मक परिकल्पना (H0) सत्य हो । इसे प्रथम प्रकार की त्रुटि (Type-I Error) कहा जाता है ।
2. नकारात्मक परिकल्पना (H0) को सही मान बैठने की त्रुटि जबकि कोई अन्य विकल्पात्मक परिकल्पना (H1) सत्य हो । इसे द्वितीय प्रकार की त्रुटि (Type-II Error) का नाम दिया जाता है ।

बोध प्रश्न-2

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. बिन्दुरेखीय प्रदर्शन क्या है ?

   ……………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………

2. बिन्दुरेखीय प्रदर्शन की विधियाँ बताइये ।

   ……………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………

3. आँकड़ों को आवृति वितरण तालिकाओं के माध्यम से कैसे संगठित किया जाता है?

   ……………………………………………………………………………………

	....
4.	साख्यिकीविदों ने आवृति वितरण के किन पांच महत्वपूर्ण तत्वों का उल्लेख किया है?
	....
	....

10.10 सारांश (Summary)

शोधार्थी समस्या चयन, परिकल्पना प्रतिपादन और शोध के प्राथमिक आँकड़ों के संकलन के पश्चात् आँकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन करता है । वस्तुत: आँकड़ों का निर्वचन गुणात्मक अथवा परिमाणात्मक दोनों रूपों में किया जा सकता है । इसमें सांख्यिकी विश्लेषण के अन्तर मापों के प्रकार, आँकड़ों का संगठन और सारणीयन, आँकड़ों का बिन्दुरेखीय प्रदर्शन और वर्णनात्मक सांख्यिकी द्वारा आँकड़ों के विश्लेषण पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है । शोधार्थी स्वयं ही अथवा आधुनिक सॉफ्टवेयरों जैसे एमएस एक्सल, एसपीएसएस, मिनिटेब एस प्लस, वीएमडीपी आदि की सहायता से आँकड़ों के सांख्यिकी विश्लेषण का कार्य सरलता एव सहजता से कर सकता है ।

10.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. सांख्यिकी विश्लेषण से आप क्या समझते हैं ? विश्लेषण के प्रकारों को विस्तार से समझाइए।
2. आँकड़ों के संगठन एवं सारणीयन पर एक निबंध लिखिए ।
3. बिन्दुरेखीय प्रदर्शन क्या है ? विभिन्न प्रकार के चार्टो को सोदाहरण समझाइए ।
4. अनुमानपरक सांख्यिकी द्वारा आंकड़ा विश्लेषण को सविस्तार समझाइए ।

10.12 प्रमुख शब्द (Key Words)

आणविक विश्लेषण (Molecular Analysis)	इसमें आँकडों के मुख्य पक्षों को अलग-अलग विचार इकाईयों, तथ्यों एवं सम्प्रत्यों में विभाजित कर उनके स्वरूपों एवं अर्थो का निर्धारण किया जाता है ।
केन्द्रीय प्रवृत्ति (Central Tendency)	केन्द्रीय प्रवृत्ति चर के उस मान का परिसूचक है जो आवृत्ति वितरण के केन्द्र के पास स्थित हो । यह मध्य बिन्दु होता है । केन्द्रीय प्रवृति के प्रमापों को औसत (Average) का मान भी कहते हैं ।
गुणात्मक श्लेषण (Qualitative Analysis)	गुणात्मक विश्लेषण का अनुप्रयोग ऐसे आँकड़ों कें लिए किया जाता है जो वाचिक साक्षात्कार, प्रेषण, व्यष्टि अध्ययनों के द्वारा एकत्रित किए जाते हैं ।

10.13 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Readings)

1. कपूर, जे.एन. एवं सक्सेना, एच.सी., मैथमैटिकल स्टैटिस्टिक्स, नई दिल्ली:एस चांद, 1984।

2. गिलफोर्ड, जे.पी., फण्डामेंटल स्टैटिस्टिक्स इन साइक्लॉजी एण्ड एजूकेशन, मैकग्राहिल बुक कम्पनी, 1982 ।
3. पाण्डेय, के.पी., शैक्षिक अनुसंधान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2006 ।
4. बेस्ट, जॉन डब्ल्यू, रिसर्च इन एजूकेशन, दिल्ली प्रेन्टिस हाल इनकार्पोरेशन, 1993 ।
5. शुक्ला एवं सहाय, बिजनेस स्टैटिस्टिक्स थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, आगरा साहित्य भवन, 2007।

इकाई-11

ग्रंथमिति

Bibliometrics

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 ग्रंथमिति पद का उद्भव

11.3 ग्रंथमिति परिभाषा

11.4 ग्रंथमिति की आवश्यकता

11.5 ग्रंथमिति का उद्देश्य

11.6 ग्रंथमिति के प्रकार

11.7 ग्रंथमिति की उपयोगिता

11.8 ग्रंथमिति के प्रयोग

11.9 ग्रंथमिति की समस्याऐं एवं सीमाऐं

11.10 ग्रंथमिति के सूत्र एवं उनके प्रयोग

11.11 अन्य मितियॉ

11.12 सारांश

11.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.14 प्रमुख शब्द

11.15 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

11.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं:

1. ग्रंथमिति के उद्भव से अवगत करना ।
2. ग्रंथमिति, विज्ञानमिति, आदि की परिभाषाओं को स्पष्ट करना ।
3. ग्रंथमिति के उद्देश्यों से अवगत करवाना ।
4. ग्रंथमिति के प्रकार के बारे में जानकारी देना ।
5. ग्रंथमिति की उपयोगिता से अवगत करवाना ।
6. ग्रंथमिति के प्रयोग को समझाना है ।
7. ग्रंथमिति की समस्याऐं एवं सीमाओं के बारे में चर्चा करना ।
8. ग्रंथमिति सूत्र एवं उनके प्रयोग की जानकारी प्रदान करना ।
9. विज्ञानमिति के अर्थ, क्षेत्र आदि का अध्ययन करवाना ।

10. सूचनामिति के अर्थ से अवगत करवाना ।

11. विज्ञानमिति के अर्थ को स्पष्ट करना ।

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

अनेक विषय क्षेत्रों में, प्रमुखतः सामाजिक विज्ञान तथा प्राकृतिक विज्ञानों में सांख्यिकीय अथवा गणनात्मक विधियों का निरंतर प्रयोग हो रहा है । पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में भी सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग इसी श्रृंखला की एक कड़ी है । ग्रंथमिति (Bibliometrics), विज्ञानमिति (Scientometrices), सूचनामिति(Informatrices), वेबमिति (Webmatrices), साइबरमिति (Cybermatrices), आदि पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्रों में सांख्यिकी (Statistics) के प्रयोग के विभिन्न नाम हैं । ग्रंथमिति ग्रंथों, आदि के उचित प्रबंधन हेतु पथ प्रदर्शक का कार्य करती है । कम्प्यूटरीकृत सूचना प्रौद्योगिकी में भी इन सांख्यिकीय गणनाओं का प्रयोग संभव हुआ है । ग्रंथमिति के सह-संबंधित शब्द विज्ञानमिति (Scientometrices), सूचनामिति (Informatrics), वेबमिति (Webomatrics), साइबरमिति (Cybermatrics), सामाजिकमिति (Socimatrics), आदि भी हैं इस इकाई में कथमिति की परिभाषा, उद्देश्य, प्रकार, आवश्यकता, एवं उपयोगिता आदि की विस्तार से जानकारी दी गई है ।

11.2 ग्रंथमिति पद का उद्भव (Origion of Biliometrics-Term)

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के एक विषय के रूप में विकास के साथ ही पुस्तकालय विज्ञानियों ने गणनात्मक (Mathematical) अथवा सांख्यिकीय (Statistical) प्रविधियों का प्रयोग किसी न किसी रूप में प्रारंभ कर दिया था व उसे अनेकों नाम दिये । एफ.जे.कोले (F.J.Cole) एवं एन.बी. ईल्स (N.B.Eales) ने 1917 में विषयों के विकास में 1550 से 1860 के मध्य प्रकाशित पुस्तकों का विश्लेषण किया । उन्होंने इसे "सांख्यिकीय विश्लेषण" (Statistical Analysis) कहा । ई.डब्ल्यू.हूम् (E.W.Hulme) ने सन् 1922 में पुस्तकालय में सांख्यिकीय गणना को सांख्यिकीय ग्रंथसूची (Statistical Biliography) पद नाम दिया । सर्वप्रथम एलन प्रिचार्ड (Alan Pritchard) ने 1969 में ग्रंथमिति (Biliometrics) पद का प्रयोग अपने आलेख 'सांख्यिकीय ग्रंथसूची अथवा ग्रंथमिति (Statistical Biliography or Biliometrics) में किया । इस प्रकार ग्रंथमिति शब्द का प्रादुर्भाव हुआ जो आज भी मान्य है । इसकी शाखा के रूप में अनेकों नयेनये शब्दों का प्रयोग भी किया जाने लगा है । रूसियों द्वारा विज्ञानमिति (Scientometrices), एफ.आई.डी. द्वारा सूचनामिति (Informatrics) तथा इसके अतिरिक्त सामाजिकमिति (Socimatrics), वेबमिति (Webomatrics) साइबरमिति (Cybermatrics) आदि प्रमुख हैं । भारत में भी डी. रंगनाथन ने सन् 1948 में पुस्तकालयमिति (Librametery) का प्रयोग किया ।

11.3 ग्रंथमिति : परिभाषा (Biliometrics : Definition)

बिब्लियोमेट्रिक्स (ग्रंथमिति) शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों Biblio+Metrics के संयोग से हुई है । Biblio शब्द की उत्पाती ग्रीक भाषा के संयुक्त शब्द Biblion से हुई है जिसका अर्थ हैग्रंथ या कागज । द्वितीय शब्द Metrics ग्रीक भाषा के शब्द Metrikos से व्युत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ

है 'मापन का विज्ञान' या 'मापन' । इस प्रकार दोंनों शब्दों को मिलाने से बिब्लियोमेट्रिकन (ग्रंथमिति) शब्द का प्रार्दुभाव हुआ है ।

सामान्य अर्थो में ग्रंथमिति शब्द को प्रकाशित तथा अर्द्धप्रकाशित साहित्य के उत्पादन, वितरण तथा उपयोग से संबंधित मात्रिक विश्लेषण (Quantitive Analysis) के किसी भी स्वरूप हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है ।

अनेक वैज्ञानिकों ने ग्रंथमिति को विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया है, एलन प्रिचार्ड के अनुसार -"ग्रंथों तथा अन्य सम्प्रेषण माध्यमों में अंकगणितीय तथा सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग ग्रन्धमिति है ।" "(Application of mathematics and statistical methods to books and media of communication)'' पोटर ने ग्रंथमिति को इस प्रकार परिभाषित किया है - ''ग्रंथमिति सभी प्रकारों के, लिखित सम्प्रेषणों एवं उनकी रचनाकारिता के प्रकाशन प्रतिरूपों का अध्ययन एवं मापन है ।'' (''The study and measurement of the publication patterns of all forms of their authorship'') सेनगुप्ता के अनुसार ग्रंथमिति सभी प्रकार के दीर्घ एवं सूक्ष्म संचारों के प्रकाशन, प्रतिरूपों के संगठन, वर्गीकरण तथा मात्रात्मक मूल्यांकन का अध्ययन है जिसमे उनकी रचनाकारिता की अंकगणितीय व सांख्यिकीमितीय गणना है ।

इस प्रकार हम संक्षेप में कह सकते हैं कि लिखित संचारों के समस्त पहलुओं की विशेषताओं, व्यवहार तथा प्रस्तुति के मात्रात्मक विश्लेषण को ग्रंथमिति कहते हैं । अब लिखित सचार माध्यम में इलेक्ट्रोनिक माध्यम को भी शामिल किया गया है जिससे इसे नये-नये नामों जैसे वेबमिति (Webometrics) तथा साइबरमिति (Cybermetrics) आदि नामों से जाना जाने लगा है ।

11.4 ग्रंथमिति की आवश्यकता (Need of Bibliometrics)

पुस्तकालयाध्यक्ष, किसी उद्‌योग के एक प्रबंधक की तरह ही पुस्तकालय का प्रबंधक होता है । उसे भी निर्णय लेने हेतु उद्देश्यात्मक आँकड़े की आवश्यकता होती है । सांख्यिकीय संदर्भ, पुस्तकालय संग्रह की लागत (प्रलेखों का मूल्य वितरण), लागत एवं प्रलेखों एवं अपुस्तक सामग्री दोनों का प्रतिस्थापन (Replacement), पुस्तकालय प्रदर्शन सूचकों, परिसंचरण आंकडे, पुस्तकालय समय, पाठकों संख्या तथा संदर्भो, प्रकाशन की तिथि तथा स्थान, शैक्षणिक कार्यकम, प्रकाशन का वितरण इत्यादि ऐसे आधारभूत ग्रंथमिति आँकडे नीति निर्धारण हेतु उपयोगी हैं । अत: ग्रंथमिति पुस्तकालयों में अतिआवश्यक मात्रात्मक आंकड़ें हैं जिनकी पुस्तकालयों को हमेशा जरूरत पडती ही रहती है ।

11.5 ग्रंथमिति का उद्देश्य (Objective of Bibliometrics)

ग्रंथमिति के अंतर्गत सभी विषयों में प्रकाशित साहित्य (प्रकाशनों) का विकास तथा व्यक्ति, समूह, संस्थाओं अथवा राष्ट्रों द्‌वारा उपादेय (contributed) साहित्य (प्रकाशनों) की मात्रा का समावेश किया जाता है । इसमें विभिन्न भाषाओं तथा विषयों में प्रकाशन की मात्रा एवं विकीर्णन (Scattering) (प्रलेखों के प्रकार, भाषा, पत्रिकाऐं) तथा अप्रचलन (Out of date) इत्यादि का अध्ययन भी किया जाता है । इसके साथ ही लेखकों द्‌वारा संदर्भित स्रोतों (Sources) का अध्ययन भी ग्रंथमिति का भाग

है । जिससे अधिकतम उद्धरित (cited) लेखकों तथा पत्रिकाओं आदि की भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

ग्रंथमिति के माध्यम से किसी लेखक, संस्था अथवा समूह के द्वारा किसी विषय में, कितने लेख, किस पत्रिका में कब-कब प्रकाशित हुए है आदि की मात्रात्मक जानकारी भी प्राप्त की जा सकती है ।

ग्रंथमिति में मात्रात्मक (Quantitive) गणना पर विशेष बल दिया जाता है तथा गुणात्मक (Quantitive) मूल्यांकंन नहीं किया जाता । ह्यूम ने ग्रंथमिति के उद्देश्य बताते हुऐ स्पष्ट कहा है कि यह लिखित चार प्रकिया तथा किसी विषय की प्रकृति एवं विकास की दिशा पर प्रकाश डालता है।

ग्रंथमिति के उद्देश्य निम्न प्रकार हैं

1. अधिक मितव्ययी एवं महत्वपूर्ण तंत्र तैयार करना ।
2. सूचना प्रकिया की सक्षमता दर में सुधार करना ।
3. वांग्डमयात्मक सेवाओं की खामियों की पहचान एवं माप (Measurement) करना ।
4. उन अनुभाविक सूत्रों (Empirical Laws) की खोज तथा स्पष्टीकरण करना जो सूचना विज्ञान के सिद्धान्तओं (Theory) को विकसित करने के लिए आधार प्रदान कर सके ।

गुणात्मक प्रयोग (Application) अध्ययन निष्कर्षो के प्रायोगिक उपयोग पर बल देते हैं । पुस्तकालय प्रबंधन हेतु उपयोगी कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष निम्न है :

1. प्रमुख प्रकाशनों की पहचान ।
2. प्रकाशनों को घटते हुए महत्व के अनुसार श्रैणीबद्ध करना ।
3. उच्च एवं निम्न उपयोगिता जोन के मध्य संकमण बिंदु स्थापित करना (estabilishing, transition point between zones of higher and lower utility) ।
4. प्रलेखों का प्रभाव मूल्य (Impact Value) ज्ञात करना आदि ।

11.6 ग्रंथमिति के प्रकार (Types of Bibliometrics)

ग्रंथमिति मुख्यत: दो प्रकार की होती है:

11.6.1 वर्णनात्मक अध्ययन (Descriptive Studies)

इसके अंतर्गत प्रलेखों अथवा प्रकाशकों के चारित्रिक विशेषताओं जैसे सूचना की प्रकृति, मात्रा, समय तथा आवृति अध्ययन, उद्भव तथा भौगोलिक प्रकीर्णन अथवा वितरण आदि का मापन सम्मिलित किये गये हैं ।

11.6.2 व्यावहारिक अध्ययन (Behavioural Stidies)

इसके अंतर्गत प्रलेखों की लेखकवृत्ति (Authorship), आख्या विवरण (Title Statement), वांग्डमयात्मक इतिहास (Bibliography History), (संस्करण, आख्या में परिवर्तन, तिथि इत्यादि), प्रकाशन की आवृत्ति (Frequency) (सामयिक प्रकाशन के संबंध में), स्वरूप (Form), स्थान (Place), भाषा (Language), विषय (Subject), संबंधित प्रलेख (Related document),

विषयवस्तु विश्लेषण (Content Analysis), भौतिक सजावट (Physical Make up), आकृति (Size), प्रकाशन, गुणात्मकता, मूल्य (Price), परिसंचरण (Circulation), अनुवाद, प्रारूप (Translation, Formats), उद्धरण (Citation), इत्यादि का अध्ययन किया जाता है ।

11.7 ग्रंथमिति की उपयोगिता (Utility of Bibliometrics)

ग्रंथमिति निम्न उद्देश्यों हेतु उपयोग की जाती है:

1. साहित्य की उत्पादकता गणना करने हेतु ।
2. अध्ययन का क्षेत्र, विभिन्न शाखाओं में शोध की मात्रा एवं प्रकार, प्रदेशों के विभिन्न भागों, विभिन्न समयावधि में व्युत्पन्न प्रकाशनों के तुलनात्मक अध्ययन हेतु ।
3. प्रकाशनों के प्रकार एवं मात्रा (Amount) हेतु ।
4. प्रकाशनों के विकीर्णन एवं प्रतिरूप (Pattern) हेतु ।
5. प्रकाशनों के प्रभाव (Impact) हेतु ।
6. सामाजिक बदलाव की पहचान, इत्यादि हेतु ।

11.8 ग्रंथमिति के प्रयोग (Use of Bibliometrics)

ग्रंथमिति के प्रयोग निम्न प्रकार उद्धरित किये जा सकते हैं:

1. ग्रंथमिति अध्ययन का उद्देश्य वांग्डमयात्मक नियंत्रण में सुधार करना है । वांडग्मयात्मक विश्लेषण विभिन्न क्षेत्रों में साहित्य (प्रकाशनों) के आकार एवं विशेषताओं को जानने में सहयोग करता है । प्राथमिक साहित्य की वृद्धि एवं मात्रा, द्वितीयक साहित्य की संरचना (Struture) पर सीधा प्रभाव डालते है अतएवं संगणित (Computed) वृद्धि दर तथा परिवर्तन दिशा, द्वितीयक सेवा के सम्पादकों के आगामी अभिगम (Approach) एवं क्षेत्र (Covarge) निर्धारित करने में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान कर सकती है ।
2. ग्रंथमिति अध्ययन का एक प्रमुख क्षेत्र प्रलेखों के उद्भव राष्ट्र, विषय, स्वरूप एवं भाषा के साथ ही सम्बन्धित साहित्य के अनुवादों का सांख्यिकीय निर्धारण करना है । ये आँकड़े कार्यक्षेत्र के निर्धारण में संबंधित उपयोगी सूचना प्रदान करते हैं तथा द्वितीयक सेवाओं के संभावित सुधार के निर्धारण में अथवा सुधारों में सुझाव दे सकते हैं ।
3. ग्रंथमिति अध्ययन विषय संबद्धता को व्युत्पन्न (Derive) करता है, जो सामान्य प्रतिरूपों के द्वितीयक सेवा क्षेत्र (Coverage) हेतु अपेक्षित सुझाव दे सकता है । ऐसे ग्रंथमितीय अध्ययन विशिष्ट विषय क्षेत्र में सेवा हेतु रुपरेखा की स्थापना में भी सहायता कर सकते हैं।
4. उद्धरण विश्लेषण आंकड़ें तथा वर्षानुसार प्रकाशन की मात्रा का उपयोग वाडंग्मयसूची बनाने की योजना में किया जा सकता है ।
5. ग्रंथमिति विश्लेषण, द्वितीयक सेवाओं के तुलनात्मक मूल्यांकन में सहायता करता है । यह प्रकाशकों की उपलखियों पर भी प्रकाश डाल सकता है ।
6. ग्रंथमिति आँकड़े कुछ प्रबंधकीय निर्णय लेने में भी सहायक होते हैं । उदाहरणार्थ यह विशिष्ट प्राथमिक एवं द्वितीयक पत्रिकाओं के चुनाव में सहायक हैं एवं भविष्य में होने वाली

आवश्यकता, कर्मचारी, भवन आवश्यकता तथा पुस्तकालय सेवाओं के सुधार में सहायक होते हैं ।

7. उद्धरण आँकड़े उच्च उद्धरित पत्रिकाओं अथवा पुस्तकों का भी निर्धारण करते हैं जो पुस्तकालय के संग्रह हेतु निर्णय लेने में भी उपयोगी हो सकते हैं ।
8. ग्रंथमिति उद्धरण विश्लेषण द्वारा विषय संबंधता प्रतिपादित करती है । जो विशिष्ट पुस्तकालय में विशिष्ट विषय द्वारा पत्रिकाओं की आख्याओं का सुझाव देने में भी सहायक होती है । ग्रंथमिति अध्ययन ज्ञान की संरचना एवं संचार की प्रकृति के बारे में भी सूचना प्रदान करती है ।

इस प्रकार ग्रंथमिति प्रकाशनों का आकार एवं वृद्धि का विश्लेषण, साहित्य (प्रकाशनों) के विकास एवं क्षय (Decling) क्षेत्र में वृद्धि की पहचान कर सकता है तथा साहित्य (प्रकाशन) वृद्धि के तरीके को जाना जा सकता है ।

ग्रंथमिति के निम्नलिखित अन्य उपयोग भी हैं:

1. ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की वृद्धि एवं शोध की मात्रात्मकता प्रदान करने हेतु ।
2. द्वितीयक पत्रिकाओं की व्यापकता अनुमानित करने हेतु ।
3. विभिन्न विषयों में प्रलेखों की लेखकता एवं उपयोगकर्ता की पहचान करने हेतु ।
4. तदर्थ एवं पूर्वापेक्षी (Retrospective) चयनित प्रसार सेवा (SDI) की उपयोगिता को मापने हेतु ।
5. पैतृक संस्थान के शोध रुचि पर कोई भी प्रभाव डाले बगैर सीमित बजट के अंतर्गत आवश्यकता आधारित अर्जन नीति हेतु ।
6. विभिन्न विषयों में प्रमुख पत्रिकाओं की पहचान करने हेतु ।
7. प्रभावी बहुस्तरीय नेटवर्क तंत्र का सूत्रपात करने हेतु ।
8. सूचना एवं संचार के प्रवाह को विनियमित करने हेतु ।
9. प्रमाणीकरण (Standardization) के लिए मानदंड विकसित करने हेतु आदि ।

11.9 ग्रंथमिति की समस्याऐं एव सीमाऐं (Problems and Limitations Bibliometrics)

ग्रंथमिति के द्वारा हम शोध का प्रभाव तथा शोधपत्र उत्पादकता आदि का मूल्यांकन कर सकते हैं परंतु ग्रंथमिति निर्णायकों की अपनी समस्याऐं तथा सीमाऐं निम्नानुसार हैं:

1. प्रमुख लेख (Article) के लेखकों का पूर्ण पता, संस्थागत सम्बद्धता आदि का ब्यौरा अकसर नहीं दिया जाता जिससे विश्लेषण कठिन हो जाता है ।
2. संस्थाएं अपने वैज्ञानिकों के प्रकाशनों का पूर्ण ब्यौरा वार्षिक प्रगति प्रतिवेदन में नहीं देतीं ।
3. शोध वैज्ञानिक अपने शोध प्रकाशनों की पूर्ण जानकारी जानबूझकर नहीं देते जिससे उत्पादकमिति अध्ययन (Productometric study) दुरूह हो जाती है ।
4. संदर्भ सूची हमेशा सही व पूर्ण नहीं होती अत: बहुत से गलत आँकड़े सम्मिलित रहने की संभावना रहती है ।

5. वास्तव में उद्धरण उपयोग ही नहीं किये जाते व किसी अन्य लेख में दिये होने से संदर्भ सूची में उद्धरित कर दिये जाते हैं । उदाहरणार्थ परिभाषाओं के लिये पुराने उद्धरण दे दिये जाते हैं जबकि वास्तव में उनका उद्धरण किया ही नही जाता ।
6. अकसर वह शोध पत्र जिनसे लेख का प्रमुख भाग लिया जाता है संदर्भ सूची में जानबूझकर छिपाया जाता है जिससे विश्लेषण भ्रमात्मक हो जाता है ।
7. अकसर उद्धरण में प्रथम लेखक का नाम दे दिया जाता है तथा कभी-कभी तो 'एवं अन्य' भी नहीं दिया जाता जिससे सभी लेखकों की जानकारी अपूर्ण होने से सही विश्लेषण नहीं हो पाता।
8. अकसर लेखकों अथवा आख्या में वर्णविन्यास में अंतर होने से उद्धरण बिखर जाते हैं ।
9. अकसर स्वयं के लेखों का उद्धरण अनावश्यक रूप से किया जाता है । मित्र लेखकों के उद्धरण भी उपकृत करने हेतु दिये जाते हैं ।

बोध प्रश्न-1

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. ग्रंथमिति को परिभाषित कीजिए ।

   ....

   ....

2. ग्रंथमिति के उद्देश्य बताइये ।

   ....

   ....

3. ग्रंथमिति की आवश्यकता को स्पष्ट कीजिये ।

   ....

   ....

4. ग्रंथमिति निर्णायकों की क्या समस्याएं एवं सीमाएं है ?

   ....

   ....

11.10 ग्रंथमिति के सूत्र एवं उनके प्रयोग (Formula of Bibliometrics and their Use)

ग्रंथमिति में प्रतिशत (Percentage) औसत, (Mean) भूईष्ट (Mode) तथा मध्यमा (Median) के अतिरिक्त कुछ ग्रंथमितिय सूत्र भी तैयार किये गये हैं । इनके दो सूत्र प्रकाशनों (Publications) की ग्रंथमिति गणना हेतु प्रयुक्त किये जाते हैं जबकि तीसरा सूत्र संदर्भो के विश्लेषण हेतु प्रयुक्त किया जाता हैं । कुछ अन्य सूत्र भी प्रतिप्रादित किये गये हैं । तीन प्रमुख सूत्रों का विवरण निम्नानुसार है ।

11.10.1 लोटका का विलोम वर्ग सूत्र

यह नियम अलफ्रेड जे. लोटका ने 1926 में दिया था । इसे विलोम वर्ग सूत्र (Inverse Square) भी कहते हैं । इस नियम के वैज्ञानिकों के शोध पत्र उत्पादकता (Productivity of Research Papers) की ग्रंथमितीय गणना की जाती है ।

शोध क्षेत्र के सामान्य प्रचलित नियमानुसार प्रकाशित शोध पत्रों की संख्या द्वारा वैज्ञानिकों की विद्वत उत्पादकता मापी जा सकती है । प्रारंभिक रूप से अन्य कारकों पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता है । लोटका द्वारा ग्रंथमिति शोध से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि किसी भी शोध पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अधिकतम लेखकों का योगदान बहुत कम होता है व उच्च उत्पादक लेखक बहुत ही कम होते हैं । लोटका ने इस हेतु एक सूत्र प्रतिपादित किया । इस सूत्र के अनुसार यदि केवल एक शोध पत्र प्रकाशित कराने वाले लेखकों की संख्या n है तो दो शोध पत्र प्रकाशित कराने वाले लेखकों की संख्या इस संख्या n के विलोम वर्गाक (Inverse Square) के बराबर अर्थात् $1/n^2$ होना चाहिए अर्थात् वह वैज्ञानिक जो दो शोध पत्र (n=2) प्रकाशित करते हैं वह एक शोध पत्र प्रकाशित कराने वाले वैज्ञानिकों की संख्या का मात्र $1/n^2$ होगी । इसी प्रकार n=3 होने पर $1/3^2$ अर्थात 1/9 तथा इसी प्रकार $1/4^2$, $1/5^2$, $1/6^2$ से प्राप्त मान के बराबर तीन, चार, पाँच या छः शोध पत्र प्रकाशित कराने वाले लेखकों की संख्या अपेक्षित होगी ।

अर्थात् एक या अधिक संख्या में शोध पत्र प्रकाशित कराने वाले वैज्ञानिकों की संख्या, एक शोध पत्र प्रकाशित कराने वाले वैज्ञानिकों के अनुपात में क्रमशः घटती ही चली जाएगी । इस सूत्र के द्वारा हम यह ज्ञात कर सकते हैं कि उच्च उत्पादकता वैज्ञानिकों की अपेक्षित संख्या वास्तविक संख्या से कितनी कम या ज्यादा है और इस प्रकार हम प्रकाशनों का नवीनतम रूख जान सकते हैं ।

11.10.2 जिप्फ का सूत्र

यह सूत्र जार्ज किंग्सलें जिप्फ (Geaorge Kingsale Zipf) द्वारा प्रतिपादित किया गया। अतः इसे जिप्फ सूत्र कहते हैं । यह सूत्र प्रकाशनों के पाठ्य व मुख्य आख्या (Title) में प्रयुक्त शब्दों की आवृत्ति से संबंधित है । एक शब्द किसी पाठ्य/आख्या में कितनी बार आया है, (Frequency of occurance of words in a text/title) की गणना की जाती है । इसे न्यूनतम प्रयत्न नियम (Law of least efforts) भी कहते हैं ।

जिक के सूत्र के अनुसार लम्बी पाठ्य विषयवस्तु में प्रयुक्त आख्या में शब्दों को आवृत्ति के घटते कम में व्यवस्थित किया जाता है तो ग्रंथों के किसी भी दिए शब्द की स्थिति (r), शब्द की आवृत्ति (f) Frequency of occurance के विपरीत समानुपाती होंगी । जिप्फ का सूत्र गणितीय रूप में निम्नलिखित प्रकार से लिखा जा सकता है:

$r=1/f$ अथवा

$rf=c$ or

$\log f(r)+\log n=c.$

यहाँ

r शब्दक्रम (Ranks of word)

f शब्द आवृत्ति (frequency word); तथा

c स्थिरांक है ।

इसका मान हम लॉग टेबल के प्रयोग से आसानी से निकाल सकते हैं ।

इस हेतु किसी शोध प्रकाशन में प्रयुक्त शब्दों की आवृति गिनी जाती है तथा घटते क्रम में व्यवस्थित की जाती है तथा उपरोक्त ग्रंथमिति सूत्र से स्थिरांक प्राप्त किये जाते हैं ।

11.10.3 ब्रेडफोर्ड का सूत्र

सेम्यूल क्लाइमेट ब्रेडफोर्ड (Samual Climent Bradford) का सूत्र विभिन्न पत्रिकाओं में एक विशिष्ट प्रकार के लेखों का विकीर्णन (scattering) करता है । इसलिए इसे विकीर्णन का नियम (Law of Scattering) भी कहते हैं ।

ब्रेडफोर्ड ने अपने शोधपत्र में विषय विशिष्ट में सूचना के स्रोतों मे 'विज्ञान पुस्तकालय, ब्रिटेन' (Science Library, Britain), में तैयार की गई दो वांडग्मय सूचियों व्यावहारिक भू-भौतिकी (Lubrication) वर्ष 1928-31 तथा लुब्रिकेशन (Lubrication) वर्ष 1931-32 का अध्ययन किया तथा उद्धरित संदर्भ संख्या के घटते क्रम में इन वांडग्मय सूचियों में संदर्भित शोध पत्रिकाओं (Journals) को व्यवस्थित किया । संदर्भित शोध पत्रिकाओं की सूची के अध्ययन से उन्होंने यह पाया कि केवल कुछ ही पत्रिकाऐं अधिकाशत: संदर्भित है अर्थात् बहु त ही उत्पादक (Productive) हैं जबकि शेष अधिकांश पत्रिकाओं में यह उत्पादकता बहु त ही कम होती जाती है तथा बहु त कम बार संदर्भित की जाती हैं । इस आधार पर ब्रेडफोर्ड ने एक ग्राफ भी तैयार किया जिसे उन्होंने वांग्डग्राफ (Bibliography) का नाम दिया । उन्होंनें कुल संदर्भो को तीन भागों मे लगभग बराबर बांटकर तीन जोन तैयार किये।

ब्रेडफोर्ड ने इनके बीच एक संबंध पाया जिसे ब्रेडफोर्ड नियम कहा गया ।

उनके अनुसार 1 : n : n2

यहां 1 का अर्थ है, पहले जोन में 1/3 संदर्भो हेतु संदर्भित शोध पत्रिकाओं की संख्या । इसी प्रकार यहां n वह अनुपात (Ratio) है जिसे पहले जोन की संदर्भित पत्रिकाओं की संख्या के द्वितीय जोन की संदर्भित पत्रिकाओं की संख्या से भाग देने पर प्राप्त होता है । तृतीय जोन में अपेक्षित पत्रिकाओं की संख्या इस प्रकार प्राप्त n के मान का n 2 होना चाहियें ।

इस नियम को शोध में लागू करने में कभी-कभी कठिनाई आती है । वस्तुत: यह बहु त सरल है । सर्वप्रथम सभी संदर्भित पत्रिकाओं की संदर्भ संख्या को घटते कम में व्यवस्थित कर लें व इस सारणी से संचित संदर्भ (Cumulative Reference) जोडते जायें । तत्पश्चात् कुल संदर्भों का 1/3 का मान निकाल लें । फिर उपरोक्त सारणी में तीनों जोन में संदर्भित पत्रिकाओं की संख्या नोट कर लें ।

इस नियम का पालन कर गणना करने पर हम किसी भी विषय की शोध पत्रिकाओं को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं तथा पुस्तकालय प्रथम समूह की शोध पत्रिकाओं का अर्जन कर सकते हैं । यदि बजट उपलब्ध है तो हम द्वितीय जोन की भी कुछ पत्रिकाऐं खरीद सकते हैं तथा तृतीय जोन की पत्रिकाओं को न खरीदने का निर्णय ले सकते हैं आवश्यकता होने पर उनके कुछ शोधपत्रों की फोटोप्रतियां मंगा सकते हैं ।

ब्रेडफोर्ड ने ग्राफ की सहायता से दर्शाया जिसे हम ब्रेडफोर्ड बिब्लियोग्राफ कहते हैं । इस हेतु 'ए' लाइन पर संदर्भित पत्रिकाओं की संचित संख्या (Cumulative Number) के लॉग को दर्शाया जाता है तथा बी लाइन पर जोन 1, 2, 3 में प्राप्त उपलब्ध पत्रिकाओं की संख्या के Cumulative Number के लॉग को दर्शाया जाता हैं यह एक सीधी रेखा में प्राप्त होना चाहिए । प्रत्येक जोन को parallel तथा horizontal line से दर्शाया जाता है ।

इसी प्रकार अन्य सूत्र जैसे प्राइस उत्पादकता का वर्गमूल सूत्र, स्मारफिल्ड का सांद्रता का सूत्र एवं सेन ग्रंथमिति कें सूत्र भी ग्रंथमिति में उपयोग किये जाते हैं जिनका विस्तृत अध्ययन संदर्भित ग्रंथों से किया जा सकता है ।

11.11 अन्य मितियाँ (Other Metrics)

ग्रंथमिति के अतिरिक्त अन्य मितियॉ भी प्रार्दुभावित हु ई है जिसका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है

11.11.1 साइबरमिति (Cybermatrics)

साइबर शब्द को साइबरमिति शब्द में उपसर्ग के रूप में प्रथम बार प्रयोग नारबार्ट वाइनर (Norbert Weiner) ने अपनी पुस्तक में 1948 में किया था । ग्रीक भाषा से उत्पन्न साइबर शब्द का अर्थ है चलाने वाला व्यक्ति अथवा परिचालन मनुष्य जिसमें नियंत्रण का विचार भी सन्निहित है । तत्पश्चात् विलियम गिब्सन (William Gibson) ने 'ओमनी पत्रिका' में प्रकाशित एक कहानी में इस शब्द का प्रयोग किया । उन्होंनें पुन: इस शब्द का उपयोग 1984 में प्रकाशित अपने उपन्यास न्यूरोमेन्सर (Neuromencer) में भी किया । उपन्यास में इस शब्द का अर्थ इलेक्ट्रोनिक नभमंडल (Electronic Space) से था । कालांतर में इस शब्द का अर्थ उदविकसित हु आ और अब इसमें सूचना प्रौद्योगिकी, इंटरनेट, छदम वास्तविकता (Virtual Reality) आदि शब्द भी समाहित हैं ।

आगे साइबर शब्द का बहु त प्रयोग किया जाने लगा जैसे साइबरकल्वर (Cyberculture) साइबरनेट (Cybernate), साइबरराष्ट्र (Cybernation), साइबरमेटिक (Cybermetic), साइबरमेटिकल (Cybermetical), साइबरमेटिकली (Cybermetically), साइबरमेटिसियन (Cybermetician), साइबरमेटिसिस्ट (Cybermeticist), इत्यादि इसी प्रकार साइबर अपराध (Cyber crime), साइबरसंदर्भ (Cyberreference), साइबर पुस्तकालय (Cyber Library), साइबर पुस्तकालयाध्यक्ष (Cyber Librarian), साइबर विवाह (Cybermarriage), साइबरप्रेम (Cyber Romance) इत्यादि शब्दों की उत्पत्ति भी हो चुकी है । मेट्रिक्स (Metrics) शब्द मीटर (Meter) से बना है । साइबर मेट्रिक्स शब्द में दो शब्द साइबर तथा मेट्रिक्स जुडे हु ए हैं । जो क्रमश लेटिन शब्द मेट्रम (Metrum) तथा ग्रीक शब्द मेट्रान (Meteron) से बने हैं । जिनका अर्थ हैं 'मापना' साइबर के साथ इस शब्द को मिलाने से अर्थ होता है 'साइबर वस्तुओं के मापने का विज्ञान' । इसमें भी अंकगणितीय तथा सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग समाहित है । इसमें प्रलेखों के स्थान पर वेबसाइट (Website) में सांख्यिकीय गणनाओं को प्रयुक्त किया जाता है ।

बी.के. सेन के अनुसार 'यह ज्ञान की वह शाखा है जो वेबसाइटों अथवा उनके तत्वों तथा विचारों (Components and Concepts) को मापने हेतु गणितीय तथा सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग करती है तथा उनकी वृद्धि स्थायित्व (Stability), प्रसार (Propagation) तथा उपयोग को मापती है एवं विषयवस्तु की प्रमाणिकता का परीक्षण करती है । इन कारकों (Factors) को नियंत्रित करने हेतु नियमों, साइबर सूचना तंत्र, सेवाऐं तथा उत्पाद का अध्ययन करती है तथा समाज पर साइबर युग के प्रभावों का अध्ययन करती है ।

इस शब्द के मिलते-जुलते शब्द भी प्रयोग किये जाते हैं । जैसे साइबरमेट्रिक अर्थात साइबरमिति पर आधारित तथा साइबरमेट्रिसियन (Cybermetician) तथा साइबरमेट्रिसिस्ट (Cybermeticist) जिसका अर्थ हैं साइबरमिति में विशिष्ट व्यक्ति । वेबमिति शब्द साइबरमिति शब्द का पर्यायवाची है।

साइबरमिति के अध्ययन क्षेत्र में भौगोलिक क्षैत्र सम्पूर्ण साइबर नभ मण्डल होता है तथा काल (Time) वेबसाइट के जन्म से साइबर संसार के अंत तक होता है । वह सभी भाषाओं जिनमें वेबसाइट उपलब्ध हैं, सभी स्वरूपों तथा सभी विषय जिसमें वेबसाइट बनी हैं, साइबर अध्ययन क्षेत्र में आते हैं।

11.11.1.1 साइबरमिति के घटक

साइबरमिति के निम्न पाँच घटक है

पहला संघटक - साइबर संकल्पना (Cyber concepts) हैं । साइबरमिति के अंर्तगत साइबर नभमंडल (Cyber Space), साइबर अपराध (Cyber Crime), साइबर कानून (e-Law), ई-ग्रंथ (e-Books), ई-वाणिज्य (e-Commerce), ई-सरकार (e- Government), ई -पत्रिकाऐं (e-Magazines), ई-सामयिकी (e-Journals), डिजिटल पुस्तकालयों की उत्पत्ति, उत्पति की दर, स्वरूप में परिवर्तन, उपयोग की मात्रा, अप्रचलन की दर, इत्यादि भी साइबरम्रिति का भाग हैं । द्वितीय संघटक-वेबसाइटस (Website) हैं । साइबरमिति में वेबसाइट ही प्रलेख हैं । प्रतिदिन अनेकों वेबसाइट नई बनती जाती हैं कुछ जल्दी-जल्दी बदलती रहती हैं, कुछ बहुत कम बदलती हैं । कुछ नही बदलती व कुछ गायब हो जाती हैं । एक विषय की वेबसाइट आपस में गुणवत्ता में भिन्न होती है । इन वेबसाइट को क्रमबद्वता (Rank) प्रदान करने की विधियों विकसित हो रही हैं, जिससे वेब प्रभाव तत्व (Web Impact Factor) तथा उद्धरित साइट का अध्ययन किया जा सके ।

तृतीय संघटक - सह-उद्धरण तथा साइबर कपलिंग (Co-Citation and Cyber Coupling) हैं । वेबसाइट अध्ययन में ग्रंथमिति की भांति सह-उद्धरण (Co-citation) तथा वेबकपलिग (Web Coupling) का भी अध्ययन किया जाता है ।

चतुर्थ संघटक - अन्वेषण इंजन (Srearch Engine) है । साइबर नभमंडल (Cyber Space) में विहार करने हेतु अन्वेषक इंजिन प्रमुख भूमिका निभाते हैं । पिछले वर्षों में अनेकों अन्वेषक इंजिन प्रस्फुटित हुए हैं तथा उनकी विविध क्षमताऐं हैं । इन अन्वेषक इंजिनों की क्षमताओं को मापा जा सकता है तथा इस प्रकार अन्वेषण इंजिन भी साइबरमिति का भाग है ।

पाँचवा संघटक - साइबर सूचना (Cyber Information) है । साइबर नभमंडल एकदम निःशुल्क है । बिना किसी प्रतिबंध के कोई भी इसमें प्रवेश कर सकता है तथा अपनी कोई भी सूचना डाल सकता है । साइबर सूचनाओं के गुण तथा प्रमाणिकता को परखने वाला कोई भी नही है । साइबर

सूचना किसी भी अन्य माध्यम की अपेक्षा अत्यधिक गति से यात्रा करती है । साइबर सूचना अधिक दर से गुणित होती है तथा अधिक गति से पुन: प्राप्त की जा सकती है एवं आसानी से अद्‌यतन की जा सकती है । इन सूचनाओं में गलत वर्णमाला (Spelling) से लेकर गलत डाटा तथा गलत सूचनाऐं तक हो सकती हैं । इनका प्रयोग निःशुल्क अथवा बहुत कम शुल्क पर भी किया जा सकता है । इस प्रकार साइबर सूचनाओं की मुद्रित सूचनाओं से तुलना की जा सकती है तथा सांख्यिकीय विश्लेषण किया जा सकता है । इस प्रकार साइबर सुचना साइबर मिति का महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र है ।

अंत में हम कह सकते हैं कि सभी ऑन लाइन सूचना तंत्र, सेवाऐ तथा उत्पाद साइबर नभमण्डल में होते है । जिस प्रकार परंपरागत तंत्र, सेवाएँ तथा उत्पाद का अध्ययन ग्रंथमिति में किया जाता है उसी प्रकार साइबरमिति में भी इनका अध्ययन किया जाता है । इस हेतु तंत्र की संरचना, सामग्री का संगठन, डाटा सुरक्षा, अद्‌यतन की अवधि, पुनरुत्पादन क्षमता तथा सेवा प्रदान करने की क्षमता इत्यादि को तुलना के मानदंड (Parameters) बनाये जा सकते है तथा पंरपरागत सूचना तंत्र, सेवाओं तथा उत्पादों से तुलना की जा सकती है ।

11.11.2 विज्ञानमिति (Scientometrics)

इस शब्द का प्रथम प्रयोग ब्राउनिन (T.Braunin) द्‌वारा सन् 1977 में हंगरी एवं वर्तमान में एमस्टरडम से प्रकाशित एक पत्रिका "Scientometrics" से हुआ है । इस पत्रिका का क्षेत्र विज्ञान को एक विषय स्वरूप अथवा अर्थशास्त्रीय गतिविधियों के रूप में मात्रात्मक पक्षों के उन सभी अध्ययनों को प्रकाशित करना है जिससे इसे विकसित करने में हुऐ व्यय से प्राप्य की प्रभावशीलता को मापा जा सके ।

विज्ञानमिति विज्ञान के समाजशास्त्र का भाग है तथा 'विज्ञान' नीति निर्माण हेतु प्रयुक्त किया जाता है । विज्ञानमिति वैज्ञानिक गतिविधियों के मात्रात्मक अध्ययन को सम्मिलित करती है जिसमें प्रकाशन भी सम्मिलित हैं अत: कुछ हद तक इसमें ग्रंथमिति भी सम्मलित है । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विज्ञानमिति 'विज्ञान के विज्ञान" की शाखा है ।

विज्ञानमिति का प्रमुख लक्ष्य एक विषय की अवस्था (State) तथा प्रत्यांशा (Prospects) एवं इसके भावी विकास (State and prospect of a subject and its further development) को निर्धारित करना है । इस हेतु अनेकों विज्ञानमिति सूचकों (Indicators) का प्रयोग किया जाता है इनमें से सर्वाधिक सार्थक (Significant) सूचक प्रकाशन संख्या है । यह सूचक ही विज्ञाननीति निर्माण के शोध प्रबंधन में मूल्यांकन एवं विश्लेषण के मानक साधन हो सकते हैं ।

वर्तमान में वैज्ञानिक सूचनाओं के मापन को विशेष महत्व दिया गया है जिससे सूचना अन्वेषण (Srearch) को नियमित किया जा सके । गणितीय तथा सांख्यिकीय तकनीकों ने विज्ञान को सामाजिक संरचना अथवा शोध में रूचि लेने वाले व्यक्तियों तथा प्रकाशकों की संख्या को मात्रात्मकता प्रदान करने की प्रक्रिया के लिये संभव बना दिया है ।

11.11.3 सूचनामिति (Informetrics)

सन् 1979 में प्रथम बार जर्मनी के ओटो नेक (Otto Nacke) ने सूचनामिति शब्द प्रस्तावित किया । एफ.आई.डी. समिति (FID Committee) ने तत्पश्चात यह नाम दिया । सन् 1987 तक

यह शब्द विस्तृत रूप से स्वीकृत नहीं किया गया । बुकस ने सूचना पुर्नप्राप्ति के सैद्धांतिक पहलुओं तथा ग्रंथमिति पर प्रथम सम्मेलन (First Conference on Bibliometrics and Theoritical Aspects of Information Retrival, Diepenback Belgium) में यह सुझाव दिया था कि सूचनामिति (Informetrics) के नाम को द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के नाम में सम्मिलित किया जाए । सम्मेलन की कार्यवाही में यह कहा गया कि सूचनामिति (Informetrics) शब्द ग्रंथमिति एवं विज्ञानमिति शब्दों से अधिक प्रभावी है । अतएव एक नये नाम के उन्नयन (Promoting) हेतु यह तय हुआ कि सूचनामिति शब्द का प्रयोग ग्रंथमिति नाम के साथ अगले सम्मेलन की आख्या में तथा प्रकाशित सम्मेलन की कार्यवाही की आख्या में प्रयुक्त किया जाए । इस प्रकार द्वितीय सम्मेलन का नाम ग्रंथमिति सूचनामिति एवं विज्ञानमिति पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन (International Conference on Bibliometrics, Informetrics and Scienotmetrics) कर दिया गया । इस प्रकार "सूचनामिति" शब्द का निरंतर प्रयोग हो रहा है । इसके दो सम्मेलन भारत में भी आयोजित हो चुकें है ।

टेग सूटक्लिफि (Tagui Sutclife) ने इस शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया "यह सूचना के किसी भी रूप के मात्रात्मक पहलुओं का अध्ययन है । यह सिर्फ अभिलेखों अथवा वांग्डमय सूचियों अथवा किसी भी सामाजिक समूह में केवल वैज्ञानिकों के अध्ययन तक सीमित नहीं है । यह विज्ञानमिति तथा ग्रंथमिति के अध्ययन क्षेत्र के बाहर भी सूचना के मात्रात्मक अध्ययन तक विस्तारित (Extended) है ।"

11.11.4 वेबमिति (Webometrics)

सर्वप्रथम सन् 1997 में अलमिंड एवं इन्जवरसन (Almind and Ingewerson) द्वारा वेबोमेट्रिक्स (Webometrics) शब्द प्रयुक्त किया गया । 1990 के दशक में वेब का प्रादुर्भाव हुआ । 1995 में नेटोमेट्रिक्स शब्द का भी प्रयोग किया गया । बर्कले विश्वविद्यालय ने वेब पर उपलब्ध प्रलेखों का आकार (Size) टैग्स (Tags) की संख्या तथा प्रकार, अतिरिक्त श्रृंखलाओं (Links) की संख्या, फाइल विस्तार आदि का अध्ययन कर इस शब्द का विकास किया ।

इस प्रकार वेबमिति वेब (www) पर सूचना स्रोतों के निर्माण, उपयोग, संरचना (Structure) एवं प्रौद्योगिकी के मात्रात्मक पहलुओं का अध्ययन है । वेबमिति में वेब के निर्माण तथा उपयोग दोंनों पहलुओं का अध्ययन किया जाता है । इसके अध्ययन में वेबपेज विषयवस्तु विश्लेषण, वेबलिंक संरचना विश्लेषण (वेब उपयोग विश्लेषण) तथा वेब प्रौद्योगिकी विश्लेषण प्रमुख क्षेत्र हैं ।

बोध प्रश्न-2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. ग्रन्थमिति के प्रकार बताइये ।

   ....

   ....

2. ग्रन्थमिति के सूत्र कौन-कौन से हैं?

   ....

....

3. अन्य मितियों के नाम बताइये ।

....

....

4. साइबरमिति के पाँच संघटक कौन-कौन से हैं?

....

....

11.12 सारांश (Summary)

ग्रंथमिति व अन्य सभी मितियाँ जैसे विज्ञानमिति (Scientometrics), सूचनामिति (Informetrics), वेबमिति (Webometrics) तथा साइबरमिति (Cybermetrics) आदि का महत्व बढती प्रकाशन संख्या तथा घटते बजट के साथ-साथ ३धिक महत्वपूर्ण हो गया है । सूचना स्रोतों की संख्या व उनका प्रसार इतना अधिक हो गया है कि उनका मूल्यांकन करना दुरूह कार्य हो गया है । पुस्तकालय धनाभाव तथा स्थानाभाव दोनों से ही जूझ रहे हैं । ऐसे में सांख्यिकीय विश्लेषण ग्रंथों की सजावट व उपयोगिता दोनों पर ही महत्वपूर्ण सूचना प्रदान कर प्रबंधकीय निर्णय करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं । केवल कुछ महत्वपूर्ण प्रमुख पत्रिकाओं के चुनाव से अधिकांश पुस्तकालयों के, अधिकांश पाठकों की, अधिकांश मांग की आपूर्ति हो सकती है, जिससे धन व समय दोनों की ही बचत होती है । ग्रंथमिति के द्वारा पुस्तकालय अपने पैतृक संस्थान की शोध गतिविधियों की दिशा को समझ सकता है तथा उनमें उपलब्ध पत्रिकाओं पर ध्यान केंन्द्रित कर संस्थान के लाखों करोड़ों रूपये राशि की बचत तथा पाठकों का अत्यधिक महत्वपूर्ण समय बचा सकता हैं । आज हमें आवश्यकता है पुस्तकालयों में ग्रंथमिति अध्ययन की उपयोगिता को समझे इस हेतु सभी बडे पुस्तकालयों में ग्रंथमिति केंन्द्र स्थापित करने होगें ।

11.13 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. ग्रंथमिति से आप क्या समझते हैं ? परिभाषित कीजिए ।
2. ग्रंथमिति की आवश्यकता क्यों हुई? वर्णन करें ।
3. ग्रंथमिति की क्या समस्याऐं एवं सीमाऐं हैं?
4. ग्रंथमिति के सूत्र कौन - कौन से हैं?
5. लोटका का सूत्र संक्षिप्त में समझाइये ।
6. जिप्फ के सूत्र का विवरण दीजिए ।
7. ब्रेडफोर्ड के सूत्र को संक्षेप में समझाइये ।
8. विज्ञानमिति सूचनामिति को संक्षेप में समझाइये ।
9. साइबरमिति एवं वेबमिति क्या हैं? संक्षेप में समझाइये ।

11.14 प्रमुख शब्द (key Word)

ग्रन्थमिति (Bibliometrics) : लिखित संचारों के समस्त पहलुओं की विशेषताओं, व्यवहार तथा प्रस्तुति का मात्रात्मक विश्लेषण ।

आवृति (Frequency)	:	ऐसा शब्द जो किसी पाठ्य सामग्री या आख्या में कितनी बार प्रयुक्त हुआ है । वह उस शब्द की आवृति होती है।
विज्ञानमिति (Scienmetrics)	:	वैज्ञानिक गतिविधियों का मात्रात्मक अध्ययन ।
साइबरमिति (Cybermetrics)	:	साइबर वस्तुओं को मापने का विज्ञान ।
वेबमिति(Webometrics)	:	वेब पर सूचना स्रोतों के निर्माण व उपयोग तथा संरचना एवं प्रौद्योगिकी के मात्रात्मक पहलुओं का अध्ययन ।
विज्ञानमिति	–	Scientometrics
वेबमिति	–	Webometrics
सूचनामिति	–	Informetrics
साइबरमिति	–	Cybermetrics
व्यावहारिक अध्ययन	–	Behavioural Studies
मूल्य वर्ग मूल सूत्र	–	Price Square Root Law
आवृति	–	Frequency
विशेषताएँ	–	Characteristics
मात्रात्मक	–	Quantitative

11.15 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Readingds)

1. Krishan kumar, Research methods in library and information science, New Delhi : Vikas, 1992, p 266-70
2. Egghe, L., Methodological aspects of bibliometrics, library Science with a Slant to Documention and Information Studies, 25;3, 1998. 179-91.
3. Pritchard, A.Statistical bibliography on bibliometrics, Journal of Doucumention, 25, 1969,p.348-49.
4. Lotka,A.s., Frequency distribution of scientific productivity, S.Washington Acad. Sc.16,1926, p.323.
5. Lancaster, F.W., Bibliometrics methods in assessing productivity and impact of research, Banglore : Sarda Ranganathan Endowement for Library Science, 1991, 51p.

6. Sen, B.K., Cybermetrics : Meaning, definition, scope and constituents, Annals of Library and Information Studies, 1.51, September 2004, p 87-92.
7. Cybermetrics, Electronic Journal of Scientometrics, Informetrics and Bibliometrics. www.cindoc.csic.es/ Cybermetrics.

इकाई-12

शोध प्रतिवेदन लेखन

Research Report Writing

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 शोध प्रबन्ध या लघु शोध प्रबन्ध के अवयव

  12.2.1 प्रारम्भिक भाग

  12.2.2 प्रतिवेदन का मूल भाग

  12.2.3 संदर्भ भाग

12.3 शोध प्रबन्ध अथवा लघु शोध प्रबन्ध प्रस्तुति के तहत वैज्ञानिक लेखन की विशेषताएँ

12.4 सारांश

12.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.6 प्रमुख शब्द

12.7 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

12.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं

1. शोध प्रबन्ध और लघु शोध प्रबन्ध से अवगत करवाना ।
2. शोध प्रबन्ध या लघु शोध प्रबन्ध के अवयवों से अवगत कराना ।
3. शोध प्रबन्ध प्रस्तुति के तहत वैज्ञानिक लेखन की विशेषताओं को समझाना ।
4. शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा को समझाना ।
5. शोध में प्रयुक्त सक्षिप्ताक्षरों के अर्थ को समझाना ।

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

समूचे अनुसंधान के कार्य का अन्तिम सोपान शोध प्रतिवेदन तैयार करना होता है । शोध पूरा हो जाने पर अनुसन्धानकर्ता को अपने शोध के तहत परीक्षित परिकल्पनाओं एवं तत्सम्बन्धी परिणामों तथा उन तक पहुंचने में प्रयुक्त उपक्रम, विधियों एवं उपकरणों का समुचित विवरण देने के प्रति प्रवृत्त होना पड़ता है ।

इसमें वैज्ञानिक लेखन की शैली का अनुप्रयोग करते हुए पूरे विवरण को समुचित अध्यायों में विभक्त उपयुक्त शीर्षकों एवं उपशीर्षकों के माध्यम से क्रमबद्ध वर्णन प्रस्तुत किया जाता है । इस प्रकार की रिपोर्ट को शोध प्रबन्ध (Thesis) या लघु शोध प्रबन्ध (Dessertation) का नाम दिया गया है

। शोध प्रबंध (Thesis) या लघु शोध प्रबन्ध (Dissertation) जैसे पद कभी-कभी पर्यायवाची रूप में भी प्रयुक्त होते हैं ।

गुड एवं हाट के अनुसार, "एक वैज्ञानिक प्रतिवेदन तैयार करना मूलरूप से तर्क प्रधान निबन्धों या साहित्यिक लेखों से भिन्न है । स्वीकारात्मक एवं निषेधात्मक साक्ष्य का सचेतन प्रस्तुतीकरण करना होता है 1 साथ ही जिससे साक्ष्य को प्राप्त किया गया है, वह प्रविधि भी बतानी होती है ।"

भारतीय शैक्षिक सन्दर्भों में पी-एच.डी, डी.लिट या डी.एससी. स्तर की उपलब्धियों के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्धों को प्राय: थीसिस एवं स्नातकोत्तर स्तर एवं एम.फिल स्तर की उपाधियों के लिए प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्धों को प्राय: डिजर्टेशन की संज्ञा दी जाती है । किन्तु इस बारे में कोई अत्यन्त कठोर एवं सुदृढ़ परम्परा का अनुपालन नहीं हो सकता है । वास्तविकता यह है कि अनुसन्धान विषयक रिपोर्ट को थीसिस (शोध प्रबन्ध), डिजर्टेशन (लघु शोध प्रबन्ध), पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले लेखों या गोष्ठियों के तहत पढ़े जाने वाले पत्रों के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है । इन संदर्भों मे शोध प्रतिवेदनों के प्रस्तुतीकरण सम्बन्धी ढंगों में थोड़ी भिन्नता होती है । इस इकाई में प्रतिवेदन प्रस्तुतीकरण के बारे में विस्तार से जानकारी दी गई है ।

12.2 शोध प्रबन्ध या लघु शोध प्रबन्ध के अवयव (Components of a Thesis or Dissertation)

शोध प्रबन्ध या लघु शोध प्रबन्ध को पूरे शोध के बारे में एक व्यापक प्रतिवेदन कहा जा सकता है । इसके तहत अनुसन्धान की पृष्ठभूमि, उसकी समस्या-मुद्दे या प्रश्न, अध्ययन के उद्देश्यों, उसमें निरूपित एवं मूल्यांकित परिकल्पनाओं प्रतिदर्श जिसके सन्दर्भ में शोध पूरा किया गया है, शोध का अभिकल्प जिसका अनुपालन हुआ है, आधार-सामग्रियों के संकलन हेतु गठित या चयनित वह शोध उपकरण, जिसका अनुसंधान में अनुप्रयोग किया गया है आधार सामग्रियों के विश्लेषण हेतु प्रयुक्त गुणात्मक या परिमाणात्मक प्रतिपादन पद्धति, आधार सामग्री का निर्वचन एवं उसके माध्यम से निरूपित सामान्यीकरण एवं निष्कर्ष तथा भावी शोध-सम्भावनाओं के सम्बंध में सुझावों के अतिरिक्त सम्बद्ध शोध साहित्य एवं वे सन्दर्भ जिनसे उपयुक्ता रूप में उद्धरण लिये गये हों आदि का स्पष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाता है । इस प्रकार शोध प्रबन्ध के तीन मुख्य अवयव हैं :

एक शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा इस प्रकार होती है :

12.2.1 प्रारम्भिक भाग (Preliminaries)

इसमें अधोलिखित सम्मिलित हैं

1. मुख पृष्ठ (Title Page)
2. शोधकर्ता का घोषणा पत्र (The researcher' declaration)
3. शोध निदेशक का प्रमाण पत्र (The certificate of the research supervisor)
4. प्राक्कथन (Acknowledgement)
5. विषय सूची (Table of contents)
6. सारणी सूची (List of tables)

7. चित्रों की सूची (List of figures)

12.2.2 प्रतिवेदन का मूल भाग (Main body of the report)

इसमें निम्नलिखित अध्याय सम्मिलित होते हैं

1. भूमिका या प्रस्तावना (Introduction)
    1.1 भूमिका या प्रस्तावना
    1.2 समस्या कथन
    1.3 अध्ययन का परिसीमन
    1.4 मूलपदों की वैचारिक परिभाषाएं
    1.5 संक्षिप्त रूप यदि हो तो
    1.6 आवश्यकता कथन
2. सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण या समीक्षा (Review of related literature)
3. शोध विधि (Methodology)
4. आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण व विश्लेषण (Data presenting and analysis)
5. निष्कर्ष तथा सारांश (Conclusions and summary)
6. अनुशंसाए (Recommendations)

12.2.3 सन्दर्भ भाग (Reference part)

1. पाद टिप्पणी (Foot notes)
2. ग्रंथसूची (Bibliography)
3. परिशिष्ट (Appendix)
4. अनुक्रमणिका (Index)

उपर्युक्त का विस्तृत विवरण निम्नप्रकार है

12.2.1 प्रारम्भिक भाग (Preliminaries)

प्रारम्भिक भाग प्राय: रोमन अंकों द्वारा व्यक्त किए जाते हैं इसे शीर्षक पृष्ठ कहा जाता है। इसे पृष्ठ के ऊपरी अंश पर "अध्ययन का शीर्षक" दिया जाता है जबकि मध्य में विश्वविद्यालय एवं संकाय का नाम जहाँ शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया जा रहा है, उपाधि या पाठ्यक्रम जिसके तहत पूर्ण या आंशिक रूप में शोध प्रबन्ध की प्रस्तुति अपेक्षित है तथा अध्ययन सत्र जिसमें यह जमा किया जा रहा है, अंकित होते हैं । इसी पृष्ठ के निचले अंश में दाहिनी तरफ शोधकर्ता अपना नाम, शैक्षणिक योग्यता सहित तथा बाई तरफ गाइड (सुपरवाइजर) का नाम, उसकी शैक्षणिक योग्यता तथा उसका पद एवं संस्था का नाम जिसमें वह सुपरवाइजर पदस्थ है ।

शोध प्रबन्ध के अगले पृष्ठों में शोधकर्ता का प्रमाण पत्र एवं इसके बाद शोध के गाइड अथवा सुपरवाइजर का प्रमाण पत्र लगाया जाता है । यह गाइड द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र के रूप में प्रस्तुत होता है तथा पूरे शोध के सम्यक ढंग से सम्पन्न होने का साक्ष्य एवं उसकी प्रामाणिकता का सूचक है । शोध कार्य की स्वीकृति का ज्ञापन करने हेतु गाइड अपने हस्ताक्षर अंकित कर देता है ।

प्रारम्भिक पृष्ठों का तीसरा पृष्ठ प्राक्कथन के नाम से जाना जाता है । यह लगातार दो या तीन पृष्ठों तक चल सकता है । इसके तहत शोध के मुख्य मुद्दे एवं प्रतिवेदन के विविध अध्यायों का अति-संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जाता है । अन्त में कृतज्ञता-ज्ञापन या आभार प्रदर्शन भी अंकित किया जाता है । कभी-कभी इसे अलग से व्यक्त करने की भी परम्परा है । इसमें शोध के लिए वास्तविक रूप में सहायक व्यक्तियों, लेखकों या विशेषज्ञों के प्रति आभार व्यक्त किया जाता है । इसके अतिरिक्त उन संस्थाओं एवं प्राधिकारियों के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापन आवश्यक माना जाता है जिन्होंने शोधकर्ता को औपचारिक या अनौपचारिक ढंग से उत्साहवर्द्धन या मदद की है । सामान्यत: प्राक्कथन का आकार दो या तीन पृष्ठों से अधिक नहीं होना चाहिए ।

अगला पृष्ठ विषय-सूची का होता है जिसमें पूरे प्रतिवेदन के लिए गठित अध्यायों, उनकी अन्तर्वस्तु एवं पृष्ठ संख्या क्रमिक रूप में दिये जाते हैं जिससे शोध प्रबंध पढ़ने वाले को आसानी से उपयुक्त पृष्ठ मिल जाए । इसमें अध्याय के शीर्षक को बड़े अक्षरों द्वारा तथा उसके उपखण्डों को छोटे अक्षरों से अंकित किया जाता है । प्रत्येक अध्याय एवं उसके उपखण्ड को सही पृष्ठ द्वारा व्यक्त किया जाता है ।

इस क्रम में आगे का पृष्ठ सारणी, चित्रों को प्रदर्शित करता है । यह नए पृष्ठ से प्रारम्भ होता है । इसके तहत सारणी का शीर्षक तथा शोध प्रबंध के प्रतिवेदन के जिस पृष्ठ पर वह उपलब्ध है, अंकित कर दिया जाता है ।

इस सारणी सूची के पूरा हो जाने पर प्रतिवेदन में प्रस्तुत आरेख या रेखाचित्रों की सूची प्रस्तुत की जाती है । यह सूची भी नये पृष्ठ पर दी जाती है । इसके तहत आरेख या रेखाचित्र का शीर्षक, उसका संक्षिप्त विवरण एवं प्रतिवेदन के उस पृष्ठ का उल्लेख होता है, जहाँ इसे प्रदर्शित किया गया है ।

12.2.2 प्रतिवेदन का मूल भाग (Main body of the report)

प्रारम्भिक पृष्ठों के तुरन्त बाद प्रतिवेदन की मुख्य विषय-वस्तु कई अध्यायों में प्रस्तुत की जाती है । तार्किक दृष्टि से इसके मुख्य उपभाग इस प्रकार हैं -

1. प्रस्तावना

प्रथम अध्याय में अध्ययन क्षेत्र का परिचय और शिक्षा क्रम में उसके महत्व पर प्रकाश डाला जाता है । तदनंतर समस्या को इसके प्रमुख अंग के रूप में दर्शाते हुए प्रस्तुत किया जाता है । समस्या कथन से पूर्व इससे सम्बन्धित सिद्धांतों एवं कतिपय पूर्व अनुसंधानों के निष्कर्षो का उल्लेख किया जाना समीचीन है । जिससे कि यह स्पष्ट हो सके कि समस्या सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न ऐसे हैं, जो कि अभी तक अनुत्तरित हैं तथा स्वाभाविक रूप में इन प्रश्नों के उत्तर ढूंढने के लिये ही प्रस्तुत समस्या उभरकर सामने आई है । उसी क्रम में परिकल्पनाएँ सूत्रबद्ध की जानी चाहिये तथा मुख्य समस्या यदि प्रश्न रूप में है तो उन उप-प्रश्नों को यही दिया जाना चाहिये जिनके उत्तर प्राप्त करने अभीष्ट हैं । समस्या की सार्थकता और अध्ययन प्रयोजन भी संक्षिप्त एवं स्पष्ट रूप में दिये जाने चाहिये । सीमाएँ, परिसीमाएँ बिंदुगत रूप में उल्लिखित होनी चाहिये । यह अध्याय बहुत ही महत्वपूर्ण है । अत: विचारों की अभिव्यक्ति सरल एवं प्रवाहमयी भाषी में हो । अर्थात् संक्षेप में इसके तहत शोध सम्बंधित मुद्दों की पृष्ठभूमि, शोध की परिकल्पना एवं शोध की सीमाओं का उल्लेख किया जाता है ।

2. सम्बंधित साहित्य का सर्वेक्षण या समीक्षा

द्वितीय अध्याय सम्बन्धी साहित्य की समीक्षा का है । यह भाग वर्तमान अध्ययन के लिये पृष्ठ भूमिका का कार्य करता है । इस अध्याय में शोधार्थी अपनी शोध समस्या पर अद्यतन अन्य शोधकर्ताओं, विद्वानों व वैज्ञानिकों द्वारा किये गये कार्यो का उल्लेख करता है । शोधार्थी शोध से सम्बन्धित पत्र-पत्रिकाओं (Journal), पुस्तकों एवं शोध प्रबन्धों का अध्ययन करता है क्योंकि इसी अध्ययन के आधार पर समस्या की उचित व्याख्या व सीमांकन कर पाता है । इससे यह भी निश्चित होता है कि सम्बन्धित कार्य अन्य कार्यो से किस प्रकार भिन्न है । इसके माध्यम से समस्या समाधान के उपयोगी तत्वों का ज्ञान एवं दिशा निर्देश प्राप्त होते हैं । इसे भी शोधार्थी को व्यवस्थित एवं तर्कपूर्ण ढंग से लिखना चाहिये और अन्त में जो भी सम्बन्धित साहित्य जिसका इस अध्याय मे उपयोग किया गया है उसे पृष्ठ सहित संदर्भ देना चाहिये । अर्थात् संक्षेप हम यह कह सकते हैं कि इसमें शोधार्थी अपनी शोध समस्या से सम्बन्धित अन्य विद्वानों द्वारा किए गए कार्य का उल्लेख करता है ।

3. शोध विधि

इसके अन्तर्गत अनुसंधान में प्रयुक्त विधि, उसके लिए चुने हुए प्रतिदर्श, आधार सामग्री के संकलनार्थ उपयोग में लाए गए शोध उपकरण के चुनाव या निर्माण की प्रक्रिया तथा शोध अभिकल्प जिसका अनुसरण किया गया है, मुख्य रूप में विवेचित होते हैं ।

4. आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण व विश्लेषण

यह शोध प्रतिवेदन का महत्वपूर्ण अध्याय होता है । इस अध्याय में संकलित आँकड़ों को सुनियोजित ढंग से व्यवस्थित कर उनका विश्लेषण एवं व्याख्या की जाती है । आँकड़ों का विश्लेषण कर उससे प्राप्त निष्कर्षो या परिणामों की अन्य शोध परिणामों से तुलना की जाती है तथा यह देखा जाता है कि परिणाम अनुरूप है या विपरीत । यदि परिणाम विपरीत है तो उनके कारणों का उल्लेख करना चाहिये । संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इस अध्याय में जिसमें आधार सामग्रियों के व्यवस्थित स्वरूप, विश्लेषण एवं निर्वचन को क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत किया जाता है ।

5. निष्कर्ष एवं सारांश

इस अध्याय में शोधार्थी अपने किये गये कार्यो के परिणाम का उल्लेख करता है तथा इसमें वह अपनी समस्या के हल को दर्शाता है जिसे उसने परिचयात्मक विवरण में केन्द्र बिन्दु बनाया था। इस अध्याय में शोधार्थी अपनी परिकल्पना की स्वीकृति या अस्वीकृति के बारे में भी बताता है । यदि पूर्व के किसी सिद्धांत या मत से उसके निष्कर्षो का विरोध है साथ ही यह स्पष्ट करता है कि उसके शोध का ज्ञान के विकास में क्या योगदान है । यह अध्याय सम्पूर्ण शोध का सारांश होता है।

6. अनुशंसाएँ

यह शोध का अन्तिम अध्याय होता है । इस अध्याय में शोधकर्ता अपने निष्कर्षो के आधार पर अनुशंसाएं लिखता है । जो कि नीति निर्माताओं एवं पाठकों के लिये उपयोगी होती हैं । अनुशंसाएं स्पष्ट परिलक्षित होनी चाहिये, कि शोधार्थी क्या कहना चाहता है । इसी अध्याय में शोधार्थी सम्बन्धित विषय में और किन किन क्षेत्रों में कार्य किया जाना चाहिये उन्हें भी इंगित करता है ।

12.2.3 संदर्भ भाग (Reference part)

इसके उपभाग इस प्रकार हैं

1. पाद टिप्पणी

इसमें पृष्ठ के नीचे अथवा अध्याय के अंत में पाद टिप्पणियां लिखी जाती हैं ।

2. ग्रंथ सूची

प्रतिवेदन की मुख्य विषय-वस्तु के प्रस्तुत हो जाने के बाद आगे नए पृष्ठ से ग्रंथसूची दी जाती है । इस सूची में ऐसे ग्रंथ जिनका सन्दर्भ प्रतिवेदन के तहत प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में आया है, मुख्य रूप से शामिल किए जाते हैं ।

3. परिशिष्ट

ग्रंथसूची के पश्चात् परिशिष्ट की व्यवस्था की जाती है । इसके अन्तर्गत शोध में प्रयुक्त ऐसी संगत सामग्री प्रस्तुत की जाती है जिसे प्रतिवेदन की मुख्य विषय वस्तु के साथ जोड़ने से शोध प्रबंध का आकार बढ़ता है । परिशिष्ट में सम्मिलित की जाने वाली कुछ मुख्य सामग्रियां इस प्रकार की हो सकती हैं । शोध में प्रयुक्त प्रश्नावली की एक प्रति, अव्यवस्थित प्रदत्त आधार सामग्री जिसका शोध में उपयोग हुआ है, सांख्यिकी विश्लेषण द्वारा प्राप्त विशेष प्रकार की तालिकाएं आदि ।

4. अनुक्रमणिका

शोध प्रबन्ध को पुस्तक या विनिबन्ध (मोनोग्राफ) रूप में प्रकाशित करने की योजना होने पर शोधकर्ता को परिशिष्ट के तुरन्त बाद अनुक्रमणिका तैयार करनी पड़ती है । दो प्रकार की अनुक्रमणिकाए प्राय: गठित की जाती हैं । विषय वस्तु अनुक्रमणिका जिसमें विषय से सम्बंधित पदों तथा लेखक-अनुक्रमणिका जिसमें विभिन्न पृष्ठों पर सन्दर्भित लेखकों का उल्लेख होता है । यह शोध प्रबन्ध के अन्त में प्रस्तुत की जाती है । आवरण पृष्ठों के नीचे शोधकर्ता का संक्षिप्त परिचय भी देने का आम प्रचलन है ।

बोध प्रश्न -1

आपन उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. शोध प्रबंध के मुख्य अवयव बताइये ।

   ....

   ....

2. प्रारम्भिक भाग में क्या-क्या सम्मिलित है ?

   ....

   ....

3. प्रतिवेदन के मूल भाग में क्या प्रस्तुत किया जाता है ?

   ....

   ....

4. संदर्भ में किस-किस को प्रस्तुत किया जाता है ?

   ....

   ....

12.3 शोध प्रबन्ध अथवा लघु शोध प्रबन्ध प्रस्तुति के तहत वैज्ञान्कि लेखन की विशेषताएँ (The features of scientific writing in thesis or dissertation)

सर्वप्रथम हमें स्मरण रखना होगा कि वैज्ञानिक - लेखन तथा साहित्यिक लेखन की शैली में पर्याप्त भिन्नता है ।

"यहां शोधकर्ता का उद्देश्य शोध प्रबन्ध के वाचकों का मनोविद् मनोरंजन या उनका अनुनय (मनाना) करना नहीं है अथवा वह केवल किसी समस्या के सम्बन्ध में अपने अभिमत को रखने, उसके समाधान के बारे में सुझाव देने एवं सामान्य प्रेक्षणों के आधार पर तर्क देने में रूचि नहीं रखता है । इसके विपरीत वह परिकल्पना प्रस्तुत करता है, तथ्यों से समर्थित आधार सामग्रियों का उल्लेख करता है तथा यह विज्ञापित करता है कि वे परिकल्पना को प्रमाणित या अप्रमाणित करती हैं । वैज्ञानिक प्रतिवेदन में स्पष्ट, वस्तुनिष्ठ एवं तार्किक प्रस्तुति तथा साक्ष्य का विश्लेषण अपेक्षित होता है न कि संवेगों से अतिरंजित तर्क या इधर-उधर के विवरण" (अनुदित) । शोध प्रबन्ध प्रस्तुति के तहत वैज्ञानिक लेखन की विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं

1. भाषा (Language)

वैज्ञानिक लेखन में साधारण एवं परिचित शब्दावली के अनुप्रयोग तथा साफ-सुथरी अभिव्यक्ति पर विशेष बल दिया जाता है ।

2. संगठन (Organisation)

प्रतिवेदन के विधि अध्यायों तथा उनमें उपशीर्षकों को तार्किक दृष्टि से सुसम्बन्ध परिप्रेक्ष्य में रखा जाता है । एक अध्याय से दूसरे अध्याय तथा प्रत्येक अध्याय के भीतर विचारों एवं सम्प्रत्ययों के परस्पर तार्किक सम्बन्धों पर ध्यान रखकर शीर्षकों एवं उपशीर्षकों के अन्तर्गत पूरी विषय वस्तु को प्रस्तुत किया जाता है ।

3. एकात्मकता एवं स्पष्टता (Unity and Clarity)

वैज्ञानिक लेखन के तहत एकात्मकता (समरसता) एवं स्पष्टता पर जोर दिया जाता है । इसे सुनिश्चित करने के लिए शोधकर्ता अपने विचारों को एक तारतम्य एवं संगतपूर्ण रूप में प्रस्तुत करता है । उन्हें व्यक्त करने हेतु छोटे-छोटे किन्तु परस्पर तर्कसंगत वाक्यों का अनुप्रयोग माना जाता है । इस प्रकार अनुच्छेद ऐसे ही वाक्यों से मिलकर गठित होता है । जैसा कि वॉन डलेन ने बताया है, शोधकर्ता इस दृष्टि से अपने अध्यायों, अनुच्छेदों एवं वाक्यों को बार-बार मूल्यांकित करता रहता है इससे यह तय किया जा सके कि एक ही जैसे विचार साथ-साथ प्रस्तुत हो सके हैं अथवा नहीं, एक विचार दूसरे विचार को स्वाभाविक रूप मे जोड़ते हैं अथवा नहीं, असंगत एवं पुनरावृत्तिपूर्ण शब्दावली में काट-छांट कैसे लायी जाए तथा पूरी सामग्री को अभिव्यक्ति देने के लिए प्रयुक्त भाषा में अपेक्षित प्रवाह एवं बोधगम्यता किस रूप में बढ़ाई जाए आदि । कुल मिलाकर शोधकर्ता को यह देखना पड़ता है कि शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत प्रयुक्त शब्द, वाक्य एवं अनुच्छेद एक दूसरे से तार्किक रूप में जुडे हों तथा पूरे प्रतिवेदन की सम्प्रेषणशीलता में एक प्रकार की सहजता हो ।

4. अनुपात एवं महत्व (Proportion and emphasis)

पूरे शोध प्रबन्ध को इस ढंग से गठित करना आवश्यक है जिससे उसमें शामिल अध्यायों व उनमें वर्णित विचारों का अनुपात तथा उन पर दिया गया बल यथेष्ट रूप से न्याय संगत प्रतीत हो।

5. रूढ़ियों का प्रयोग (Use of Conventions)

शोध प्रबंध लेखन के तहत उद्धरणों, लेखकों एवं अन्य शोधों या ग्रंथों से ली गई सामग्री को प्रतिवेदन में स्थान देने एवं उन्हें अंकित करने की दृष्टि से कुछ खास रूढियों का प्रयोग किया जाता है । इन्हें सुविधा के लिए निम्न वर्गो में विवेचित किया जा सकता है:

(अ) पृष्ठों एवं अध्यायों का फार्मेट (Page and Chapter format)

पृष्ठों में प्राय: तीन प्रकार के शीर्षक दिए जाते हैं-केन्द्रवर्ती शीर्षक, हाशिये वाले शीर्षक जिन्हें अनुच्छेदों के प्रारम्भ में तथा अनुच्छेद शीर्षक जिन्हें छोटे-छोटे उपवर्गो का परिसूचक कहा जाता है । प्रत्येक अध्याय नए पृष्ठ से प्रारम्भ होता है । यदि पूर्ववर्ती अध्याय का अन्तिम पृष्ठ दो या तीन पंक्तियों का हो तब भी बाद का अध्याय नए पृष्ठ पर शुरू किया जाता है । प्रत्येक अध्याय संख्या नियत होती है तथा उन्हें बड़े अक्षरों में बिना विराम चिन्ह के प्रदर्शित करना पडता है ।

शोध प्रबन्ध के प्रत्येक पृष्ठ को पृष्ठ संख्या द्वारा अंकित करने का रिवाज है, लेकिन कई पृष्ठों पर यह संख्या प्रदर्शित नहीं की जाती । पृष्ठ संख्याओं को दो क्रमों में अलग-अलग ढंग से व्यक्त किया जाता है । प्रारम्भिक पृष्ठों को प्राय: रोमन (i, ii, iii, iv etc) या हिन्दी के वर्णो द्वारा अंकित करने का प्रचलन है । शीर्षक पृष्ठ को (i) या प्रथम वर्ण द्वारा जाना जाता है किन्तु उस पृष्ठ पर इसे अंकित या टंकित नहीं किया जाता ।

(ब) उद्धरणों का प्रयोग (Use of quotations)

शोध प्रबन्धों में उद्धरणों की संगतता अत्यंत महत्वपूर्ण है । इसका आकार इतना दीर्घ नहीं रखना चाहिए कि प्रतिवेदन को पढ़ने वाला यह भूल जाए कि किसके विचारों का आकलन कर रहा है। इस सम्बन्ध में आगे दी हुई रूढ़ियां (रिवाज) आमतौर से प्रचलित है :

1. उद्धरणों का सीधा प्रयोग तभी किया जाता है जबकि लेखक द्वारा प्रयुक्त मूल शब्द इतने प्रभावी एवं संयत ढंग से प्रस्तुत किये गए हों कि शोध प्रबन्ध लेखक उनमें सरलतापूर्वक सुधार करने की स्थिति में न हो अथवा शोधकर्ता उन पर टिप्पणी देना चाहता हो या उनका खण्डन करने की ओर प्रवृत्त हो या उनमें सन्दर्भित विचारों के विश्लेषण में दिलचस्पी रखता हो ।
2. लेखक के शब्दों या किसी सरकारी अभिलेख से लिए गए उद्धरणों को यथावत् प्रस्तुत करना चाहिए ।
3. यदि उद्धरण में दिया गया काल उसकी प्रस्तावना से मेल नहीं रखता हो, एक ऐसा सर्वनाम प्रयुक्त हुआ हो जो विशिष्ट न हो तथा आवश्यकता महसूस किए जाने पर उद्धृत विषयों में 'क्षेपक' का अनुप्रयोग किया जा सकता है ।
4. जब कोई उद्धरण अत्यन्त दीर्घकाय हो तो मूल अनुच्छेद के कुछ अंश को छोडा जा सकता है ।
5. जब उद्धरणों को पाद-टिप्पणी के रूप में दिया जाता है, दोहरे उद्धरण चिन्ह हमेशा प्रयुक्त हैं ।

(स) पाद-टिप्पणियां (Footnotes)

पाद-टिप्पणियों का प्रयोग किसी पृष्ठ के ठीक नीचे या अध्याय के अन्त में अथवा-प्रबन्ध या शोध-पत्र के अन्त में किया जाता है । इसका अनुप्रयोग किसी बिन्दु, अभिकथन या की प्रामाणिकता के लिए किया जाता है जिससे वे उपयुक्त स्रोतों का स्वतंत्र रूप में लाभ उठा पाद-टिप्पणी के तहत जो सूचनाएं दी जाती हैं उनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं सूचना का स्रोत जिसमें आमतौर से लेखक का नाम, स्रोत का शीर्षक, सन्दर्भित स्रोत में वास्तविक पृष्ठ, प्रकाशन-तिथि, प्रकाशक एवं प्रकाशन-स्थान, वर्ष । पाद-टिप्पणियों के लिए कुछ प्रचलित रूढ़ियां इस प्रकार हैं

जब पाद-टिप्पणी पहली बार प्रस्तुत होती है तो उसका सन्दर्भ देते समय लेखक का पूरा नाम, प्रकाशन वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक तथा पृष्ठ संख्या आगे प्रदर्शित रूप में अंकित किया जाता है ।

सामान्यतया एक पादटिप्पणी में निम्नलिखित सूचना समाहित होनी चाहिए - 1. लेखक का नाम, 2. स्रोत की व्याख्या, 3. संस्करण, 4. प्रकाशन स्थल, 5. प्रकाशक का नाम, 6. प्रकाशन की तिथि, 7. पृष्ठ संख्या ।

पाद-टिप्पणियां लिखने की कई परम्पराएं हैं, जिनका वर्णन अधोलिखित है

1. एक सामान्य कृति को पाद-टिप्पणी में इस प्रकार लिखना चाहिए -
   Krishan Kumar, Library Manual, New Delhi, Vikas, 1985, p. 77.
2. एक बार यदि पाद-टिप्पणी में सन्दर्भ दिया गया है, अगर वह पुन: आ रहा है तो दुबारा लेखक, प्रकाशक आदि का नाम लिखने की आवश्यकता नहीं है । इसके लिए स्वीकृत संक्षिप्त पद ibid अर्थात् 'वहीं संदर्भ' का उपयोग किया जा सकता है । इससे प्रलेख की पुनरावृत्ति से बचा जा सकेगा । उदाहरणार्थ -
   Ranganathan, S.R., Library manual, 2nd ed., Bombay, Asia Publishing House, 1960, p. 190.
   Ibid, p.200

द संक्षिप्त रूप

कुछ आंग्ल व लैटिन शब्द संक्षेप जिनका प्रयोग पाद टिप्पणी, ग्रंथ सूची आदि में स्थान बचत के दृष्टिकोण से किया जाता है की सूची अधोलिखित है

संक्षिप्त रूप	**मूल शब्द**	**हिन्दी अर्थ**
annon.	anonymous	अनाम
ante.	before	पहले
bk., bks.	book, books	पुस्तक, पुस्तकें
chap.	Chapter	अध्याय
col., cols.	column, columns	पंक्ति
comn.	Commentary	व्याख्या
diss.	Dissertation	लघुशोध प्रबन्ध

ed., eds	editor, editors	सम्पादक
eng.	Englarged	परिवर्द्धित
et.al	and others	तथा अन्य
e.g.	(exempli gratia) for example	उदाहरणार्थ
et alibi	and elsewhere	और अन्यत्र या दिया गया
et. Seq	and the following	और नीचे दिया गया
fig., figs.	figure, figures	चित्र
fn.	Footnote	पादटिप्पणी
ibid.	same reference	वहीं संदर्भ
idem.	the same	वही
i.e.	that is	अर्थात
illus.	illustrated	चित्रित
infra.	Below	नीचे
introd.	Introduction	भूमिका
loc.cit	the place cited	स्थान उद्दत
mimeo	miemeographed	संस्मरण
m.s.	manuscript	पाण्डुलिपि
n.	number	संख्या
n.d.	no date given	तिथि नहीं दी गई
n.n.	no name given	नाम नहीं दिया गया
n.p.	no place given	स्थान नहीं दिया गया
NB.	(Note bene) taken notice	ध्यान देना
o.p.	out of print	अप्राप्य
op.cit	Previouslu cited	पहले दिया गया
p., p.p.	page, pages	पृष्ठ
pt., pts.	part, parts	भाग
Passim.	here and there	इधर उधर-
rev.	revised	संशोधित
supra.	Above	ऊपर
tr.	Translation	अनुवाद
tr.	Translator	अनुवादक
vide.	see, refer to	देखिए
viz.	namely	अर्थात
vol.	volume	खण्ड

vs.	against	के विरुद्ध

इ. तालिकाएं तथा आरेख (Table and Figures)

ऐसी सूचनाएं जो सारणियों द्वारा दी जाती हैं उन्हें तालिका तथा जो चित्रात्मक माध्यमों जैसे-ग्राफ, चित्र, चार्ट, रेखाचित्र एवं मानचित्रों आदि के जरिए प्रस्तुत की जाती हैं उन्हें आरेख कहा है । यहां स्मरण रखना होगा कि हर शोध प्रबन्ध में सूचना प्रस्तुतीकरण हेतु तालिकाएं एवं आरेख अपरिहार्य माध्यम नहीं माने जा सकते । कतिपय शोधों के तहत केवल उचित शाब्दिक वर्णन ही अपेक्षित रूप से सूचनाएं सम्प्रेषित की जा सकती है । तालिकाओं एवं आरेखों को शोध प्रबन्धों में अंकित करते समय अधोलिखित रूढ़ियों का अनुपालन आवश्यक माना जाता है

1. तालिकाओं तथा आरेखों को शोध प्रबंध की मुख्य वस्तु के तहत अत्यंत निकटता के साथ प्रदर्शित करना उपयोगी होता है जिससे अपेक्षित सूवनाएं एक दूसरे की मदद से विशुद्धतापूर्वक समझी जा सकें ।
2. यदि किसी तालिका या आरेख के प्रदर्शित करने में आधे पृष्ठ से अधिक स्थान लगने की सम्भावना हो तो उन्हें अलग-अलग पृष्ठों पर बीच में किसी विषय वस्तु को दिए बगैर प्रस्तुत करना अधिक समीचीन होगा ।
3. प्रत्येक तालिका या आरेख को शीर्षक के तहत प्रस्तुत करना पड़ता है । इस शीर्षक को जिसके तहत सूचना प्रदर्शित की गई है वाक्य द्वारा न कहकर चित्र परिचयात्मक विवरण की तरह अति संक्षिप्त रूप में दिया जाता है । यह अर्थ की दृष्टि से स्वत: पर्याप्त होता है ।
4. सभी तालिकाओं को लगातार एक क्रम में तथा आरेखों को अलग लगातार क्रम में संख्या चिन्हों द्वारा अंकित करना पड़ता है ।

तालिकाओं एवं आरेखों के साथ यदाकदा पाद-टिप्पणिया भी प्रयुक्त होती है जिससे उनमें उपलब्ध किसी बिन्दु की व्याख्या की जा सके अथवा उनके तहत उपलब्ध संकेताक्षरों या संकेतों को परिभाषित किया जा सके ।

ऱ. सन्दर्भ ज्ञापन

शोध प्रतिवेदन में सन्दर्भों के अन्तर्गत वे ग्रंथ, लेख, दस्तावेज एवं हस्तलिपियां शामिल की जाती है जिनका उपयोग अनुसंधाकर्ता ने अपने शोध को पूरा करने एवं शोध प्रबन्ध लिखने में किया गया है । आमतौर से इस प्रकार के सन्दर्भो को 'ग्रंथसूची' के तहत प्रदर्शित करने का प्रचलन है ।

1. वे रचनाएं जिनसे शोध प्रबंध में उद्धरण लिये गए हैं । ये उद्धरण मुख्य विषय वस्तु के भीतर या पाद-टिप्पणियों के रूप में अंकित हो सकते हैं ।
2. वे स्रोत सामग्रियां जिनका शोध में उपयोग हुआ है । इन्हें व्यापक तौर पर ग्रंथ सूची के में प्रस्तुत करना पड़ता है तथा इनमें पुस्तकों एवं शोध पत्रों को भी शामिल किया जाता है ।
3. विशिष्ट ग्रंथ सूची जिसमें उन स्रोतों का विशेष रूप से उल्लेख होता है जिन्हें अनुसंधानकर्ता अपने शोध के तहत खासतौर से उपयोग में लाया हो ।
4. संक्षिप्त सटिप्पण ग्रंथ सूची जिसे सन्दर्भित साहित्य की ऐसी सूची के रूप में माना जाता है जिसमें ग्रंथों एवं रचनाओं (जिनका उपयोग हुआ है) की अन्तर्वस्तु एवं उपयोगिता के बारे में संक्षिप्त टिप्पणी अंकित होती है ।

(ळ) परिशिष्ट का प्रयोग (Use of Appendix)

परिशिष्ट के अन्तर्गत ऐसे सहायक साक्ष्य शामिल किए जाते हैं जिन्हें प्रतिवेदन की मुख्य विषयवस्तु के साथ प्रस्तुत करने से उसकी सुपाठ्यता में बाधा खड़ी हो सकती है तथा पूरी विषयवस्तु अवबोध की दृष्टि से क्लिष्ट या जटिल बन सकती है । प्रत्येक परिशिष्ट को अलग रूप से विशेष संख्या द्वारा अंकित किया जाता है । इसके बारे में मुख्य विषय वस्तु के भीतर या पादटिप्पणी के तहत उल्लेख करने का रिवाज है ।

6. प्रतिवेदन का आकार (Size of the Report)

भारतीय सन्दर्भो में पी-एच.डी., डि.लिट या डी.एससी. की उपाधियों के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्धों का आकार थोड़ा बड़ा (लगभग 200-400 पृष्ठों तक) एवं एम.ए., एम.एड. तथा एम.फिल. स्तर के लघु शोध प्रबन्धों का आकार अपेक्षाकृत छोटा (लगभग 60 से 150 पृष्ठ तक) रखने का आम रिवाज है।

7. प्रतिवेदन की टंकित प्रति (Type-script of the report)

शोध प्रबन्ध को टंकित कराने के पूर्व हस्तलिखित प्रारूप की प्रथम गति को अत्यन्त सावधानीपूर्वक पढ़कर सम्पादित कर लेना आवश्यक है ।

अशुद्धियों में सुधार हेतु न तो टंकण पर आश्रित होना चाहिए और न ही उसका भरोसा करना उचित है । त्रुटियों के निवारण या बचाव के लिए यह कार्यवाही अपेक्षित है ।

8. प्रतिवेदन का यांत्रिक कक्ष (Mechanical Aspect of the Report)

शोध प्रबन्ध को कभी भी अनाबद्ध पन्नों में नहीं जमा किया जाता । टंकित प्रतियों को प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ प्रतियों में व्यवस्थित कर उन्हें उचित बाहय सज्जा (गेट-अप) के साथ सजिल्द कराया जाता है । आवरण पृष्ठ को मुद्रित कराने का आम रिवाज है । इसे अनावश्यक रूप से आकर्षक बनाने का प्रयास नहीं होना चाहिए । बहुत ही साफ सुथरे ढंग से पूरे शोध प्रबंध को जिल्द सहित जमा करना ही उचित माना जाता है ।

बोध प्रश्न -2

अपना उत्तर लिखने के लिए खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. वैज्ञानिक लेखन की विशेषताएँ बताइये ।

   ……………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………

2. पाद-टिप्पणी क्या है ?

   ……………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………

3. परिशिष्ट को स्पष्ट कीजिये ।

   ……………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………

4. संक्षिप्त रूप को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये ।

   ……………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………

12.4 सारांश (Summary)

शोध प्रबंध की प्रस्तुति एक अत्यंत श्रमसाध्य एवं कौशल की अपेक्षा रखने वाला कार्य है । इसके लिए वैज्ञानिक सोच की अभिक्षमता सम्पादकीय प्रविधियों में दक्षता तथा पर्याप्त धैर्य आवश्यक है । शोध प्रबंध या लघु शोध प्रबंध के तीन अवयव विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं-प्रारम्भिक भाग, प्रतिवेदन का मूल भाग तथा संदर्भ भाग । इन पृष्ठों को प्रस्तुत करते समय उन रूढियों का अनुपालन अनिवार्य होता है जो विश्वविद्यालय या अन्य संगठन जिनमें शोध प्रबंध जमा करना है, मान्य स्वीकार करते हैं । कभी-कभी ये संस्थाएं या संगठन शोध प्रबंध जमा करने सम्बंधी इन रूढियों का अनुपालन कराने हेतु निर्देशक-रूपरेखा (मैनुअल) या निर्देशिकाएं जारी कर देते हैं । ऐसी स्थिति में शोधकर्ता का यह दायित्व है कि उनका अनुपालन करें । इन निर्देशों का अनुपालन न किए जाने पर शोध प्रबंध की स्वीकृति भी खतरे में पड़ सकती है ।

12.5 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. शोध प्रतिवेदन से आप क्या समझते हैं ? इसकी आवश्यकता प्रतिपादित कीजिए ।
2. अपने चयनित विषय पर एक लघु शोध प्रतिवेदन बनाएं ।
3. शोध प्रबंध के प्रमुख अवयवों का विस्तार से वर्णन कीजिए ।
4. पाद टिप्पणी, ग्रंथसूची, परिशिष्ट पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।

12.6 प्रमुख शब्द (Key Words)

प्रारम्भिक भाग (Preliminaries)	:	इसके अन्तर्गत मुख पृष्ठ, शोधकर्ता का घोषणा पत्र, प्राक्कथन, विषय सूची, चित्रों की सूची आदि सम्मिलित की जाती है ।
प्राक्कथन (Acknowledgement)	:	इसमें शोधकर्ता उन सभी संस्थाओं, मित्रों, सहयोगियों, परिवार आदि के प्रति आभार व्यक्त करता है । जिन्होंने परोक्ष या अपरोक्ष रूप से सम्बन्धित समस्या को पूरा करने में सहयोग दिया है ।
सुपरवाइजर (Supervisor)	:	शोधार्थी जिसके मार्गदर्शन में अपना शोध कार्य करता है।
अवयव	–	Component
प्रारम्भिक भाग	–	Preliminaries
शोधकर्ता का घोषणा पत्र	–	Research Declaration
प्राक्कथन	–	Acknowledgement
पाद-टिप्पणी	–	Appendix

12.7 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (Reference and Further Readings)

1. पाण्डेय, के.पी., फण्डामेण्टल ऑफ एजूकेशन रिसर्च, मेरठ : अमिताभ प्रकाशन ।
2. बेस्ट, जॉन डब्ल्यू रिसर्च इन एजूकेशन, दिल्ली : प्रेन्टिस हॉल इन्कार्पोरेशन, 1993 ।
3. डलेन वान तथा डेववाल्ड बी. वान., अण्डरस्टेण्डिंग एजूकेशन रिसर्च : एन इन्ट्रोडक्शन, मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, 1973.
4. Anderson, I., and other, Theses and assignment writing, New Delhi : Wiley Eastern Limited, 1973.
5. Goode, W.J., and Hatt, P.K., Methods in social research, New York : Mc Graw Hill, 1952.
6. Kerlinger.F.N., Foundation of Behavioural research, New Delhi : Surjeet Publications, 1985.
7. Kothari, C.R., Research methodology : Methods and techniques, Ed.2, New Delhi : Wishwa Prakashan, 2001.
8. Krishan Kumar, Research methods in library and information science, New Delhi : Vikas, 1992.
9. सूद, एस.पी., ज्ञान जगत एवं विषय जगत, जयपुर:राज पब्लिशिंग हाउस, 1998 ।

इकाई-13

अनुसंधान में सॉपटवेयर पैकेजों का अनुप्रयोग

Application of Software Packages in Research

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 सांख्यिकीय पैकेजेस्

13.2.1 सांख्यिकी क्या है?

13.2.2 सांख्यिकीय डेटा के प्रकार

13.3 विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर पैकेजेस्

13.3.1 सांख्यिकीय पैकेजों की विशेषता

13.3.2 माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल

13.3.3 स्टेटिस्टिकल पैकेज फॉर सोशल साइंसेस

13.4 सांख्यिकीय विश्लेषण के लिए अन्य सॉफ्टवेयर पैकेजेस

13.5 सारांश

13.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.7 प्रमुख शब्द

13.8 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची

13.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं :

1. सांख्यिकी का सामान्य परिचय प्रदान करना ।
2. विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयरों पैकेजों से अवगत करवाना ।
3. माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल के बारे में विस्तार से चर्चा करना ।
4. तालिका, चार्ट एवं ग्राफ बनाने की विधि से अवगत करवाना ।

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामाजिक विज्ञानों में बड़ी मात्रा में प्राथमिक आंकड़ें एकत्रित किए जाते हैं । आँकड़ों की इस विशाल एवं विविध मात्रा को व्यवस्थित ढंग से त्रुटिरहित प्रस्तुत करना शोधार्थी के लिए बड़ी समस्या रही है । कम्प्यूटर के प्रचलन से पूर्व जब शोधार्थी आँकड़ों का विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण स्वयं करता था तब यह समय, श्रम एवं धन की दृष्टि से बहुत खर्चीला था । आज कम्प्यूटर के अनुप्रयोग से आँकड़ों का कोडकरण प्रक्रियाकरण विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण त्रुटिरहित एवं आसान हो गया है । कम्पयूटर की सहायता से सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग सरलता से किया जा सकता है । आज सामाजिक विज्ञान

एवं प्राकृतिक विज्ञान में कई ऐसी संस्थाएं हैं जो पारिश्रमिक पर इस श्रमसाध्य कार्य को कम्प्यूटर की सहायता से सुगमता से कर देती हैं । इससे शोधार्थी के समय की बहुत बचत होती है । आज कम्प्यूटर के अनेक सॉफ्टवेयर पैकेजस है जैसे BMD, OSIRS-IV, SAS, MINITAB, PSTAT, MINI-REGRESSION आदि । इनकी सहायता से आवृत्ति-वितरण, पक्ष-विश्लेषण, सह-सम्बंध विश्लेषण, समूह-विश्लेषण, मूल घटक विश्लेषण आदि (Frequency distribution, factor analysis, correltion analysis, cluster analysis, principal component analysis etc) को विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर पैकेजेस की सहायता से किया जा सकता है । इतना ही नहीं शोधार्थी कम्प्यूटर की सहायता से अपनी शोध समस्या की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप सॉफ्टवेयर प्रोग्राम तैयार करवा सकता है । कम्प्यूटर की सहायता से असंख्य आँकड़ों को तुरंत ही पूर्ण शुद्धता के साथ विश्लेषित किया जा सकता है ।

शोधार्थी समस्या चयन, सम्बंधित साहित्य के सर्वेक्षण, उपकरणों का चयन, आंकड़ा संग्रहण, आंकड़ा विश्लेषण, प्रस्तुतीकरण और प्रतिवेदन लेखन यानि प्रत्येक स्तर पर कम्प्यूटर एवं इन्टरनेट का उपयोग करता है । इसलिए शोधार्थी को कम्प्यूटर एवं इन्टरनेट के बारे में मूलभूत बातें अवश्य जान लेना चाहिए । उसे इस क्षेत्र में हो रही नई-नई खोजों, डेटाबेस विकास और नए सॉफ्टवेयर विकास से अवश्य अवगत होना चाहिए । यह कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी आदि शोध के प्रत्येक चरण पर सहायता प्रदान करते हैं । ये शोधार्थी के कार्य को सुगम एवं सरल बना देते हैं । इससे समय, श्रम और धन की बचत होती है । इस इकाई में अनुसंधान सॉफ्टवेयर पैकेजों के अनुप्रयोग की विस्तार से जानकारी दी गई है ।

13.2 सांख्यिकीय पैकेजेस (Statistics)

13.2.1 सांख्यिकी क्या है ?

शब्द 'सांख्यिकी' के लिए अंग्रेजी में 'Statistics' शब्द का प्रयोग किया जाता है । शब्द ' Statistics 0पु' की उत्पत्ति या तो लैटिन भाषा के शब्द 'Status' अथवा इतावली भाषा के शब्द 'statistica' अथवा जर्मन भाषा के शब्द 'Statistick' से हुई है । यहां पद 'Statistics' का उपयोग अंकीय तथ्यों अथवा डेटा के संग्रह के लिए उपयोग में लाया गया है । इसके साथ-साथ इस शब्द का प्रयोग 'अंकीय डेटा के विश्लेषण के लिए प्रविधियों अथवा तकनीकों आदि के समूह' के लिए भी किया गया है । सांख्यिकी बहुत से कार्यो को करती है जिनमें प्रमुख हैं: यह जटिलताओं को सरल बनाती है । डेटा की तुलना करने में सहायता करती है । तथ्यों या आँकड़ों को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करती है । तथ्यों एवं आँकडों के मध्य सह-सम्बंधों का अध्ययन करती है । परिकल्पनाओं के परीक्षण और अनुमानों को प्रस्तुत करने में सहायक है । नीतियों के निर्माण और उनके क्रियान्वयन को मापने में सहायता करती है आदि-आदि ।

सांख्यिकी का आज के दिन-प्रतिदिन के कार्यो और शोध में बहुत महत्व है । सांख्यिकी के अनुप्रयोग से हम परिणामों को परिशुद्धता के साथ प्रस्तुत कर सकते हैं और भविष्य के लिए अनुमान लगा सकते हैं ।

13.2.2 सांख्यिकीय डेटा के प्रकार (Types of Statistical Data)

सांख्यिकीय डेटा कई प्रकार का होता है, जैसे :-

13.2.2.1 गुणात्मक और मात्रात्मक डेटा (Qualitative and Quantative Data)

भौतिक विज्ञान के अधिकांश आंकड़ें मात्रात्मक होते हैं । अधिकांश सांख्यिकीय प्रविधियां मात्रात्मक आँकड़ों पर आश्रित हैं । मात्रात्मक डेटा अथवा चरों को आगे दो प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है विवेचित डेटा (Discrete Data) और सतत डेटा (Continuous Data), विवेचित डेटा परिमित होता है अथवा ये गणना योग्य हैं । उदाहरण के लिए, एक पुस्तकालय में पाठकों की संख्या 825 अथवा 899 हो सकती है किन्तु 899.9 नहीं हो सकती है । इसी तरह सतत डेटा सम्भावित मूल्यों का अपरिमित सेट है । उदाहरण के लिए, पाठकों की ऊंचाई का कथन एक निश्चित मूल्य जैसे 155 सेमी अथवा 156 सेमी न कह कर यह 155.59 सेमी अथवा 155.49 यानि एक सतत् क्रम में होती है ।

जब वैज्ञानिक कथनों को परिभाषा के रूप में व्यक्त करता है तो वह डेटा गुणात्मक डेटा होता है ।

13.2.2.2 अपरिष्कृत और परिष्कृत डेटा (Raw and Processed Data)

सांख्यिकी का वह डेटा जो अपने मूल स्वरूप में है तथा जो अव्यवस्थित है उसे अपरिष्कृत डेटा कहा जाता है और यह अपरिष्कृत डेटा किसी सांख्यिकीय प्रविधि के माध्यम से प्रक्रियाकृत किया जाता है तो इसे परिष्कृत डेटा कहा जाता है ।

13.2.2.3 प्राथमिक डेटा और द्‌वितीयक डेटा (Primary and Secondary Data)

प्राथमिक डेटा वे डेटा होते हैं जो शोधार्थी स्वयं एकत्रित करता है और द्‌वितीयक डेटा दूसरे के द्‌वारा अपने उद्देश्य के लिए एकत्रित किए जाते हैं या जो प्रकाशित हो चुके थे और बाद में उन्हें अपने उद्देश्यों के लिए प्रयोग किया जाता है तो उसे द्‌वितीयक डेटा कहा जाता है ।

13.2.2.4 आंतरिक और बाहय डेटा (Internal and External Data)

जिन डेटा को आंतरिक स्रोतों से एकत्रित किया जाता है उन्हें आंतरिक डेटा कहा जाता है और जिन्हें बाहय स्रोतों से एकत्रित किया जाता है उन्हें बाहय डेटा कहा जाता है ।

13.2.2.5 डेटा मापन पैमाना

मापन के पैमाने के आधार पर डेटा को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :

(अ) सांकेतिक आंकड़ें (Nominal Data)

वैयक्तिक इकाईयों की पहचान के रूप में संख्याओं को निर्धारित करने के लिए सांकेतिक पैमाने का उपयोग किया जाता है । उदाहरण के लिए विषयानुसार पुस्तकों का वर्गीकरण । इसमें श्रेणी को बताने के लिए संख्या निर्धारित कर दी जाती है क्योंकि संख्या श्रेणी के मात्र नाम का प्रतिनिधित्व करती है ।

(ब) क्रमसूचक आंकड़ें (Ordinal Data)

यह किए गए अवलोकनों के लिए नियत की गई संख्याओं के मध्य आपसी सम्बंध के क्रम का संकेत करता है । उदाहरण के लिए पुस्तकालय कर्मचारियों के व्यवहार के अध्ययन के लिए शोधार्थी निम्नानुसार क्रम निर्धारित कर सकता है :

1. खराब को संकेत करने हेतु
2. साधारण को संकेत करने हेतु
3. अच्छे को संकेत करने हेतु
4. बहुत अच्छे को संकेत करने हेतु ।

यहां 1, 2, 3, 4 संख्याएं क्रमसूचक आंकड़ें हैं । ये इस बात का संकेत करते हैं कि संख्या 4, 3 से बेहतर है और 3, 2 से बेहतर है आदि । यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि क्रमसूचक आंकड़ें भिन्नता की दिशा बताते हैं । ये भिन्नता की सही मात्रा का वर्णन नहीं करते हैं ।

स. अन्तराल आंकड़ें (Interval Data)

अन्तराल आंकड़ें, आँकड़ों एवं समान मापन की विभिन्न श्रेणियों के मध्य अन्तर की श्रेणियां हैं । उदाहरण के लिए बच्चों के समूह का बौद्धिक स्तर का मापन कर सकते है। प्रत्येक बच्चे के बौद्धिक स्तर का संख्यात्मक मान निर्धारित करने के बाद इन आँकड़ों को 10 के अन्तराल के समूह में रखा जाता है । जैसे 0-10 10-20 20-30 और 30-40 आदि-आदि । यहां 0 से आशय यह नहीं है कि उसमें बुद्धिमता शून्य है और जिन छात्रों/बच्चों का IQ 20 है उसका मतलब यह नहीं है कि वे IQ स्तर में 10 से दुगने बुद्धिमतापूर्ण हैं ।

(द) अनुपात आंकड़ें (Ratio Data)

ये आंकड़ें चर का परिमाण/मात्रात्मक के अर्थ में मात्रात्मक मापन है ।

13.3 विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर पैकेजेस (Various Statistical Software Packages)

एक सांख्यिकीय पैकेज वस्तुतः एक सॉफ्टवेयर होता है । इस सॉफ्टवेयर की सहायता से कम्प्यूटर पर अंकीय सूचना का संग्रहण, व्यवस्थापन, विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण सरलता और परिशुद्धता के साथ किया जा सकता है । आज तथ्यों एवं अंकीय सूचनाओं की विशाल मात्रा ने सांख्यिकीय पैकेजों के निर्माण को गति प्रदान की है । शोध एवं विकास, नीति-निर्माण, क्रियान्वयन, फीडबैक, अनुमान आदि के लिए गणनाओं एवं उनके विश्लेषण में परिशुद्धता की नितांत आवश्यकता है । उपर्युक्त इन सभी कार्यो को सांख्यिकीय पैकेज की सहायता से आसानी से किया जा सकता है ।

आज विविध प्रकार की सांख्यिकीय गणनाओं और विश्लेषण के लिए अनेक प्रकार के सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं । इनमें से कुछ प्रमुख सॉफ्टवेयरों के नाम इस प्रकार हैं :

माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल

स्टैटिस्टिकल पैकेज फॉर सोशल साइंसेस (SPSS)

मिनिटेब

एस-प्लस

बीएमडीपी

एसएएल सिस्टम

OSIRIS

DATA-TEXT

TSAR

GLIM

13.3.1 सांख्यिकीय पैकेजों की विशेषता

आज सूचना प्रौद्योगिकी के अभ्युदय और उसके निरन्तर विकास ने मानवीय गतिविधि के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी ने दिन-प्रतिदिन किए जाने वाले कार्यो को अत्यंत सरल कर दिया है। आज व्यक्ति एवं संस्थाएं अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यो को सही एवं तीव्र गति से करने के लिए कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी का भरपूर उपयोग कर रहे हैं। पर्सनल कम्प्यूटर के आने से व्यक्ति अपने कार्य की प्रकृति एवं आवश्यकता के अनुरूप कम्प्यूटर में सॉफ्टवेयर को लोड करके कार्य कर सकता है। शोधार्थियों के लिए यह खुशखबरी है कि वे पर्सनल कम्प्यूटर में अपनी आवश्यकता के अनुरूप सॉफ्टवेयर को लोड करके इच्छित कार्य को सही एवं सुचारू रूप से कर सकते हैं। शोध कार्य में आंकड़ा विश्लेषण, तालिकाकरण ग्राफिक प्रस्तुतीकरण, सांख्यिकीय विश्लेषण आदि-आदि कार्यो को करने के लिए कई प्रकार के सांख्यिकीय पैकेज बाजार में उपलब्ध हैं।

13.3.2 माइक्रोसॉपट एक्सेल (Microsoft Excel)

माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल एक उपयोगी एवं उपयोक्ता-मैत्रीपूर्ण सॉफ्टवेयर है। माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल ऑफिस 2002 का एक सहायक प्रोग्राम है। माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल में इलेक्ट्रॉनिक वर्कशीट, ग्राफिक्स और डेटाबेस का उपयोग अत्यंत सरलता के साथ किया जा सकता है। माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल में एक वर्कशीट है जिसमें खाने (Cells) होते हैं जिनमें डेटा इनपुट किया जा सकता है। हम यह भी कह सकते हैं कि माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल वर्कशीट खानों का एक संग्रह है। इस वर्कशीट पर माउस और की-बोर्ड की सहायता से फॉर्मेटिंग सरलता से की जा सकती है। (देखिए चित्र 13.1 एम.एस. एक्सेल की स्क्रीन)

माइक्रोसॉपट एक्सेल की स्क्रीन के प्रमुख भाग

एक्सेल एक उपयोगिता मैत्रीपूर्ण प्रोग्राम है। मॉनीटर स्क्रीन पर दिखने वाले एक्सेल की विंडो के प्रमुख भागों का वर्णन इस प्रकार है

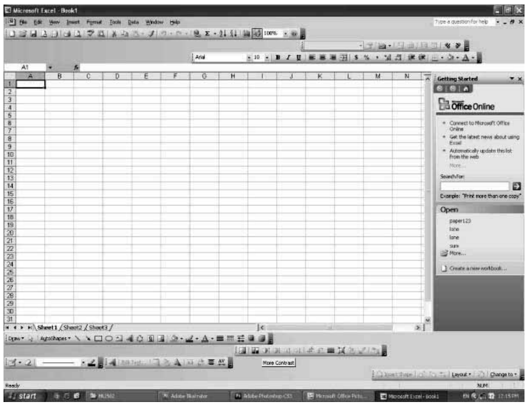

चित्र 13.1 एमएस एक्सेल की प्रथम स्क्रीन

(i) वर्कशीट

वर्कशीट एक तरह का कार्य करने का क्षेत्र है । इस शीट की संरचना की तुलना एक विशालकाय ग्राफ पेपर से की जा सकती है जिसे पंक्तियों और कॉलमों में विभाजित किया गया है । कम्प्यूटर की मॉनीटर स्क्रीन पर यह हमें दिखाई देता है । जहाँ पर हम डेटा इनपुट कर सकते हैं । इस वर्कशीट पर हजारों पंक्तियां और 256 कॉलम दिए गए है । वर्कशीट का आकार बहु त बड़ा है । इस पूरी वर्कशीट को मॉनीटर स्क्रीन पर न तो एक साथ देख सकते हैं और न ही प्रिंटर की मदद से प्रिंट कर सकते हैं । इसके छोटे भाग को स्क्रीन पर खिसका कर देख सकते हैं और खण्डों-खण्डों में प्रिंट प्राप्त कर सकते हैं ।

स्क्रीन के भागों के अन्य नाम इस प्रकार हैं : टाइटलर बार, मैन्यू बार, टूल बार, फार्मूला बार, कॉलम लेबल, रो लेबल, स्कॉल बार ।

(ii) सैल की फॉर्मटिंग करना

एक्सेल 2002 में सैल की फॉर्मेटिंग शोधार्थी अपनी आवश्यकता के अनुसार कर सकता है । डेटा के प्रकार के आधार पर प्रत्येक कॉलम फील्ड को निर्धारित कर सकता है । यह विभिन्न प्रकार के डेटा फार्मेट्स का समर्थन करता है । शोधार्थी डायलॉग बॉक्स में दी गई विभिन्न Category में से अपने द्वारा चाही Category को चुन सकता है । category number के चुनने पर दाहिनी तरफ उसके अनुरूप आवश्यक निर्धारण हेतु विभिन्न विकल्प प्रदर्शित होते हैं । इनका प्रयोग करके हम सेल में लिखे जाने वाले अंकों के प्रकार का निर्धारण कर सकते हैं । (देखिए चित्र-13.2 फॉर्मेटिंग सेल्स)।

एक बार सेल्स के प्रकार के निर्धारण के पश्चात् फार्मेट की परवाह किए बिना डेटा की प्रविष्टि की जा सकती है और एमएस एक्सेल प्रविष्टित किए गए डेटा की गणना कर सकता है ।

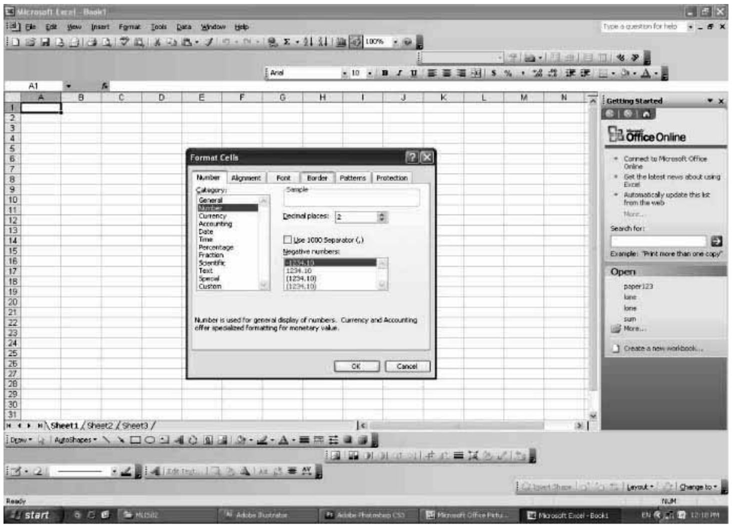

चित्र 13.2 फॉर्मेटिंग सेल्स

वर्कशीट में विभिन्न फंक्शंस को इन्सर्ट करना

एक्सेल 2002 में वर्कशीट में विभिन्न फंक्शंस का कार्य करने के लिए इसके इन्सर्ट मैन्यू में दिए गए विकल्प Function पर क्लिक करने पर चित्र दिखाई देता है । (देखिए चित्र 13.3 इन्सर्ट फंक्शंस)

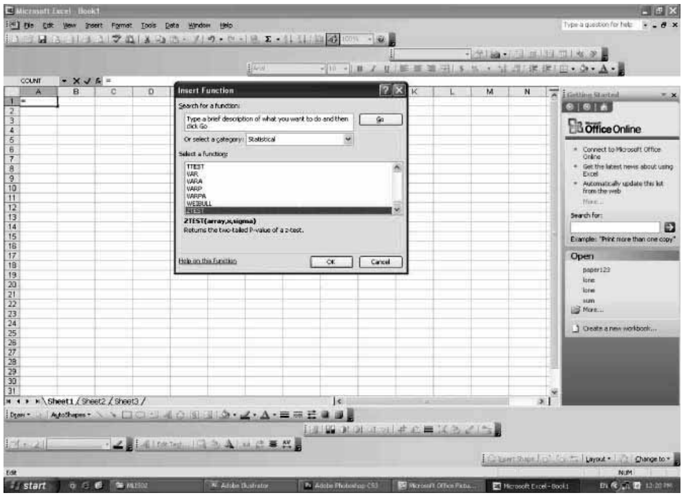

चित्र 13.3 : इन्सर्ट फंक्शंस स

इसमें category statistical चयन करने पर सांख्यिकी से सम्बंधित फंक्शंस आते हैं । जिनके द्वारा हम विशेष प्रकार की गणनाएं कर सकते हैं । इसके लिए हमें फॉर्मूला लिखने की जरूरत नहीं है । लेकिन वर्कशीट में सैल अथवा सैल रेन्ज का निर्धारण करना होगा । जैसाकि चित्र 13.3 में हमने देखा कि एमएस एक्सेल के इन्सर्ट फंक्शंस में जाकर category statistical का चयन करने पर आगे फंक्शंस के चयन के लिए कम्प्यूटर पर प्रदर्शन आता है और आप के Z-test का चयन करने पर उसके नीचे यह नोट लिखा मिलता है - "Returns the two tailed P-value of a Z-test" अगर आप इस विवरण से सन्तुष्ट नहीं है तो और अधिक विवरण के लिए स्क्रीन के बांयी तरफ लिखे हुए "Help on this function" पर क्लिक कर सकते हैं और क्लिक करने पर Z-test के बारे में विस्तार से विवरण मिल जाता है । (देखिए चित्र 13.4 एमएस एक्सेल में Z-test में Help fnction का स्क्रीन चित्र)

चित्र 13.4 एमएस एक्सेल में Z-test में Help function का स्क्रीन चित्र

एमएस एक्सेल एक सांख्यिकीय गणनाओं के लिए बनाया पैकेज है जिसकी सहायता से हम आंकडा विश्लेषण के बहुत से कार्य बड़ी सरलता से कर सकते हैं । एमएस एक्सेल में Tool Bar पर क्लिक करने पर बहुत सारे फंक्शन दिखाई देंगें। इसमें Data Analysis पर क्लिक-करने पर Data

Analysis Tools का प्रदर्शन होता है जिनका प्रयोग शोधार्थी अपनी आवश्यकता अनुसार कर सकता है । शोधार्थी को प्रत्येक विश्लेषण के लिए डेटा और पैमाने को प्रदान करना पड़ता है । Analysis Tools समुचित सांख्यिकीय फंक्शन का उपयोग करता है और परिणामों को तालिका के रूप में प्रदर्शित करता है । कुछ Tools तालिका के अतिरिक्त चार्ट का प्रदर्शन भी करते हैं । (देखिए चित्र 13.5 : एमएस एक्सेल में आकड़ा विश्लेषण उपकरण)

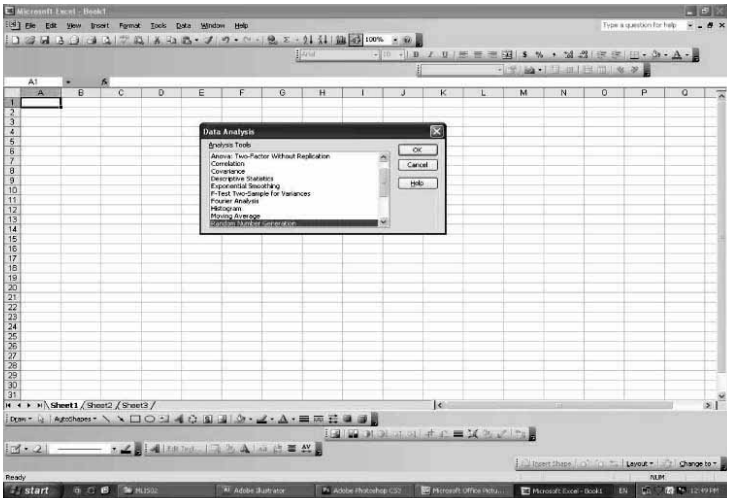

चित्र 13.5 एमएस एक्सेल में आकड़ा विश्लेषण उपकरण

(iii) डेटा की सॉर्टिंग करना

एक्सेल 2002 में वर्कशीट में लिखे हुए डेटा को एक कम में व्यवस्थित करने के लिए डेटा मैन्यू में दिए गए विकल्पों का प्रयोग किया जाता है । इसमें विभिन्न डेटा को एक कम में व्यवस्थित करने के लिए डेटा मैन्यू में दिए गए Sort विकल्प का प्रयोग करते हैं । इस विकल्प का प्रयोग करने के लिए वर्कशीट पर जिन कॉलम्स में डेटा को क्रमबद्ध किया जाना है उन्हें चुना जाता है । उसके पश्चात डेटा मैन्यू में Sorting विकल्प पर क्लिक किया जाता है । इससे Sort डायलॉग बॉक्स प्रदर्शित होता है । इस डायलॉग बॉक्स में Sort बढ़ते क्रम में करनी है या घटते क्रम में अर्थात् Ascending एवं Descending किस क्रम में करनी है, इसका निर्धारण किया जाता है । (देखिए चित्र 13.8 एमएस एक्सेल में डेटा सॉटिग का चित्र) ।

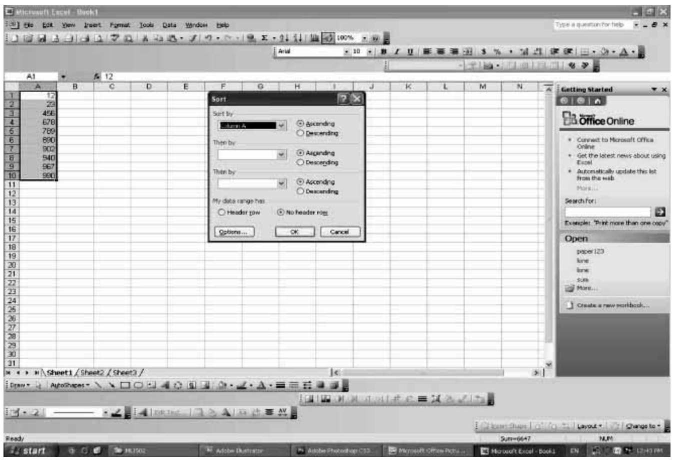

चित्र 13.6 एमएस एक्सेल में डेटा विश्लेषण

उपकरण	कार्य	उपयोग
ANOVA	ANOVA उपकरण प्रसरण विश्लेषण के विभिन्न प्रकारो को प्रदान करता है	यह इस परिकल्पना का परीक्षण करता है की प्रत्येक Sample एक ही प्रायिकता वितरण से लिया गया है ।
Comelation Covriance सहसंबन्धित - प्रसारण-सह	दो चरों के मध्य सहसंबन्धि-त गुणांक सहप्रर्ण की गणना करना।	प्रत्येक युग्म के चरों का निर्धारण करना कि वे दोनों एक साथ गतिशील है ।
वर्णनात्मक सांख्यिकी Desciptive Statics	केन्द्रीय प्रवृत्ति और डेटा की परिवर्तनशीलता के बारे मे सूचना देने के डेटा को एकल चर सांख्यिकी के प्रतिवेदन को स्रजित करना ।	यह डेटा को ब्याख्यापरक स्वरूप में वर्णित करता है और डेटा को सांख्यिकी जैसे माध्य, बहुलक,मध्यिका, मानक विचलन वैषम्यता आदि में प्रदर्शित करता है।
चर घातांकीय Exponential Smoothing	पूर्वर्ती कालखण्ड के लिए पूर्वानुमानों के आधार स्थिरांक के आधार पर एक मूल्य की भविष्यवाणी करता है ।	स्थिरांक के आधार पूर्वानुमानों करना।
क्रम एवं प्रतिशत Rank and Percentile	क्रम एवं प्रतिशतता विश्लेषण एक तालिका का विवरण समुच्चय में प्रत्येक मूल्य का प्रतिशत क्रम बताता है ।	विवरण समुच्चय मे किसी मूल्य की सापेक्ष स्थिति का विश्लेषण करना ।
एफ टेस्ट-F-test	दो जनसंख्याओं के प्रसरणों की तुलना करने के लिए द्विनिदर्शन-एकटेस्ट- किया जाता है ।	निदर्शन समान तथ्य का परीक्षण करता है कि दोनों निदर्शन समान प्रसरण के प्रायिकता घनत्व से लिए गए हैं ।
बहुभुज Histogram	बहुभुज विश्लेषण किसी चर अथवा चर समूह की वैयक्तिक और समुच्चय आवृत्तियों की गणना करता है।	चर की आवृत्ति को दर्शना ।
समाश्रय विश्लेषण Regression Analysis	आँकड़ो के समुच्च पर न्यूनतम वर्ग विधि से एक रेखा का आसंजन कर रेखीय एकल	एक एकल आश्रित चर कैसे एक अथवा अधिक स्वतंत्र चरों के मूल्य द्वारा प्रभावित होता है इसका

	समाश्रयण विश्लेषण करता है।	विश्लेषण करता है।
निदर्शन विश्लेषण Sampling Analysis	जनसंख्या मे से निदर्शन को निकलता है किसी बड़ी जनसंख्या मे से निदर्शन के आधार पर किसी जनसंख्या का सांख्यिकी विश्लेषण करता है।	निदर्शन के आधार पर जनसंख्या के बारे में परिणाम निकालना ।
टीटेस्ट-, जेड टेस्ट- T-test, Z-test	यह इस तथ्य का निर्धारण करता है कि दोनों निदर्शन एक ही मध्य की जनसंख्यों से लिया गए है ।	यदि जनसंख्याओ के प्रसरण ज्ञात एवं अज्ञात हो तब उनके माध्यों की तुलना करता है ।

स्रोत: माइक्रोसॉपट एक्सेल के Help function पर आधारित है ।

(iv) चार्ट टूलबार का प्रयोग

उपयोगकर्ता अपने डेटा का ग्राफीय प्रस्तुतीकरण करना चाहता है तो Chart wizard का प्रयोग कर सकता है और जिस प्रकार के चार्ट का वह उपयोग करना चाहता है उसका चयन कर सकता है । एमएस एक्सेल में यह अच्छी सुविधा है कि वह किसी भी प्रकार के चार्ट अथवा ग्राफ का प्रदर्शन तुरन्त ही कर देता है । चार्ट विभिन्न प्रकार के हैं जैसे- Column, Bar, Line, Pie, XY(Scatter), Area, Doughnut, Ladpr, Surface, Bubble, Stock, Cylinder, Cone, Pyramid (देखिये चित्र 13.7 एमएस एक्सेल में Chart wizard का चित्र)

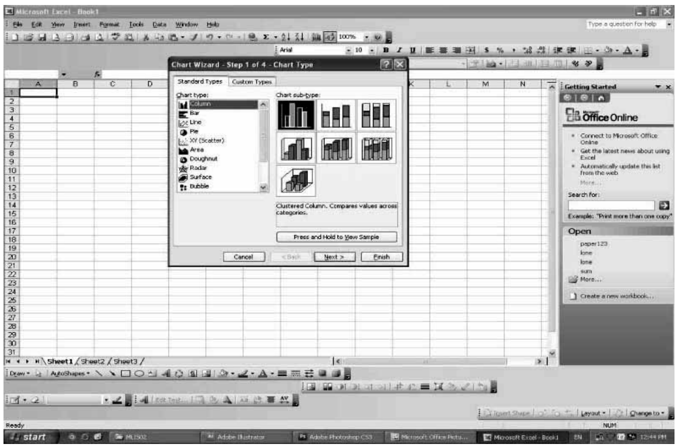

चित्र 13.7 एमएस एक्सेल में Chart Wizard का चित्र

(v) एमएस एक्सेल के लाभ

एमएस एक्सेल के लाभ इस प्रकार हैं :-

1. इसमें बड़ी मात्रा में डेटा का विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण आसानी से किया जा सकता है ।
2. इसके द्वारा प्रदत्त परिणाम परिशुद्ध होते हैं ।
3. वर्कशीट अथवा उसके हिस्सों को मिलाया अथवा बढाया जा सकता है ।
4. इसमें अन्य सॉफ्टवेयरों से डेटा का आयात एवं निर्यात किया जा सकता है ।
5. इसमें वर्कशीट डेटा का प्रस्तुतीकरण पिक्चर स्वरूप में किया जा सकता है ।

6. डेटा का प्रस्तुतीकरण करने के लिए विभिन्न प्रकार के सांख्यिकीय सूत्रों का उपयोग किया जा सकता है ।
7. इसमें फार्मूले स्वचालित रूप से पुन: गणना कर लेते हैं, जब संख्याएं बदलती हैं ।
8. यह ग्राफिक यूज़र इन्टरफेस (GUI) का उपयोग करता है ।
9. यह एक उपयोक्ता मैत्रीपूर्ण सॉफ्टवेयर है ।

बोध प्रश्न- 1

1. अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

 ....

 ....

2. सांख्यिकी क्या है?

 ....

 ....

3. सांख्यिकी डेटा के प्रकार बताइये ।

 ....

 ....

4. डेटा मापन पैमाना की श्रेणियां बताइये
5. क्रम सूचक आकड़ों को स्पष्ट कीजिये ।

 ....

 ....

13.3.3 स्टेटिस्टिकल पैकेज फॉर सोशल साइंसेस् (Statistical Package for Social Sciences (SPSS)

एसपीएसएस एक बहु त लोकप्रिय पैकेज है । यह एक शक्तिशाली सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर पैकेज है । इस सॉफ्टवेयर का विकास 1960 के दशक में स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के स्नातक छात्रों के द्वारा किया गया । इस सॉफ्टवेयर पैकेज की सहायता से विशाल मात्रा के आँकड़ों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है । इसकी सहायता से समूहों के मध्य महत्वपूर्ण अन्तर को ज्ञात किया जा सकता है और चरों के मध्य सम्बंधों का परीक्षण करने के साथ-साथ उन्हें ग्राफिक रूप में प्रस्तुत भी किया जा सकता है ।

एमएस एक्सेल और एसपीएसएस दोनों ही सांख्यिकीय विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं लेकिन दोनों में अन्तर यह है कि एसपीएसएस का आउटपुट सांख्यिकीय विश्लेषण की दृष्टि से ज्यादा विस्तृत एवं महत्वपूर्ण होता है । एसपीएसएस में निम्नलिखित सांख्यिकीय प्रविधियों का उपयोग करके परिणाम प्राप्त किया जा सकता है

Person chi-square, Fisher’s sxact test, Cramer’s V, Liklihood-ratio Chi-square, Yates corrected Chi-square, Contingency Cofficient, Phi, Spearman’s rho, symmetric and asymmetric lambdas, Linear-by-linear association test, Cochran’s Kendall’s tau-c, eta coeffi-cient, McNemar

test,Mantel-Haenszel Statistical, Goodman and Kruskal's tau, gamma, Cohen;s Kappa, relative risk estmate, uncertainty Cofficient, Somer'sd, Kendall's tau-b, Odds ratio.

एसपीएसएस में सांख्यिकीय विश्लेषण के फलन (कार्य)

प्रतिवेदन)Report(	OLAP (Online analysis Processing) Cubes, क्रियाविधि का सक्षिप्तिकरण पंक्तियों में प्रतिवेदन संक्षिप्त में प्रस्तुत करता है, कॉलम आधार में प्रतिवेदन संक्षेप में प्रस्तुत करता है ।
वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descriptive Statistics)	आवृत्तियों, वर्णनात्मक गवेषण क्रियाविधि, आनुपातिक सांख्यिकी विधि ।
तुलनात्मक माध्य	माध्य विधि, एक निदर्शन टीपरीक्षण विधि-, स्वतंत्र निदर्शन टी परीक्षण विधि, युग्मितनिदर्शन टी - परीक्षण विधि, एकलमार्गीय ANOVA विधि ।
सामान्य रेखीय प्रतिरूप (General Linear Model) सहसम्बंध)Correlate(	GLM सामान्य रेखीय प्रतिरूप एकल चर विधि)Univariate procedure (द्विचर सहसंबंध विधि)Bivariate correlations procedure(, आंशिक सहसम्बंध विधि-, समान अथवा असमान दूरियों की सांख्यिकीय मापन की गणनाएं ।
समाश्रयण)Regression(	रेखीय समाश्रयण विधि, वक्र मापन विधि ।
वर्गीकरण)Classify)	केमाध्य समूह विश्लेषण विधि-, सोपानिक समूह विश्लेषण विधि, विभेदी विश्लेषण विधि ।
आंकड़ा अपचयन)Data Reduction(	पक्ष विश्लेषण विधि ।
स्केल)Scale(	विश्वसनीयता विश्लेषण विधि, बहुविमीय स्केलिंग विधि ।
अप्राचल परीक्षण	काई) वर्ग-Chi-squareपरीक्षण विधि (, द्विपद परीक्षण विधि, रन परीक्षण विधि, एकल निदर्शन, कालमोरोव स्मिरनोव विधि, द्वि स्वतंत्र निदर्शन परीक्षण विधि, बहु स्वतंत्र निदर्शन विधि, द्वि सम्बंधित निदर्शन परीक्षण विधि, बहु सम्बंधित निदर्शन परीक्षण विधि ।
बहुप्रत्युत्तर-	बहु प्रत्युत्तर समुच्चय विधि परिभाषित करन, बहु

	प्रत्युत आवृत्ति विधि, बहु प्रत्युतार क्रासटेक विधि - ।

स्रोत : SPSS for window release 11.0 help.

एसपीएसएस को उपयोग करने के लिए आवश्यक बातें

1. एसपीएसएस को समझने एवं उस पर कार्य करने वाले शोधार्थी को सांख्यिकी की मूलभूत बातों का ज्ञान होना चाहिए ।
2. यह एक शक्तिशाली सॉफ्टवेयर पैकेज है जिसे उपयोग करने वाले विद्यार्थी को कम्प्यूटर का प्राथमिक ज्ञान होना आवश्यक है ।
3. इस पर शोधार्थी मूलभूत वर्णनात्मक, सांख्यिकी जैसे माध्य, मानक विचलन को प्राप्त कर सकता है ।
4. इसके पश्चात् शोधार्थी अपने आँकड़ों को विभिन्न तरह से रूपांतरित कर सकता है ।
5. यह एक उपयुक्ता मैत्रीपूर्ण सॉफ्टवेयर है, जिस पर शोधार्थी मैनू के द्वारा मार्गदर्शित होते हुए एवं मैनू के निर्देशों का अनुपालन करते हुए आगे के सांख्यिकीय विश्लेषण और परिणाम प्राप्त कर सकते हैं ।
6. इसमें शोधार्थी अपने आँकड़ों को विविध प्रकार की तालिकाओं के स्वरूप में प्राप्त करने के साथ-साथ उन्हें इच्छानुसार ग्राफिक स्वरूप में भी प्रदर्शित कर सकता है ।

13.4 सांख्यिकीय विश्लेषण के लिए अन्य सॉफ्टवेयर पैकेजेस् (Other Software Packages for Statistical analysis)

आज विविध विषय क्षेत्रों में विविध प्रकार के सांख्यिकीय डेटा को कम्प्यूटर की सहायता से न केवल विश्लेषित किया जा सकता है वरन् इन्हें इच्छित स्वरूप में प्रदर्शित भी किया जा सकता है । इन सब कार्यो को विभिन्न प्रकार के सॉफ्टवेयरों की सहायता से आसानी से किया जा सकता है । आज इन्टरनेट पर इस तरह के कुछ सॉफ्टवेयर निःशुल्क एवं सशुल्क उपलब्ध हैं । इसके साथ-साथ अनेकों संस्थाएं डेटा के सांख्यिकीय विश्लेषण का कार्य साफ्टवेयरों की मदद से करती हैं । विविध प्रकार के उपलब्ध सॉफ्टवेयरों का वर्णन इस प्रकार है

13.4.1 SAS System

http://www.sas.com/

एसएएस प्रणाली का विकास 1960 के दशक में नॉर्थ केरोलिना राज्य विश्वविद्यालय में हुआ । वास्तव में यह सॉफ्टवेयर व्यापार बुद्धिमता के क्षेत्र में नेतृत्व कर रहा है । आज इसकी 43000 ग्राहक साइटें हैं । यह सॉफ्टवेयर आपके डेटा को एक अनुमान परक अन्तर्दृष्टि में रूपांतरित कर देता है । यह पूर्ण डेटा प्रबंधन और विश्लेषण की एक प्रणाली के रूप में विकसित हो चुका है । यह सॉफ्टवेयर निम्नलिखित क्षेत्रों के उद्योगों में सफलता से कार्य कर रहा है :

1. बैंकिंग
2. संचार

3. शिक्षा
4. ऊर्जा
5. वित्तीय सेवाएं
6. सरकार
7. स्वास्थ्य बीमा
8. स्वास्थ्य देखभाल प्रदाता
9. बीमा क्षेत्र
10. उत्पादन
11. मीडिया
12. लघु एवं मध्यम व्यापार

इस एसएएस के उत्पाद और समाधान इस प्रकार हैं:

1. आधारित प्रबंधन
2. व्यापार बुद्धिमता
3. ग्राहक संबंध प्रबंधन
4. डेटा एकीकरण
5. वित्तीय बुद्धिमता
6. सूचना प्रौद्योगिकी प्रबंधन
7. निष्पादन प्रबंधन
8. जोखिम प्रबंधन आदि-आदि ।

एसएएस की वेबसाइट पर यह कहा गया है कि एसएएस क्रेडिट जोखिम प्रबंधन सॉफ्टवेयर में अग्रणी है । एसएएस ने गणितीय / सांख्यिकीय प्रविधियों, डेटाबेस प्रौद्योगिकियों और व्यापार अनुप्रयोग का वाणिज्यिक सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में अग्रणी रहने के लिए प्रभावी ढंग से एकीकरण किया है ।

13.4.2 MINITAB

http://www.minitab.com/

वस्तुतः मिनिटेब सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर डेटा को विश्लेषण करने का एक प्रभावी उपकरण है । आज इसका उपयोग गुणवत्ता सुधार एवं सांख्यिकीय शिक्षा के क्षेत्र में विश्व स्तर पर किया जा रहा है । मिनिटेब अपने उपयोक्ता मैत्रीपूर्ण पैकेज में सांख्यिकीय विधियों, ग्राफिक उपकरणों आदि विशेषताओं को सम्मिश्रित करता है । यह जटिल सांख्यिकीय विश्लेषणों को संपादित कर सकता है । आज पूरे विश्व में हजारों कम्पनियां हैं, जिनमें प्रमुख हैं - फोर्ड मोटर कम्पनी, जीई आदि । यह विश्वस्तरीय गुणवत्ता की प्राप्ति और डेटा द्वारा प्राप्त निर्णयों के लिए मिनिटेब का उपयोग कर रही हैं । आज मिनिटेब के 15 सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं ।

13.4.3 S-PLUS

http://www.insightful.com

एस-प्लस सॉफ्टवेयर का उपयोग विश्वव्यापी है । एस-प्लस सांख्यिकीय विश्लेषण भाषा एस पर आधारित है । कोई भी कम्पनी अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यो के सांख्यिकीय विश्लेषण के लिए इसका उपयोग करती है । एस-प्लस में 4200 से अधिक डेटा विश्लेषण गतिविधियां है, जो आधुनिक सांख्यिकीय विधियों को लागू करती हैं । एस-प्लस में उत्कृष्ट ग्राफिकल क्षमताएं हैं । एस-प्लस पर गतिविधियां बहुत तेजी से की जा सकती हैं । आज इसका एसप्लस-8 संस्करण उपलब्ध है । यह अन्योन्य ग्राफिक प्रणाली को प्रदान करती है । एस-प्लस पैकेज प्रणाली पूर्ण विश्लेषित पैकेज को अनुदेशों, व्याख्याओं आदि के साथ वितरित कर सकती है जिससे की प्राप्तकर्ता सही परिणामों को प्राप्त कर सके । इस प्रणाली में सूचना का आदान-प्रदान बिना किसी समय अन्तराल के किया जा सकता है ।

13.4.4 BMDP

http://www.statsol.ie/bmdp/bmdp.com

1960 के दशक में बीएमडीपी का विकास एक बायोमेडीकल विश्लेषण पैकेज के रूप में हुआ । आज भी यह बायोमेडीकल क्षेत्र में लोकप्रिय है । बीएमडीपी ने अपने आपको अन्य वर्तमान के लोकप्रिय सांख्यिकी उत्पादों, जिनमें सम्मिलित हैं - Meta Analysis, Starxact 5.0, SOLAS, Epuiv test, LogXact 5.0, Sigmaplot and SYSTAT के साथ सम्मिलित कर लिया है ।

अन्य सांख्यिकीय पैकेज इस प्रकार हैं:

OSIRLS

DATA-TEXT

TSAR

GLIM (Generalized Linear Interactive Modeling Package)

बोध प्रश्न-2

अपना उत्तर लिखने के लिये खाली स्थान का प्रयोग करें ।

1. रटेटिस्टिकल पैकेज फॉर सोशल सांइसेस को उपयोग करने के लिये किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है?

   ....

   ....

2. एम.एस. एक्सेल के लाभ बताइये ।

   ....

   ....

3. माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल की स्कीन के प्रमुख भाग बताइये ।

   ....

   ....

4. सांख्यिकी विश्लेषण के लिये अन्य सॉफ्टवेयर पैकेजेस् के नाम लिखिये ।

....

....

13.5 सारांश (Summary)

शोध में बड़ी मात्रा में आकड़े एकत्रित किए जाते हैं। आँकडों की इस विशाल एवं विविध मात्रा को व्यवस्थित एवं त्रुटिरहित प्रस्तुत करना शोधार्थी के लिए बडी समस्या रही है । सूचना प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग से इस समस्या का समाधान विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर पैकेजों के रूप में आया है । आज माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल का प्रयोग गणनाओं, ग्राफिकीय प्रस्तुतीकरण के लिए किया जा रहा है । शोधार्थी एक्सेल के अनुप्रयोग से विभिन्न सांख्यिकीय गणनाएं कर सकता है । इसके अलावा अन्य सॉफ्टवेयर पैकेजेस भी हैं, जैसे SPSS, MINITAB, S-PLUS, BMDP आदि । उपयोगकर्ता या शोधार्थी इनका प्रयोग शोध कार्य में आसानी से कर सकता है ।

13.6 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. सांख्यिकी से आप क्या समझते हैं ? सांख्यिकीय डेटा के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. विभिन्न सांख्यिकीय सॉफ्टवेयरों पैकेजेस का वर्णन कीजिए ।
3. माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल की प्रमुख विशेषताओं एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालिए ।
4. स्टैटिस्टिकल पैकेज फॉर सोशल साइंसेज (SPSS) क्या है ? इसके सांख्यिकीय विश्लेषण के कार्यो का विवरण दीजिए ।

13.7 प्रमुख शब्द (Key Words)

अनुपात डेटा (Ratio Data)	:	ये आंकड़े चर का परिमाण / मात्रात्मक के अर्थ में मात्रात्मक मापन है ।
अन्तराल डेटा (Internal Data)	:	अन्तराल आंकडे, आंकडों एवं समान मापन की विभिन्न श्रेणियों के मध्य अन्तर की श्रेणियां हैं । उदाहरण के लिए बच्चों के समूह का बौद्धिक स्तर का मापन कर सकते हैं ।
क्रमसूचक डेटा (Ordinal Data)	:	यह किए गए अवलोकनों के लिए नियत की गई संख्याओं के मध्य आपसी सम्बंध के क्रम को संकेत करता है ।
सांकेतिक डेटा (Nominal Data)	:	वैयक्तिक इकाईयों की पहचान के रूप में संख्याओं को निर्धारित करने के लिए सांकेतिक डेटा का उपयोग किया जाता है ।
सांख्यिकी (Statistics)	:	पद सांख्यिकी का उपयोग अंकीय तथ्यों अथवा डेटा के संग्रह के लिए उपयोग में लाया जाता है । इसके साथ-साथ इस शब्द का प्रयोग 'अंकीय डेटा के विश्लेषण के लिए प्रविधियों अथवा तकनीकों आदि के समूह' के लिए भी किया गया है ।

सांख्यिकीय पैकेज्स (Statistical Packages)	:	एक सांख्यिकीय पैकेज वस्तुतः एक सॉफ्टवेयर होता है । इस सॉफ्टवेयर की सहायता से कम्प्यूटर पर अंकीय सूचना का संग्रहण, व्यवस्थापन, विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण सरलता और परिशुद्धता के साथ किया जा सकता है ।

13.8 विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रंथसूची (References and Further Reading)

1. Shukla and Sahai, Business statistics : Theory and practice,Agra : Sahitya Bhawan Publications, 2007.
2. Kapur, J.N., and Saxena, H.C., Mathematical statistics, New Delhi : S.Chand and Company, 1984.
3. http://www.insightful.com/products/splus/
4. http://www.sqs.com
5. http://www.minitab.com
6. Einstein, Gil and Abernethy, Ken, Statistical package for the social science. http://cs.furman.edu/rushing/mellonj/spss1.htm.

ISBN-13/978-81-8496-054-9